

पालि साहित्य का इतिहास

हिन्दी-समिति-प्रथमाज्ञा—७६

पालि साहित्य का इतिहास

लेखक

स्वर्गीय महापण्डित राहुल सांस्कृत्यायन

•

हिन्दी समिति, सूचना विभाग
उत्तर प्रदेश सरकार

प्रथम संस्करण
१९९३

+

मूख्य
पांच रुपये

+

मुद्रक
बिद्यामन्दिर प्रेस (प्रा) लि
मानमन्दिर वाराणसी-१

प्रकाशकीय

महापण्डित (स्वर्गीय) श्री राहुभ सांझरयापन द्वारा प्रणीत इस ग्रन्थ में बौद्ध धर्म-सम्बन्धी किताबी ही महत्त्वपूर्ण श्रुतियों की चर्चा की गयी है और भगवान् बुद्ध के बचनों उपदेशों एवं उनके जीवन की कतिपय विचित्र घटनाओं का मनोरञ्जक ढंग से विवेचन किया गया है ।

राहुभ जी जिस तरह पाणि साहित्य और बौद्धधर्म के विद्वानों के सम्पर्क में आये इस पर उनकी पत्नी श्रीमती कमला सांझरयापन ने सख्त प्रकाश दाता है । बौद्ध धर्म के विषय अध्ययन की तीव्र इच्छा उनके मन में लहाऊ की यात्रा के बाद उत्पन्न हुई । इसके लिए उन्होंने न केवल भारत के ही बौद्ध तीर्थों का भ्रमण किया, बल्कि नपास तिब्बत आदि के भी विभिन्न स्थानों का परिभ्रमण किया । तिब्बत की यात्राओं में उन्हें प्रभूत साधुओं मिनी और किउन ही मुख्यतः संस्कृत ग्रन्थों के मूल तथा अनुवाद उपलब्ध हुए जा भारत में लुप्त हो चुके थे । उन्होंने अनेकों ऐंभ भाषि भाषाओं में प्रकाशित पुस्तकें तथा वर्तमा के पुठों को भी श्रान दाता और पत्राचार भें-नमायम भादि के सहारे भी अपन बौद्ध धर्म-सम्बन्धी गाननश्रान की अनिबुद्धि की । इस विषय पर उनके द्वारा लिखित दर्बनीं ग्रन्थ इस बात के प्रमाण है । प्रस्तुत रचना भी उनके इमी तंभीर अध्ययन का परिणाम है । इनमें बुद्ध भगवान् के बचन उनसे पूछ गय अनद्वानद प्रस्नों के उत्तर और यात्राओं के बर्णन ऐसे ढंग से दिये गय हैं, जिनसे मनोरंजन भी होता है और साथ ही ऐसे उपदेश भी मिलत

(४)

है, जिससे जीवन को कल्याणकारी दिशा में मोड़ सकने में असीम सहायता मिलती है ।

धीमठा में लिखी जाग के कारण इसमें कुछ बुटियाँ रह गयी थी जिन्हें दूर करने में काशीस्थ संसृष्ट विरचविद्यालय के प्राध्यापक श्री सरनी नाटयन विद्यारी ने अत्यधिक परिश्रम किया है । इसके प्रोफ-संघोषन में भी उन्होंने हमारी सहायता की है, जिसके लिए हम हृदय से उनके अनु गृहीत हैं ।

ठाकुरप्रसाद सिंह
सचिव हिन्दी समिति

बौद्ध-साहित्य को राष्ट्रम जी की देन

इस ग्रन्थ के प्रारम्भ में ही लिखा गया है कि आज से सौ वर्ष पहले पाणि नाम की कोई भाषा नहीं थी। तबियों से बटगाव और हिमाचल के कुछ इलाकों के लोगों के पिता बौद्ध धर्म और पाणि भाषा का नाम भी भारत भूम बँटा था। बारहवीं सताब्दी में बयरेव ने दण्डवतार में बुद्ध को एक अवतार बना दिया था। बुद्ध का नाम परवर्ती काम में कमी-कमी मुनाई पड़ जाने पर भी पाणि भाषा का नाम छात्र ही मुनने में लाया था। बटगाव के बौद्ध अपने धार्मिक ग्रन्थ मूल भाषा पाणि में पढ़ते थे किन्तु और कहीं इनके अस्तित्व का पता न चलता था।

सन् १८८० ई० के बाद बम्बईकरण सेन कबीतकर सेन सिरीय बसु बोप ने बंगला में बुद्ध की जीवनी, उन पर कविताएँ और नाटक लिखे। इसके कुछ बाद ही बौद्ध धर्म के पुनरुत्थान और बौद्ध तीर्थों के उद्धार के बोधसे से जनवार्तिक धर्मपाठ कसकते में यह कर अपना काम करने लगे। भारत की राजधानी में बुद्ध बौद्ध धर्म पाणि भाषा और साहित्य का नाम अब कुछ अधिक मुनने में जाने लगा। विनायक से मैक्स मूलर ने (Sacred Books of the East) में पाणि के किछे ही ग्रन्थों के संस्कृत अनुवाद प्रकाशित कएने। लंका के सिक्खियन रीज डेविस बम्बई ने पाणि टक्क सौतायटी स्थापित कर मूस विपिटक और पछका संस्कृत अनुवाद छापना शुरू किया। ब्रिटेनियेक और उनके शिष्य विनायक ने कस में बौद्ध साहित्य का काम प्रारम्भ किया था। १८८० ई० के बाद ही कस की उत्कालीन राजधानी सेन्ट पीटर्सबुर्ग में 'ब्रिटेनियेक बुद्धिवा' प्रकाशना में संस्कृत सिक्खी भादि के बौद्ध ग्रन्थ उनके अनुवाद बोधवन्धिकी विमर्ष सेवी पौनीद्वारा कनीकत राध भादि के सम्पादन

में निष्पत्तने लगे । प्रायः बेलबियम जर्मनी भी इस विद्या में काम करने लगे ।

इसी समय बटगाँव-निवासी और शान्तिनिक प्रवासी छात्रचक्र दाह 'बुद्धिस्ट टेनस्ट सोसाइटी' स्थापित करके संस्कृत तिब्बती और अंग्रेजी में बौद्ध साहित्य का सम्पादन और अनुबाह प्रकाशित करने लगे । दाह में दो-दो बार तिब्बत की यात्रा की थी वह तिब्बती के बहुत बड़े विद्वान् थे ।

फरीदपुर (पूर्वी बंगाल) निवासी महामहोपाध्याय सतीशचन्द्र विद्यानूषन संस्कृत तिब्बती और पालि के महान् विद्वान् हो गये हैं । कमरुता संस्कृत कालेज के प्रिंसिपल रहते समय उन्होंने बड़े परिश्रम से पालि पढ़ी और कमरुता विश्वविद्यालय से इस विषय में एम० ए० करना चाहा । उन दिनों विश्वविद्यालय किये ही विषयों में एम० ए० की परीक्षा तो होता था लेकिन उनके पढ़ाने की व्यवस्था नहीं थी । पालि का प्रस्ताव बनाने और परीक्षा बनाने के लिए विश्वविद्यालय की ओर से रीज ब्रिडिस लाइव को लिखा गया । उन्होंने लिखा कि वही कमरुते में यह काम बड़ी आसानी से विद्यानूषन महाशय से करवाया जा सकता है । बाद में उन्हें लिखा गया कि परीक्षार्थी स्वयं से ही है तो वे प्रस्ताव बनाने और परीक्षा बनाने के लिए सहर्ष तैयार हो लगे । जाब उस कर भारत में पालि के प्रथम एम० ए० यही विद्यानूषन कमरुता विश्वविद्यालय में पालि के प्रथम अध्यापक भी रहे । उनके बाद घर आधुनिक मुसलमानों के प्रयत्न से विद्यानूषन की अपहर्ष बर्मान्द कौसम्बी अध्यापक नियुक्त हुए । न जाने कितनी घटाबिद्या के बाद पालि तो अपन देश में फिर बढ़ बनाने का मौका मिला । इसके बाद तो कमरुता विश्वविद्यालय के अन्तर्गत किये ही स्कूलों और कालेजों में पालि पढ़ाने की व्यवस्था हुई ।

इस छात्रावली के पहले दशमवी से ही हिन्दी में बुद्ध की एकाव रचनाओं के अनुबाह और जीवनीया तथा बन्धुपद का अनुबाह एवं यदा-कदा पत्रिकाओं में लघु लेख देखने में आने लगे ।

अर्ध मुसाफिर विद्यालय (आगरा) से निकलने के बाद राहुल जी और १९१७ में मिस्त्री तैयार करने के प्रयास में बनने के पहले अपने जीवन के भूलभूलैया नाम अध्याय में लोगों से मिस्त्र-भ्रमण और व्याख्यान देने पहुँचे । बौद्ध मिश्रुओं को धर्म प्रचार को सफल के बारे में वे बहुत बार व्याख्यान द्वाारा बुक थे । नामन्दा-जैसे धर्मप्रचारक पैदा करने का कन्ड चाहिए, इस विचार का संकल्प बड़ी मजबूती के साथ उनके हृदय में जन्म हुआ था । इसलिए बौद्ध मिश्रु से मिलने और बिहार देखने के लिए जा पहुँचे । बड़ा स्वामी बोधानन्द से ईद्वार बन आदि के असावा बौद्ध साहित्य लिपिक के बारे में भी बातचीत हुई । उन्होंने बौद्ध साहित्य पर अपना ये खरी पुस्तकें और वंगीय बौद्धों की साहित्य पत्रिका "अप्यग्मोति" का पता दिया । पाणि लिपिक के पत्र के बारे में अन्तर्गत धर्मपास से सिला पढ़ी करने को कहा । इन संक्षिप्त साक्षात्कार के बारे में राहुल जी न सिखा है कि "उन वक्त यह पता नहीं लपटा था कि मेरे जीवन के विकास में इस साक्षात्कार द्वारा प्राप्त बातें ज्ञान पाठें बना करनेवाली हैं। (मेरी जीवन यात्रा भाग १ पृष्ठ २७६, इलाहाबाद १९६६ ई०) ।

आग मिश्रण पर धर्मपास न बर्मी सिहसी स्वामी अन्तरा में छप लिपिक-ग्रंथों के प्राप्तिस्थान के फने दिये तो राहुल जी न सिहस और बर्मी लिपि में छरे कुछ पाणि-ग्रंथ मंगा भी लिये । महाबोधि सोसाइटी (कलकत्ता) से जालन्धरीयचन्द्र विद्याभूषण का बंगाली अनुबाध सहित मागरी अन्तरा में छपा "कल्याण व्याकरण" भी मंगायी जिससे सिहसी बर्मी और स्वामी लिपियाँ सीखना आसान हो गया । वे मिस्त्रो-तैयारी करने के लिए महेगपुरा में रहे रहे थे । बड़ा पढानेवाला कोई नहीं था कुर्वत के समय वे स्वयं कुछ पत्रों को पढ़ते ।

१९१९ ई० के मार्च मास का दिनों को पंजाब में बिना वे चित्रकूट की छाया में बूमने रहे (१९२०) । इसी समय उन पर घुमकड़ी का मूल खबार हुआ तो बौद्ध लोगों को देखने निकल पड़े । सारजाय होने हुए कुशीनपर

देखा और वहाँ से मुम्बई-कपिलवस्तु की ओर चल पड़े। दिल्ली-कोट में एक महत् ने इन्हें भोटियों के मुक्त में जाने का रास्ता बताया और चाबीस पचास भोटिया क्षत्र भी लिया दिये। वहाँ से सहेट-महेट (मावस्ती) जाकर बैठन देखा। इन स्थानों के महत् का उनका ऐतिहासिक ज्ञान जमी बुझा था। फा-रियाज इलिग और जून-बाग की चित्तों पढ़कर वे निकले थे। जाय नामन्दा-राजमिर और बौधण्या को देखा। चीनी यात्रियों की पुस्तकों ने तीर्थदिग का मजा बढ़ा दिया था। इस वक्त की अपनी धार्मिक अवस्था के बारे में लिखा है—“बुद्ध के प्रति मरी नित्य वपान्म्य से भी बढ़कर थी—ही उस वक्त मैं यह समझने की गमती कर रहा था कि बुद्ध बवान्म्य की ही भाँति वैदिक धर्मप्रचारक ईश्वरविस्थाधी ऋषि थे। (मेरी जीवन-यात्रा भाग १ पृष्ठ ३३१)।

इसके बाद १९२१ ई० में सरम् की बाढ़ से पीड़ित लोगों की धरत में सेवा और सन्धाग्रह की तैयारी करते रहे। धर के त्रिवा कांग्रेस के मंत्री और प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी के सन्स्य थे। गया कांग्रेस के पहले प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी के बौधण्या बीड़ों को सँपने के बारे में प्रस्ताव पास करते वक्त उन्होंने कुछ बीड़ मिश्रुओं को बुलाया था। यहीं धनपारिक धर्मपाल मिश्रु धीनिवास मिश्रु धर्मपाल और फिर्तने ही धर्मों मिश्रुओं से उनका परिचय हुआ। गया कांग्रेस (१९२२ ई०) में इस विषय में प्रस्ताव पास करने में वे सफल नहीं हुए।

इसके बाद वे बड़ महीन के लिए नेपाल पहुँचे। दिव्यराज्य में बीड़ पण्डित रत्नबहादुर ने उन्हें बीड़ साहित्य के कुछ ग्रंथ दिखाये और कुछ बातें बतायीं। वह दिव्यत में भी रहे चुके से और दिव्यती क्यूर के कुछ ग्रंथों को सूची भी बनायी थी। इन सब की देखकर राहुत जी प्रमा-वित हुए। रत्नबहादुर उन्हें दिव्यत मजना चाहेते थे किन्तु उनको काम के लिए धरत लौटना था इसलिए मामला धामे न बढ़ सका। सवा दो घण्ट की मजा काटकर १९२३ में जेत से निकलने पर राहुत जी ने देखा

कि राजनीति में विचिन्तना आ गयी है। छपरज जिस का दौरा कर उन्होंने फिर जोश भरने की कोशिश की। वोधगया बौद्धों को दिसाने के बारे में श्री राजनप्रसाद के सभापतित्व में एक कमेटी बनायी गयी थी। सदस्य की हिसियत से राहुल जी इस का काम करते रहे। इसी बीच कांग्रेस का कानपुर अधिवेशन आ गया और अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के सदस्य की हिसियत से उसमें शामिल हुए। यहाँ से ब काश्मीर होते महात्मा की सैर भी कर आये। सीटकर मॅबर के नाते कौंसिल और जिला बोर्ड के चुनावों में जोर-शोर से काम किया और १९२७ में कांग्रेस के गौहाटी अधिवेशन में शामिल हुए। आगे उन्होंने देखा कि कांग्रेस के सामने कोई नया कार्यक्रम नहीं है। उबर बौद्ध धर्म के विधाय अध्ययन की इच्छा जो महात्मा यात्रा में जग उठी थी जोर मार रही थी। सारल प में मिश्र श्रीनिवास ने उनके विचारों का समर्थन किया। संघ का विचारसंकार विहार एक संस्कृत-अध्यापक की खोज में था। वहाँ के सुमीतों को बताव हुए मिश्र श्रीनिवास न उन्हें लंका जाने की सलाह दी।

मई १९२७ ई० से उन्नीस महीने विचारसंकार परिषद में रहकर वे १८-२० विद्यापियों और कुछ अध्यापकों को संस्कृत काव्य व्याकरण और व्याय पढ़ाते और धर्मानन्द महास्वविर से स्वयं पाणि बौद्ध साहित्य और दूसरे विषयों का पंजीर अध्ययन करते रहे। इसके साथ ही बौद्ध धर्म की ओर उनका आकर्षण बढ़ता गया। लंका में एक महीने के बाद ही उन्होंने 'मुत्तपिटक' के पंथों को शुरू किया। संस्कृत के अत्यन्त समिकट होन से पाणि उनके लिए आसान थी। भारत में रहते हुए इस भाषा का जितना जन्मास किया था वह भी इस समय बड़ काम में आ रहा था। पढ़ने के लिए वे अपनी पुस्तकों का इस्तेमाल करते और मौगोसिक ऐतिहासिक बातों पर निदान करके पीछे उन्हें नोटबुक में उतारते जाते। मायक महास्वविर, आचार्य प्रजासाह, आचार्य देवानन्द आचार्य प्रजासौर से रोज डेढ़-डेढ़ दो-दो पंटे समय सेने पर भी उनकी वृत्ति न होती थी।

पालि त्रिपिटक में बुद्धकालीन भारत के समाज राजनीति भूमीत का काफी मंगना है। हमसे भी विद्यार्थी की भूख खोर तेज हुई। 'पालि टेक्स्ट सोसाइटी' (जर्मन) के त्रिपिटक के संस्करणों की बिभ्रतापूर्व भूमिकाओं ने ज्ञाप में ही ज्ञान का काम किया। उन्होंने 'पालि टेक्स्ट सोसाइटी' के जर्मन के पुराने जर्नों को भी पढ़ ज्ञान। इसके बाद एशियाटिक सोसाइटी (कनकता) जवन एशियाटिक सोसाइटी ब्रिटेन सीलोन बम्बई के पुराने जर्नों का पाठ्यक किया। बाहरी सिपि है हजारीबाग जस में परिचय हुआ था। यहाँ 'एपीग्राफिका इंडिका' को सारी जिस्से देख जालीं। छ-मास महीने बीतते-बीतते भारतीय संस्कृति की पबेपचारों के बारे में उनका ज्ञान गूढ और परिमाण इतना ही गया वा कि जब मार्गवुर्म (जर्मनी) के प्रौढगर एबास्ठ ओटो बिज्जार्नकार बिहार में जाय तो जमसे बातचीत करके उन्हें हीरामी हुई कि राहुल जी किसी बिस्वबिद्यालय के कमी विद्यार्थी नहीं रहे। बस्तुत इसने पीछ केवल चार महीनों को पढ़ाई ही मही पहन बम्बईस्थित कम से पढ़ा डिग्री ज्ञान भी था। हाँ यह बात लक्ष्य की कि ममी तरह के ज्ञान ने मस्तिष्क और स्मृति के मन्दर उबल-मुबल मचा करके उनमें एक बौद्धानिक बुद्धिकोण पैदा कर दिया था।

बाईं हजार साल पहल के समाज म बुद्ध के मुक्तिपूर्व मरण और ज्यने बाल बाध्यों का राहुल जी लगभगता के साथ आस्वाद सेन जय। त्रिपिटक में जाय मौजिज और जमलकार अपनी असमकता के सिप उनकी पूजा नहीं बल्कि मनोरंजन करते थ। बिवास का प्रभाव हर चीज पर पड़ता है तो बुद्ध-बचन इसके परे कैसे ही चकते हैं। रात में छिपे मंगारा या पत्थरों से इनके एग की तरह बोध-बीध में जाले बुद्ध के जयकारिक बाक्य उनके मन को बसतु अपनी ओर लीज मठ। जब उन्होंने वैशुपुत्रिय कालामों का बिपे बुद्ध का उपदेश—'मठ तुम अनुभव (धुत) से मठ परंपरा से मत्र 'एमा ही है' से मत्र त्रिपिटक-सप्रधान (अपने माय्य सासन की अनकृतता) से मत्र तर्क के कारण से मत्र जय (न्याय)—हेतु से मठ बकता के याद्वार

के विचार से मत अपने विर विचारित मत के अनुकूल होने से मत बकता के भव्य रूप होने से मत यमम हमार गुरु (बड़ा) है से विश्वास करो। जब, कामाओं तुम अपने ही जानो—यह धर्म अकृशम है यह धर्म सदीप है, यह धर्म विज्ञ-निर्विद है यह जेन प्रहण करण पर अहित (पुत्र) के लिए होता है तब कामाओं तुम(उसे) छोड़ देना— पढ़ा तो हटात् उनके दिस न कहा—यह है एव आदमी जिसका सत्य पर अटम विश्वास है, जो मनुष्य की स्वतंत्र बुद्धि की महत्ता को समझता है। आये जब 'मज्झिम निकाय' में पढ़ा—'बेड़ को माँठि मने तुम्हें धर्म का उपदेश दिया है वह पार उतरने के लिए है सिर पर बोये-डोये फिरने के लिए नहीं— तो उन्होंने समझा कि जिस चीज को इतने दिनों से ढूँढ़ रहे थे वह मिस मयी।

पढ़ाई के लिए पाणि की जो पुस्तकें वहाँ थीं उन्हें तो पढ़ना ही था इसके अतिरिक्त ब तीर-बामीस रूप की पुस्तकें प्रतिमास भारत या यूरोप से भेगाया करते। तिब्बत जाने का विचार भी उनके मन में प्रबल होन सया। अन्य कामों के साथ-साथ पुस्तकें की सहायता से वे खुद तिब्बती पढ़न सये। अपनी जगह काम करने के लिए उन्होंने एक आदमी भी ठीक कर दिया। तिब्बत के लिए भारत रहना होने के पहले ३ सितम्बर, १९२० ई० को विद्यालंकार विद्यालय ने उन्हें 'त्रिपिटकाचार्य' की उपाधि प्रदान की।

इतिहास पश्चिम मध्य और उत्तर भारत के अधिकांश बौद्ध तीर्थों की यात्रा कर राष्ट्रम भी बिना पासपोर्ट के नेपाल के रास्ते अगस्त १९२९ ई० में स्हामा पहुँच। वहाँ उन्होंने संस्कृत व्याकरणों और दूसरे ग्रंथों को तिब्बती अनुवाद के माब मिलाकर पढ़ना शुरू किया। आग स्हामा का केन्द्र बनाकर उन्होंने तिब्बत के कितने ही पुरान मठां की यात्रा करके पुस्तकें धिन्नपट जमा किये। कंबूर और तंबूर* भी सरीव लिया। छापी

* कंबूर और तंबूर दो सौ से अरु विंशतिकाय प्रयत्नग्रह हैं। प्रथम में बुद्धचरन और दूसरे में अन्य ग्रंथों के तिब्बती अनुवाद संगृहीत हैं।

बीचें पटना के लिए रवाना कर २० जून १९३० को सभा वर्ष तिम्बत प्रवास के बाद सँका पहुँचे । २२ जून को श्री बर्मिन्गहम महास्पाविर क उपाध्यायत्व में उनकी प्रबन्धा हुई । सँका में वे पहले रामोवार स्वामी क नाम से परिचित थे । वहाँ से जबसे समय उन्होंने मोक्ष का नाम बाड़ कर जपम को रामोवार सांस्कृत्यायन बना लिया था । प्रयत्नित होने पर उनका नाम 'राहुल सांस्कृत्यायन' हुआ ।

सँका में रहते ही उन्होंने ७ अक्टूबर से १४ दिसम्बर १९३० के बीच 'बुद्धचर्या' लिख डाली । इसमें बुद्ध की जीवनी और उपदेश दोनों ही सन्निविष्ट हैं । सँका में रहते ही बड़ महीने समाकर बसुबन्धु प्रणीत 'अभिषर्मा कौश' का अपनी 'नामविद्या टीका' के साथ सम्पादन किया । सभाध्य अभिषर्माकौश के ज्ञान-भाग कृत श्रीनी अनुवाद को अपने छठीसी अनुवाद और टीका के साथ बेसमियम के प्रोफेसर सुई से ला बेली पुर्मे ने पाँच खण्डों में वेरिष्ठ से प्रकाशित कराया था (१९२३-२६) । इसकी पावटिष्णवियों में उन्होंने संस्कृत पौषियों में से पाँच सी से ऊपर कारिकाएँ संस्कृत में भी थीं । अभिषर्मा के अपने संस्करण में 'राहुल जी को पुर्मे के संस्करण में विशेष सहायता मिली । इसीलिए "प्रमथ्य श्रीन-श्रीभूपामयं शीरमहाबर्णवम् । मनोभूठ कोशरत्नं तस्मै योपूषिणर्षये ॥" इस स्तोत्र क साथ समर्पित किया । नवम्बर, १९३१ तक ये दोनों पुस्तकें यथाक्रम से बाबू विबप्रसाद गुप्त और काशी विद्यापीठ द्वारा प्रकाशित कर बी गयीं ।

यूरोप से लौट कर राहुल जी १९३३ में दूसरी बार सहाय गये । वही सेह में ४ जुलाई से १६ दिसम्बर के बीच जर्मनी 'मज्जिमनिपाय' का अनुवाद किया और 'तिग्गय में बीठ बर्म 'नामक अपनी पुस्तक के अतिरिक्त 'तिग्गयी प्राइमर' तिग्गयी पत्रावसियाँ और 'तिग्गयी व्याकरण' लिखा ।

१९३४ में दूसरी बार तिम्बत जान के पहले सँका में रहते ज्ञान भाग द्वारा अनूदित बसुबन्धु के 'विद्यपिमात्रतासिद्धि' के श्रीनी अनुवाद के प्रतिपादक श्रीनी भिक्षु ब्राह्ममोस की सहायता से एकत्रित किये गे । इसी

आप संस्कृत में रचया कर बिहार-उड़ीसा रिसर्च सोसाइटी' के जर्नल में प्रकाशित करवाया (१९३४) ।

'तिब्बत में बौद्ध-धर्म' लिखते समय जब राहुल जी ने मोटिया ग्रंथ के पत्र उभटे, तो उन्हें विश्वास हो गया कि भारत से यहीं कई हजार तास पोषियों में से वहाँ कुछ जरूर होनी चाहिए । तिब्बत की दूसरी यात्रा में ल्हासा में बैठ कर उन्होंने 'विनयपिटक' का अनुवाद भी समाप्त किया । इस बार रेडिड, छाकपा आदि प्राचीन मठों की यात्रा में 'बाह्याय भविष्यकालसूत्र' मुमापित रत्नकोष, श्यामबिन्दुपञ्चिका टीका हेतु बिन्दु-अनुटीका प्रातिमोक्षसूत्र मध्यान्तविमर्ग भाष्य, आतिशालंकार (अष्टाष्ट) आदि भारत से लुप्त ग्रंथ मिले । उन्होंने इनकी प्रतिनिधियाँ अथवा फोटो कापियाँ तैयार कर लीं । पहली बार तिब्बत से लौट कर उन्होंने धर्मकोश के प्रमाणवातिक या तिब्बती से संस्कृत भाषान्तर करना शुरू किया था । तिब्बत की दूसरी यात्रा से नेपाल के रास्ते सीटलें समय राजगुरु पण्डित हेमराज के यहाँ मूस की फोटो कापी ही मिल गयी जिसमें सिर्फ दस पस नहीं थे ।

भारत लौट कर उन्होंने 'बाह्याय' छपवाया । १९३५ में जापान चीन कोरिया की यात्रा पर सोवियत रुब की पहली झांकी लते ईरान के रास्ते भारत लौट १९३६ में राहुल जी तीसरी बार तिब्बत पहुँचे । ल्हासा में 'आतिशालंकार प्रमाणवातिक भाष्य' पूरा मिला । साथ ही बर्चगोमिहृत सञ्ज्ञि टीका भी अथवा प्रमाणवातिक की टीका और भाष्य असंग की महत्त्वपूर्ण पुस्तक 'आपाधारभूमि' भी मिली । प्रमाणवातिक क तीन परिच्छेदा पर प्रनाकरगुप्त की टीका भी मिली । सप्त विहार में प्रमाणवातिक पर मनादपनञ्ची हृत सुन्दर बृत्ति मिली । उन्होंने सबकी नकल उतार ली ।

धर्मकोश के हेतुबिन्दु का तिब्बती से अनुवाद और अर्थ (वर्णन-करदण) की टीका के सहारे इसे उन्होंने बाद में संस्कृत में किया अर्थ की टीका और 'श्यामबिन्दुपञ्चिका' (भर्मात्तरहृत) पर बुबेंर मिश्र की टीकाएँ उन्हें १९३६ में 'कोर' मठ में मिली ।

धर्मश्रीति की 'संभव-मपीक्षा' को भी उन्होंने संस्कृत में ठीकार कर दिया है। जब धर्मश्रीति के न्याय के साथ ग्रंथों में 'धर्मशास्त्र-सिद्धि' और और 'प्रमाण-निर्णय' से ही एखे हैं जो सिर्फ तिब्बती में ही मिलते हैं। इनका मूल हुइकन या तिब्बती से संस्कृत में माने का उनका संक्षेप अपनी बीबी और अन्तिम तिब्बत भाषा में पूरा नहीं हुआ।

सन् १९३८ में राहुल जी बीबी और अन्तिम बार तिब्बत गये। सन् ३८ में तैपायिक ज्ञानभो के १२ ग्रंथ मिले तथा योगाचारमूमि के अखिरत अम्माय भी मिले। नरयण ने उन्होंने कई बड़े-बड़े मास्तीय विषयों और छठटी पत्थरों पर बन बीरासी सिद्धों की मूर्तियों के फोटो मिले। साक्षा के सिद्ध से मिलते से भारत लौट आये।

यहाँ एक बात लिख देना जरूरी है। तिब्बत की चारों यात्राओं से राहुल जी ३९३ पोपियों की प्रतिक्रिया या फोटो ले आये। इन्में से केवल एक प्रमाण-वार्तिक का ही सम्बन्ध उनकी अक्षय कीर्ति होता। उनकी सभी इन पोपियों की संख्या के बारे में बहुत बड़ा भ्रम पैदा बिल्लाई देता है। उनकी संख्या कई हजार से लेकर ९ हजार तक विमानी जा रही है। एक विद्वान् न मिल दिया कि सारी पोपियां स्यासा के बुजानवार के यहां मिल गयीं जो उन्हें फाइकर मजाले की पुढ़िया बांध रहा था। जिन्हें इन पोपियों का म्योय जानना हो, वे बिहार-उड़ीसा रिचर्स सोसाइटी के के वर्कस (खण्ड २१ २३ और २४) में प्रकाशित इनका विवरण देखने का फट कर तथा उनकी जीवन गाथा पढ़कर सही बातें मालूम करें। मगधकरत बाँते लिखने से कोई फायदा नहीं।

इसी तरह राहुल जी की लिखी सम्पादित और अनुरित पुस्तकों की संख्या के बारे में भी सौय भ्रम पैदा रहे हैं। उनकी संख्या भी बड़े ही से बार-बार: सी तक मिली जा रही है। मैंने उनके सारे साहित्य को देखा है। उनकी सभी प्रकाश की १३८ पुस्तकें छप चुकी हैं। 'पालि साहित्य का इतिहास' बापके हाथों में है। 'तिब्बती-हिन्दी कोश' साहित्य अकादमी (दिल्ली) छाप रही है। वहाँ से 'पालि काव्य-भारत' के भी निरन्तर की आसा है। १९३६

(२)

तृतीय खण्ड

(अध्याय पालि)

पहला अध्याय - बर्मा में पालि	२७३
दूसरा अध्याय - चाई देश में बेरबाद तथा पालि	२९५
तीसरा अध्याय - कम्बोज और लाव में बेरबाद तथा पालि	३०३
चौथा अध्याय - आधुनिक मायल में पालि	३०८



स्वर्गीय महापण्डित राहुल सांकृत्यायन

विषय प्रवेश

पाणिपिटक

त्रिपिटक का संग्रह तथा बुद्धवचन की भाषा

बोधि की प्राप्ति से मकर महापरिनिर्वाण-पर्यन्त कदगा क अन्त
सागर भगवान् बुद्ध संसार के प्राणियों के कल्याण क लिए अपने मार्ग का
उपदेश करते रहे । बोधि की प्राप्ति के पश्चात् प्रारम्भ में ही उन्हें इस प्रकार
की चारणा उत्पन्न हुई कि अपने द्वारा जोड़े गये मास को विद्वत् का बतलाना
है, और इसको ठीक से उन्होंने कार्यरूप में परिष्कृत करना प्रारम्भ कर दिया
तथा इसका निर्वाह जीवन-पर्यन्त किया । इसके लिए सर्वप्रथम मुख्यवस्थित
नियमों की नींव पर उन्होंने एक सुदृढ़ त्रिसु-संघ की स्थापना की और यह
नर्भवा ही बौद्ध-धर्म का मार्ग विधायक रहा है । भगवान् बुद्ध के ये उपदेश
मौखिक ही होते थे । उपदेश क समय उपस्थित स्मृतिमान् तथा बहुभुत
मित्र इन्हें याद कर सकते थे । बुद्ध क परिनिर्वाण क पश्चात् इनके संग्रह की
आवश्यकता हुई तो त्रिपिटक रूप में ये संगृहीत हुए । त्रिपिटक का अर्थ होता है
तीन पिटाखियाँ । पहले इन संग्रहों को पिटाखियों में रखा जाता हागा और
तीनों पिटाखों के लिए असम-असम तीन पिटाखियाँ प्रयाग में छापी जाती
होंगी अतः कालान्तर में यह संग्रह ही त्रिपिटक की संज्ञा से विमुपित किया
गया । ये तीनों पिटाक हैं—(१) सुत्तपिटक (सूत्रपिटक) (२) विनयपिटक
(३) धम्मिषम्मपिटक (धर्मिषमपिटक) ।

इनके संग्रह के लिए बुद्ध क निर्वाण से मकर लगभग सुम तक समय
काल पर संघीणियों का आयाजन हागा रहा । पहली संगीति ता बुद्ध-परि
निर्वाण के तीन मास पदवान् हुई और इनमें धम्म तथा विनय का संगायन
हुआ । इसमें १०० अर्हत् सम्मिलित हुए । राजगृह क कभार पक्ष पर
स्थित नाण्डपथी मुहा की ही स्थापन-संरक्षण हुआ गया और इसके धम्मय्य वे

महास्वविर महाकाश्यप । इन्होंने स्वविर उपासि से बिनय-सम्बन्धी बातें पूछीं । उन्होंने जो कुछ भयकाय् से मुखा वा उखे प्रस्तुत कर दिया । इसी प्रकार आनुष्मान् आनन्द से धर्म पूछा गया । इन दोनों—बिनय तथा धर्म का सही उपस्थित मिश्रणों ने संघायन किया ।

इस संघीति के १०० वर्ष बाद मिश्रणों को बिनय-विद्वद् आचरण से विमुक्त करने के लिए बीषाणी में द्वितीय संघीति का आयोजन हुआ । इसमें ७०० बौद्ध भिक्षु सम्मिलित हुए वे धीरे-धीरे इसके सम्बन्ध में महास्वविर 'रिषत' । इसमें बिनय के नियमों पर निर्णयारि हुए ।

बीषाणी की संघीति के पश्चात् तृतीय संघीति सम्राट् अशोक के राज्य काल में हुई । इसका आयोजन पाटलिपुत्र में हुआ था । इस युग में बौद्ध-धर्म की उन्माधय प्राप्त होने के कारण दूसरे मत के लोग भी अपने को बौद्ध-मतावलम्बी बतलाकर राज्य से प्राप्त सुविधाओं से लाभ उठाने लगे तथा बौद्ध-धर्म के नीतर आकर वे अपने मत-मतान्तरों को भी बौद्ध-सम्मत बतलाने लगे । मत बद्ध के वास्तविक मन्तव्य को जानने में कठिनाई होने लगी । बौद्ध-मत धर्मक सम्प्रदायों में बिनयत हो गया था । मत 'बेरवाह' या 'बिनयवाह' को बद्ध का वास्तविक मन्तव्य निर्दिष्ट करने के लिए ही यह संघीति हुई । इसके सम्बन्ध 'मोघ्यतिपुत्त तिम्म' हुए । इन्होंने धर्म बातों की तुलना में 'बेरवाह' को स्थापित किया धीरे-धीरे इसके लिए कपावर्ध नामक धर्म की रचना की जिसे अग्निबन्धुपिटक में स्थान मिला । इसी संघीति के बाद बौद्ध-धर्म के ध्यान प्रचार के लिए अनेक भिक्षु भिक्ष-मिष देसी में भेजे गये । सम्राट् की पुत्री सन्निधा तथा पुत्र महेंद्र सिंहल द्वीप गये धीरे-धीरे पर बौद्ध-आसन को सुदृढ़ करने में 'देवानामिय तिस्र' राजा के अत्यन्त सहायक हुए । वे अपने साथ निपिटक के रूप में बद्धवचन की परम्परा लें गये वे धीरे-धीरे सिंहल में इसकी नींव पड़ी ।

पर धीरे-धीरे सम्पूर्ण बद्धवचन की मूर्ति पर परम्परा ही बतती रही । समयानुसार यह आवश्यकता समझी गयी कि स्वयं-सक्ति के ह्रास होने पर कही लोप बद्धवचन को भूल न जायें । मत इसे निर्दिष्ट किया गया । उन समय सिंहल के धामक सम्राट् 'वन्नामधि' थे । इसके साथ ही इन

पर उचित घट्टकपाएँ भी लिपिबद्ध की गयीं। यही चतुर्थ संगीति के नाम से विख्यात है। 'बट्टनामधि' का समय ई० पू० २९ माना गया है।

पञ्चम संगीति बेरबाद की परम्परा के अनुसार बर्मा के सम्राट् 'मिडोन मिन' (१८७१) के समय में हुई, जिसमें संगमरमर की पट्टिकाओं पर सम्पूर्ण बुद्धबचन को उत्कीर्ण कराकर उन्हें एक स्थान पर गड़बा दिया गया, जिससे वह चिरस्थायी हो सके। छठी संगीति १९५४ से लेकर १९२६ तक २२०० बी बुद्ध जयन्ती के अवसर पर बर्मा में ही सम्पन्न हुई।

इस प्रकार हम देखते हैं कि परम्परा से बुद्धबचनों का संग्रह उपर्युक्त विधि से समय-समय पर हुआ।

बुद्धबचन की भाषा—तृतीय संगीति के वर्णन में ऊपर यह कहा जा चुका है कि समयानुसार बौद्ध धर्म तथा दर्शन के विचारों के सम्बन्ध में भी मतभेद होने लगा था और प्रयोग के समय में यह इस स्थिति को प्राप्त हुआ था कि इसके १८ निकाय धर्मशास्त्र प्रशय हो गये। प्रारम्भ में यह विभाग 'बेरबाद' (स्पष्टिर्बाद, प्राचीन परम्परा के अनुयायी) तथा 'महासाङ्घिक' इन दो रूपों में ही था। इन सम्प्रदायों ने अपने-अपने अनुसार मूल बुद्धबचन का स्वीकार किया। साथ ही भाषा के विषय में भी वे परम स्वतन्त्र हो रहे क्योंकि स्वयं शास्ता ने किसी भाषा विशेष का प्रावधान करके बुद्धबचनों का अपनी-अपनी भाषा में सीखने बचवा चारण करने की अनुमति प्रदान कर दी थी। अतः प्रारम्भ से ही इस धर्म में भाषा-विषयक रुढ़िवायिता का समावेश नहीं हो पाया। और इस सम्बन्ध में वस्तुस्थिति यह है कि लिपिबद्ध का संग्रह अनेक भाषाओं में हुआ। एक प्रसिद्ध तिब्बती परम्परा के अनुसार मूल-सर्वास्तिवाद सम्प्रदाय के अन्य संस्कृत में महासाङ्घिक के प्राकृत में महासाङ्घिकियों के अपभ्रंश में और स्पष्टिर्बाद सम्प्रदाय के वैशाची में था।

पालि भाषा—आज हम पालि शास्त्र का भाषा के धर्म में व्यवहृत करते हैं और इसमें बौद्ध-धर्म के 'बेरबाद' का सम्पूर्ण लिपिबद्ध एवं धनपिटक साहित्य प्राप्त है। प्रारम्भ में यह शास्त्र मूल बुद्धबचन बचवा लिपिबद्ध के लिए प्रयुक्त होता रहा और बाद में यह उस भाषा का स्रोतक हो गया

जिसमें बुद्धबचन प्राप्त है। इस प्रकार भाषा के धर्म में पाणि चम्प का प्रयोग नहीं ही है विशेषकर उन्नीसवीं शती से इसका व्यापक प्रचार हो गया है। चाब हम जिस भाषा को पाणि की संज्ञा से अभिहित करते हैं इसका परम्परा से प्राप्त नाम मागधी है। बिपिटक पर लिखी गयी अट्टकजाधों के पुन से ही लोग इसे इस नाम से कहते धामे हैं। पर मागधी का प्राचीनतम उपलब्ध रूप उड़ीसा बिहार धीर उत्तर प्रदेस में मिसनेवाल धशोक के शिलालेख हैं। इन शिलालेखों की भाषा से मागधी कही जानेवाली पाणि भाषा की निम्नताएँ हैं। पाणि ने यदि 'स' का वायकट तथा 'र' के स्थान पर भरसक 'ल' नहीं जाने देने की कसम न खावी होती तो धाबक उसे ही मागधी का प्राचीनतम रूप होने का सीधाम्य प्राप्त होता किन्तु सिंह के पुराने गुजराती (धीरसेनी-महाराष्ट्री-जापी) धताधियों तक मागधी के उच्चारण को कैसे बनाम रखते? तो भी हम पाणि के पुराने 'गुर्ता' में 'ल' 'घ' की मरमार कए उसे मागधी के पास तक पहुँचा सकते हैं। मागधी का प्रमुख मयक के बिधान साम्राज्य की स्थापना के बाद ही स्थापित हो पाया बा।

यदि हम प्राचीन भारतीय धार्मभाषा के बिकास रूप पर बिचार करें तो इही निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि वैदिक भाषा निरन्तर बिकास पप पर धरतर होती धयी। जितनी ही भाषा बढती धयी उतना ही हमारे परबर्ती पूर्वजों की धपने पूर्वजों की भाषा धीर इतिहा के प्रति अधिक लाकोत्तर पडा बढती धयी धीर उन्होंने इसकी रता के धनक उपाय किये। फिर भी बोलचाल की भाषा धाने बढती ही गयी। समय बीतने के साथ लोगों की इसकी बिन्ता हुई कि इस भाषा को कैसे सजीब तथा मुर्धित रजा जाय। इसके लिए उन्होंने (बैर) मग्नों को बहूँ लहिता पद पटा बन धादि गाना रूप से उच्चारण तथा कंठ्य करके मुर्धित किया बहूँ उन भाषा की भीतरी बनाब के लिए धपनी-धपनी गायत्र के प्रातिघास्य बनाये। गर बोलचाल की भाषा तथा इस भाषा में निरन्तर धन्तर बढता चला जा रजा बा धीर अब यह काफी हद तक धाने बढ चुका बा अब ईना पूर्व प्थि गायत्री में गीतम बुद्ध उत्पन्न हुए। इन्होंने साहित्यिक भाषा को छोड़कर प्रथमित तथा उपयुक्त होने से लोकभाषा में ही लोगों की उपेक्ष

दिया। पर बुद्ध की गिनतनीसी में मगध कोसल कुश धनकी और
 मागध प्रदेश के लोग थे और जब उन लोगों ने बुद्धबचनों का धनकी धनकी
 भाषा में पाठ करना प्रारम्भ कर दिया तो मूठों की भाषा में फेर-बदल
 का सम्भवेन हुआ। कुछ शिष्यों का यह बात जानकी और उन्होंने प्राचीन
 साहित्यिक भाषा में बुद्धबचनों को सुरक्षित करने की बात सोची और
 इनके लिए बुद्ध से निवेदन किया। बुद्ध ने उन्हें ऐसा करने से मना किया
 और ऐसा करने का हुसके दण्ड से दण्डनीय एक धपराव करार दिया।
 पर बुद्ध निर्वाण के तीन-चार घण्टाभिरों के बाद यह धामे दिन की घदम
 बदल धर्मधरों का धरुधर प्रतीत होन लगी। उनमें से कुछ लोगों
 ने बुद्धबचनों को प्राचीन भाषा का ही धपनाया और धामे यथासंभव प्रयत्न
 किया कि इसमें कुछ रद्दोबदल न होने पाव। धूमरे प्रकार के शिष्यों ने
 धम धरुधर स्यापी संस्कृत में कर दिया और तीसरे प्रकारवालों न परबती
 भाषा में उमे सुरक्षित करने का प्रयास किया। पहले प्रकार में सिहस
 के स्पधिरवासी धमधरों की धचना होती है। य सोच मागधी की सबसे
 बड़ी धिनेपताएँ—“स” की जगह “श” “न” की जगह “ण” और “र”
 की जगह “म” की सहस्यधियां पहले छोड चुके हैं तो भी कहते हैं—
 “हमारे धर्म-धम्य मूम मागधी भाषा में है।”

इस प्रकार स्पधिरवासी धिधिर हमें जिस भाषा में उपलब्ध है, उसी
 को पालि क नाम से धमिहित किया जाता है।

पालि पिटक

धाम स डड हजार धर्य पहले और बुद्धनिर्वाण से प्रायः हजार धर्य
 बाद धाधर्य बुद्धधाय न बुद्धबचनों के धारे में तिला धा—“ध्रयम संगीति
 में नंगमित धधवा धर्मधायित मध मिलाकर—(१) वा प्रातिमास (मिधु
 प्रातिमोण तथा मिधुणी-प्रातिमाय) दो धिमङ्ग (मिधु-धिमङ्ग तथा
 मिधुमी-धिमङ्ग) बीम लङ्घक (स्वधध) तथा सोसह धरिधर (इस सबसे
 मूम) —यह धिमधपिटक है।

(२) मुत्तपिटक (मूमपिटक) है—इसकास धारि ३४ मुत्तों का
 संग्रह धीधनिधाय मूमधरियाय धारि १५२ मुत्तों का संग्रह धिमिधमनिधाय
 धीधधरय धारि ७७६२ मुत्तों का संग्रह संधुत्तनिधाय धिधधरियाधान

आदि १५१७ सुत्तों का संग्रह अङ्गुत्तरनिकाय तथा इन पन्त्रह ग्रन्थों के मेघ से (मुक्त्त) सुद्धकनिकाय—(क) सुद्धकपाठ (ख) बम्मपर (ग) उदान (घ) इतिवृत्तक (ङ) मुत्तनिपाठ (च) विमानवत्सु, (छ) वेत्तवत्सु, (ज) वेरगाथा (झ) वेरीगाथा (ञ) जातक (ट) निहैस (ठ) पटिसम्भिसामम्म (ड) अपवान (ड) बुद्धवंत घौर (ण) बरियापिटक ।

(१) अभिधम्मपिटक (अभिधर्मपिटक) है—(क) बम्मसंगनि (ख) विम्व (ग) वासुक्खा (घ) पुम्मकपञ्चमति (ङ) कथावत्सु, (च) यमक तथा (छ) पट्टान ।”

इन सब उपर्युक्त ग्रन्थों के काल के बारे में विद्वानों ने बहुत बहुत की है और वास्तव में यह एक विचारणीय बात है ।

त्रिपिटक का काल निर्णय है ।

इस पूर्व प्रथम शताब्दी में त्रिपिटक संकलन हुआ अर्थात् तब से पाठ में अधिक स्थिरता आयी । उससे पहले सावधानी रखते हुए भी स्मृति के स्वसन से पाठ में हेर-फेर होता स्वाभाविक था । फिर आचार्य बुद्धधोय उपर्युक्त ग्रन्थों में ऐसे ग्रन्थों का होना भी मानते हैं, जो प्रथम संगीति में बुद्धजय नहीं बने । अत्रिधम्मपिटक के ग्रन्थ 'कथावत्सु' को तृतीय संगीति के प्रधान 'भोग्गलिपुत्त तिस्र' (तिप्य) ने लिखा इसलिये वह प्रथम और द्वितीय संगीति के समय अस्तित्व में भी नहीं आया था— तृतीय संगीति के समसामयिक तथा बाद के स्वबिरवादि-विरोधी निकायों के मतों के लक्षण के लिए इसे लिखा गया था । यह इससे भी सात होता है कि इसमें सन्निव २१४ विद्वान्तों में केवल २७ ही तृतीय संगीति के समकालीन या पुछने निकायों के थे जिनका ही लक्षण 'भोग्गलिपुत्त' कर सकते थे । अंबक अपर्यायीय पूर्वरीसीय राजगिरिक विद्वार्थक वैतुल्यक उत्तर पत्रक हेतुवाद आदि निकाय घणोक के बाद अस्तित्व में आये । उनका लक्षण 'भोग्गलिपुत्त' कैसे कर सकते थे ? काल के बारे में विद्वानों ने बहुत-सी कसौटियाँ रखी हैं और उनमें तप्य भी है । एक और कसौटी भी है— वेरवाद और सवसित्तवाक्ये पिटकों की तुलना । द्वितीय संगीति अर्थात् ३८७ ई० पू० तक सवसित्तवाक्ये आदि प्यारु निकाय वेरवाद से अलग

प्रस्तित्व नहीं रखते थे । इनमें सर्वास्तिवाद का विनयपिटक भीनी और तिब्बती धनुवाद के रूप में मौजूद है । पालि में प्राप्त सुत्तपिटक की भीनी धनुवाद से तुलना करने पर यह बात होता है कि बेरवाद तथा सर्वास्तिवाद इन दोनों निकायों में पाँच निकाय (बीषनिकाय आदि निकाय नामक उपर्युक्त ग्रन्थ) प्रथवा धायम वे—दीप (दीर्घ) मज्झिम (मध्यम) संयुत्त (संयुक्त) अङ्गुत्तर (अङ्गुत्तर) तथा खुद्दक (खुद्दक) । इनमें भी पहले चार निकायों में कुछ ही हेरफेर मिसता है । इनके आधार पर भीचे त्रिपिटक के सबन्ध में तुलनात्मक विचार प्रस्तुत किया जाता है—

१ सुत्तपिटक—बेरवासी बीषनिकाय (पालि में प्राप्त बीषनिकाय) के बत्तीस सूत्रों में से सत्ताइस भीनी बीषांगम न मिसते हैं जब छठ में से तीन मध्यमायम में प्राप्त हैं और बाकी चार बहाँ अप्राप्त ही ह । अठ द्वितीय संगीति के समय में य विद्यमान थे इस पर संदेह किया जा सकता है । बीषनिकाय के बत्तीसवें 'सुत्त' 'घाटानाटिय' में मूतप्रेत सम्बन्धी बातें हैं और यह सम्मिश्रित त्रिपिटक में नहीं था । इसलिए यह सर्वास्तिवासी बीषनिकाय में ही नहीं है पर तिब्बती कजूर में उसका धनुवाद प्राप्त है । भीनी त्रिपिटक में भी इसका धनुवाद (नंजियो १७४) मौजूद है । दोनों के सूत्रों में इस बात में भी अन्तर मिसता है कि एक में वे छोटे हैं तथा दूसरे में बड़े । सर्वास्तिवाद सम्प्रदाय के बाद में प्राङ्मुक्त होने से यह ध्यान रखनी है कि उसके सूत्रों को हर जगह बढ़ाया गया है । पालि में प्राप्त बीषनिकाय का महापरिनिष्वाण-सुत्त' उससे दून के करीब है । बेरवाद (स्पष्टिवाद) से मिल निकाय का 'महापरिनिष्वाण-सुत्त' भीनी भाषा में अनूदित है । इसका पुनः संस्कृत में धनुवाद मैने श्री बाबू मो क्षम की सहायता से किया था । इस कार्य के पदचरु मैं इसी निष्कर्ष पर पहुँचा कि जब पुनः कभी तिब्बती तथा भीनी धनुवादों का संस्कृत में धनुवाद होगा तभी इस प्रकार की आलोचनात्मक तुलना को प्रबलता प्राप्त होगा । अमिषम्मपिटक में पाठभेद आदि का सवाल नहीं था वह सभी बेरनिकाया के एक होने के समय प्रस्तित्व में आया ही नहीं था । बेरवासी आचार्य बुद्धचोप ने भी उस बेरवासी परंपरा का उल्लेख किया है, जिसके अनुसार

उसे बुद्धनिकाय के अन्तर्गत माना जाता था । विद्वानों ने बुद्धनिकाय में उसके अंश का होना सिद्ध किया है ।

२ विनयपिटक—पालि विनयपिटक का विभाय इस प्रकार से है—

१ विमङ्ग	}	१ मिक्खुविमङ्ग
		२ मिक्खुनीविमङ्ग
२ खम्बक	}	१ महावग्ग
		२ बुल्लवग्ग
३ परिवार		

ग्रन्थों की दृष्टि से विनयपिटक में ये पाँच ग्रन्थ आते हैं—(१) पाठजिक (२) पाबितिय (३) महावग्ग (४) बुल्लवग्ग तथा (५) परिवार । इनमें परिवार तो बहुत बाद का है क्योंकि इसमें विपिटक के विविध होने की बर्णना है । विमङ्ग के अन्तर्गत ही 'पाठजिक' तथा 'पाबितिय' नामक ग्रन्थ आते हैं । वास्तव में विमङ्ग प्राग्निमोक्ष सूत्रों की व्याख्या है । प्राग्निमोक्ष सूत्रों का बर्णनकरण भिक्षु तथा भिक्षुणी प्राग्निमोक्षों में किया जाता है अतएव विमङ्ग भी इनके अनुसार है । बाद में ग्रन्थों के रूप में इनका नामकरण 'पाठजिक' तथा 'पाबितिय' में कर दिया गया । इस नामकरण का कोई विशेष सिद्धान्त नहीं है क्योंकि 'पाठजिक' ग्रन्थ में केवल भिक्षुओं से सम्बन्धित 'पाठजिकों' की तथा 'अह्मिनेस' आदि नियमों की बर्णना है, जबकि 'पाबितिय' में प्रारम्भ हीनर भिक्षुमा के धीर नियम तथा उनकी व्याख्या एवं सम्पूर्ण भिक्षुणियों के नियम (पाठजिक से प्रारम्भ हीनर मन्त्री) 'पाबितिय' में समूहित हैं । अतएव 'पाठजिक' तथा 'पाबितिय' ये नाम अयोग्यादिक ही हैं धीर इनकी अवेक्षा इनका भिक्षु' तथा 'भिक्षुणी' विमङ्ग नाम देना अधिक उपयुक्त है ।

पेरुवाय धीर सर्वास्तिवाद के विनयों में भी समानता है । पेरुवाय में २२७ प्राग्निमोक्ष नियम हैं जिनकी अचहेतना करन में दोष की प्राप्ति होती है पर सर्वास्तिवाद विनय के अनुसार ये २२० हैं । इन दोनों में इन नियमों में बहुत समानता विद्यमान है । पालि विनय के खम्बक की दो भागों में विभक्त कर एक को 'महावग्ग' तथा दूसरे को 'बुल्लवग्ग' की संज्ञा प्रदान की जाती है । मूल-सर्वास्तिवाद के विनय की भी 'महावग्ग' तथा

'क्षुद्रक' इन दो भागों में बाँटा जाता है। इस प्रकार दोनों के सत्वकों में काफी समानता है। इससे यह भी प्रकट होता है कि इन दोनों विनयों का विकास एक ही विनयपिटक से हुआ।

३ अग्निब्रह्मपिटक—आग्नि अग्निब्रह्मपिटक में तथा सर्वास्तिवाय के अग्निब्रह्मपिटक में विनय की उपर्युक्त समानता के बर्णन नहीं होते। यद्यपि दोनों की ग्रन्थ-संख्या सात ही है तथापि इनके नामों तथा विषयों में कोई समानता नहीं है। इस विमता के साथ-साथ सर्वास्तिवाय की अपनी यह विशेषता और है कि वह इसे बुद्धवचन नहीं मानता जैसे—

ग्रन्थ	कत्ता
१ ज्ञानप्रस्थान	कात्यायनीपुत्र
२ संगीतिपर्याय	महाकौटिल्य
३ प्रकरयपाद	पशुमित्र
४ विज्ञानकाय	देवसर्मा
५ वातुकाय	पूर्ण
६ धर्मस्कन्ध	शारिपुत्र
७ प्रज्ञप्तिशास्त्र	मौद्गल्यायन

'ज्ञानप्रस्थान' के अतिरिक्त भाग का पुन संस्कृत अनुवाद विरल माखी के डाक्टर शशि शास्त्री ने किया है और यह वहीं से प्रकाशित भी हुआ है।

अग्निब्रह्म के सात ग्रन्थकृतियों में शारिपुत्र मौद्गल्यायन और पूर्ण बुद्ध के शिष्य माने गये हैं। सातों में 'ज्ञानप्रस्थान' को प्रधान माना जाता है जिसको कात्यायनीपुत्र की कृति कहा जाता है। कात्यायनीपुत्र कश्मीर के सर्वास्तिवादी आचार्य थे। कश्मीर को बौद्ध बनाने के लिये मध्यमकिक अशोक के समय तीसरी संगीति द्वारा कश्मीर भेजे गये थे। वेरवाय अग्निब्रह्म को बुद्धवचन मानता है और उसके सात ग्रन्थों में से एक ग्रन्थ 'कवाचरत्न' के रचयिता 'मोग्गलिपुत्त तिस्स' माने जाते हैं। तीनों संगीतियों में धर्म और विनय का ही संगायन किया गया यह भी कहा जाता है। धर्म का अर्थ है सूत्र। अष्टसुत्तरविनय में अग्निब्रह्म की कुछ बातें धारी हैं।

फिर जब तक अग्निवर्म का स्वतंत्र अस्तित्व नहीं माना गया था तब तक उसे बृहन्निकाम्य में सम्मिलित किया जाता था।

इस तरह जान पड़ता है, अग्निवर्म तृतीय संगीति में भी तैयार नहीं हुआ था वह अर्थात् महन्न के साथ सिद्ध नहीं गया था।

विद्वानों ने पिटक-रचना के काल को पाँच भागों में बाँटा है—

पहला युग ४८३ ई. पू० से ३८३ ई० पू० अर्थात् पहली और दूसरी संगीति के बीच।

दूसरा युग ३८३ ई० पू० से २६३ ई. पू० अर्थात् अशोक के साम्राज्य तक।

तीसरा युग २६३ ई० पू० से २३० ई० पू० अर्थात् अशोक के राज्य के अंत तक।

चौथा युग २३० ई० पू० से ८० ई० पू० तक अर्थात् सिद्ध में।

पाँचवाँ युग ८० ई० पू० से २० ई० पू० अर्थात् त्रिपिटक के लेखनाद होने तक।

डॉ० रीच बर्किट्स ने पाणि त्रिपिटक का बृहत् परिनिर्वाण काल से लेकर अशोक के काल तक निम्नलिखित विकास-क्रम दिया है^१।

- १ के बृहन्निकाम्य को समान अर्थों में ही त्रिपिटक के प्रायः सभी ग्रन्थों की भाषाओं आदि में मिलते हैं।
- २ के बृहन्निकाम्य को समान अर्थों में केवल दो या तीन ही ग्रन्थों में प्राप्त है।
- ३ कील पारमज्जवम्य तथा अट्टकवग्ग पाणिमोक्ख।
- ४ कील अग्निवर्म अङ्गुत्तर और संयुक्तनिकाम्य।
- ५ सुत्तनिपाठ वेरगाथा वेरीयाथा उदान बुरुक्कपाठ।
- ६ सुत्तविमङ्गल सम्बक।
- ७ जातक वम्मपय।
- ८ निरेस इतिवृत्तक पटिसम्भिसामम्य।
९. पेठवात्तु, विमानवत्तु, अपधान परिमापिटक बृहत्तंस।
- १० अग्निवर्मपिटक के सभी ग्रन्थ जिनमें विकास-क्रम के अनुसार पुष्पसपञ्जलि प्रथम तथा नञ्जावत्तु अन्तिम है।

१ डॉ०-बुद्धिस्ट इतिहास, पृ० ८४।

डॉ० विमलाचरण साहू ने उपर्युक्त मठ में संशोधन उपस्थित करते हुए इस त्रिपिटक-विकास-क्रम को निम्नप्रकार से व्यवस्थित किया है—

१ वे बृहत्सूत्र जो समस्त सूत्रों में त्रिपिटक के प्रायः सभी ग्रन्थों की यावार्थों में प्राप्त होते हैं ।

२ वे बृहत्सूत्र जो समस्त सूत्रों में केवल दो या तीन ग्रन्थों में ही विद्यमान हैं ।

१ सीमा पाठमय अष्टकव्यय सिद्धांतपद ।

४ शीघ्रनिकाय (प्रथम स्कन्ध) मज्झिमनिकाय संयुक्तनिकाय अष्टसुत्तनिकाय पाठिमोक्ष के १५२ नियम ।

५ शीघ्रनिकाय (द्वितीय तथा तृतीय स्कन्ध) खेरयाया बेरीयाया ५०० श्लोक सुत्तविभङ्ग पटिसम्भिसाम्भाम्मा पुमासपञ्चमत्ति विभङ्ग ।

६ महावज्र्य बुद्धवज्र्य पाठिमोक्ष (२२७ नियमों के रूप में पूर्ण होना) विमानवत्थु, पेटवत्थु, धम्मपद कथावत्थु ।

७ बुद्धनिवृत्त महानिवृत्त उदान, इतिवृत्तक सुत्तनिपाठ श्रावण कथा समक पट्टान ।

८ बृहत्सूत्र परिपापिटक अपवण ।

९ परिवार ।

१० सुत्तकपाठ ।

इस प्रकार तुलनात्मक दृष्टि से विचार करते हुए हम पाति त्रिपिटक के विकास-क्रम को समझ सकते हैं । सूत्रों के आचार पर लोगों ने इस विकास-क्रम को ही अपना धर्म का विषय बनाकर इस पर विस्तृत अध्ययन भी प्रस्तुत किया है ।

मूल बृहत्सूत्र—त्रिपिटक में बृहत् पायाधों के प्रक्षिप्त होने की बात को प्राचीन आचार्यों ने भी स्वीकार किया है । यह तो हम स्पष्ट रूप से कह सकते हैं कि आचार्यों को छोड़ कर सारा धर्मधम्मपिटक पीछे का है और इसीलिए आचार्य बृहत्सूत्र के समय से ही इसके बृहत्सूत्र होने

१ डॉ०—हिस्ट्री ऑफ पाति लिटरेचर, भाग १, पृ० ४२ ।

२ डॉ०—मौखिकधर्म पाठ्य स्टीड इन दिमोर्टिकल ऑफ बुद्धिधर्म ।

पहला अध्याय

१ सुत्तपिटक

१ दीघनिकाय

भारत की वेद पाँच त्रिपिटक भवना बुद्धकथन है। पहले पिटक के रूप में धम्म तथा विनय की ही परिचयना थी। धम्मिधम्म को तो बार में स्वागत मिला इसका व्याख्यान ऊपर किया था चुका है। धम्म तो सुत्तपिटक का ही नामान्तर है।

सुत्तपिटक

सुत्तपिटक इन पाँच त्रिकायों भवना भागों में विभक्त है—(१) दीघनिकाय (२) मग्गिमनिकाय (३) संयुत्तनिकाय (४) अङ्गुत्तरनिकाय और (५) बुद्धनिकाय। इनके अर्थात् विषय निम्नप्रकार से हैं—

१ दीघनिकाय

पाँच में अल्पपरिमाण बतमाने के लिए ३२ अक्षर के अनुष्टुप् छंद को गिना जाता है। २२० छंदों का एक भाष्यकार होता है जो गायत्रि ध्वनि का पर्याय है। एक भाष्यकार में हम प्रकार $२२० \times ३२ = ७०४०$ अक्षर होते हैं। दीघनिकाय में सीमकखण्ड महा और पाबिकवग्ग नाम के तीन बग्ग चौथीस सूत्र और ६४ भाष्यकार हैं त्रिकाय विवरण है—

१ सीमकखण्डवग्ग

- (१) बह्मजासमुत्त
- (२) सामञ्जाकलमुत्त
- (३) धम्मदुत्त
- (४) सोपपञ्चमुत्त

- (५) कूटबन्तमुत्त
- (६) महाभिममुत्त
- (७) आभियमुत्त
- (८) कस्तपसीहलादमुत्त
- (९) पोट्टुपारमुत्त
- (१०) मुममुत्त
- (११) केवट्टमुत्त
- (१२) मोहिञ्चमुत्त

२ महावग्ग

- (१३) वैविञ्चमुत्त
- (१४) महापवानमुत्त
- (१५) महानिवानमुत्त
- (१६) महापठिनिम्बानमुत्त
- (१७) महामुबस्सगमुत्त
- (१८) जनबसममुत्त
- (१९) महागोबिञ्चमुत्त
- (२०) महासमपमुत्त
- (२१) सक्कपञ्चमुत्त
- (२२) महासत्तिपट्टानमुत्त
- (२३) पापासिमुत्त

३ पायिकवग्ग

- (२४) पादिकमुत्त
- (२५) उडुम्बरिक्खसीहलादमुत्त
- (२६) अक्कवत्तिसीहलादमुत्त
- (२७) सम्माञ्जमुत्त
- (२८) सम्पमादनीयमुत्त
- (२९) पागादिकमुत्त

- (३०) सक्कवसुत्त
 (३१) सिगामोवायसुत्त
 (३२) धाटानाटियसुत्त
 (३३) मंगीनिपरियायसुत्त
 (३४) वसुत्तरसुत्त

इन सूत्रों का भारत के तात्कालिक इतिहास भूभोज तथा सांस्कृतिक
 विषय के लिए कितना महत्व है यह उनमें बर्णित विषयों से ही ज्ञात होता
 है। यत इन वृष्टि से इनका परिचय दिया जाता है—

१ सीसक्कवसुत्त

(१) ब्रह्मजालसुत्त—अपनी शिष्य-महत्ती के साथ बुद्ध राजगृह
 धीर नासन्दा के बीच राजपथ पर जा रहे थे। उनके पीछे सुप्रिय नामक
 परिव्राजक भी अपने शिष्य ब्रह्मरत्त के साथ जा रहा था। सुप्रिय अनेक
 प्रकार से बुद्ध धर्म तथा संघ की निन्दा कर रहा था धीर ब्रह्मरत्त उनकी
 प्रशंसा। निजु-संघ के साथ बुद्ध तथा ये दोनों 'घन्वजट्टिका' के राजाघार
 में रथ भर के लिए ठहर गये तथा वहाँ भी सुप्रिय तथा ब्रह्मरत्त बैसा ही
 करते रहे। निजुओं में इसकी चर्चा हो रही थी उसी समय बुद्ध उनके
 पास पहुँचे। पूछे जाने पर निजुओं ने सारी बात उन्हें बतलाई। बुद्ध
 ने कहा कि यदि कोई मेरी निन्दा करे तो तुम लोगों को उससे बँर, असन्तोष
 प्रवृत्ति में डीन नहीं करना चाहिए, साथ ही हम सबों की प्रशंसा में
 भी तुम्हें धान्धिल नहीं होना चाहिए। इन दोनों हासलों में तुम लोगों
 का कर्तव्य है उस कथन की सत्यता की जाँच करना। इसके पश्चात्
 बुद्ध ने धील (सराधार) का विभाजन बतलाते हुए उसके बुद्ध (प्रार्थमिक)
 मध्यम तथा महा ये तीन विभाग किये। प्रार्थमिक धील के अन्तर्गत
 उन्होंने अस्वत्थार-त्याग अग्निचार-त्याग कठोरमापण-त्याग चापमुत्ती
 त्याग हिंस्र-त्याग मध्यमधील के अन्तर्गत चीबों का अपरिग्रह, जुधा
 धारि खेस-त्याग छोटबाट की मय्या का त्याग, सजने-भजने का त्याग
 राजकथा चोरकथा धारि व्यर्थ कथाओं का त्याग अकार की बहुस का

त्याग राजा धारि के भूत का काम न करना, पार्वती बंधक, बावुनी न होना और महाशील के अन्तर्गत धर्म (लक्षण) बिना स्वप्न धारणा मृत-मेत साँप-विष्णु के झाड़ू-क की बिधा का त्यागना, राजकिण्वी मासना प्रहृष-कस मासना अन्कापात धारि का फल मासना, हस्तरेखा गजना, कबिता धारि हीनबिधा से बीबिका न करना शरीर पर बेबता बुलाकर प्ररत पुझना तथा बमन-बिरेचन धारि क्रियाओं का परित्याग करते हुए उनसे निष्पत्तियों की प्रमय रहने की बेसना की। इसके बाद बुद्ध ने उस समय में प्रचलित बासठ बार्त्तिक मतों की व्यर्थता के सम्बन्ध में त्रिभुओं को उपदेश दिया। इसमें से अट्टारह पूर्वन्तिकस्विक (धारि सम्बन्धी) तथा बीबान्तिध अपरान्तकस्विक (अन्तसम्बन्धी) धारधार्य हैं जो निष्पत्ता बुद्धि-स्वरूप ही हैं। अट्टारह पूर्वन्ति बुद्धियाँ—(१) धास्वतवार (२) नित्यता-अनित्यतावार, (३) यान्त अन्तवार (४) धमपबिधोप वार (अनेकान्तवार) तथा (५) अकारमवार पर धारारिष्ठ हैं। अपरान्त बीबान्तिध बुद्धियाँ मरणान्तर होघबामे धारमा मरणान्तर बेहोष धात्मा मरणान्तर न होघबासा न बेहोष धारमा धात्मा का उच्छेद तथा इसी जन्म में निर्वाण की प्राप्ति सम्बन्धी हैं।

बासठ बुद्धियों की असाक्षा दिखलाते हुए बुद्ध ने कहा—जन्म के क्षोम (अवतृष्णा) के उच्छिन्न ही जाने पर मी तथागत का शरीर अब तक रहता है, तमी तक उन्हें मनुष्य धीर बेबता देख सकते हैं। शरीरपत्त हो जाने पर, उनके बीचनप्रवाह के निरुद्ध हो जाने से उन्हें देव धीर मनुष्य नहीं देख सकते। त्रिभुओं जैसे किसी धाम के गुच्छे की होंप के टूट जाने पर उस होंप से लगे सभी धाम नीचे धा गिरते हैं उसी तरह अवतृष्णा के क्षिम होने पर तथागत का शरीर हीना है।

इस मूत्र का उपदेश करने के परवान् अब धान्द में इसके नाम के सम्बन्ध में त्रिशासा प्रकट की तो बुद्ध ने उसका यह उत्तर दिया—“धान्द तुम इस धर्मोपदेश को धर्मजाल धर्मजाल बह्मजाल बुद्धिजाल धववा अलोकिक-संप्राम विजय यह सकते हो।”

इस सूत्र का तिब्बती तथा चीनी अनुबाव प्राप्त है। चीनी अनुबाव को मैंने फिर से संस्कृत में किया है।

(२) सामञ्जस्यकृतसूत्र—श्रामप्यकृतसूत्र बीषनिकाय का दूसरा सूत्र राजगृह में बीषक के आश्रमन में कहा गया। राजा मायव वैदेही-पुत्र मज्जातसन्नु शरद पूतो (श्राश्विन पूर्णिमा) को मन्त्रियों के साथ राज प्रासाद की छत पर बैठा हुआ था। एकाएक उसके मुँह से निकला—“कैसी रमणीय चांदनी रात है कैसी सुन्दर चाँदनी रात है किन्तु भ्रमण या ब्राह्मण का सरसंग करें, जो हमारे चित्त को प्रसन्न करे।” इस पर मन्त्रियों में से किसी ने कहा—‘महाराज यह ‘पूरवकस्सप संव-स्वामी गणाप्यस्य गणाचार्य ज्ञानी यत्स्वी तीर्षकर, (संप्रदायप्रवर्तक) बहुत लोगों से सम्मानित अनुमकी चिरकाल के शास्त्र ब्रह्मोद्भूत हैं। महाराज उन्हीं ‘पूरवकस्सप’ से बर्षा चर्चा करें। योही ही चर्चा करने से प्रायका चित्त प्रसन्न हो जायेगा।’ ऐसा कहने पर राजा चुप रहा।

दूसरे मन्त्री ने कहा—‘महाराज यह ‘मन्तभिगोसाम’ संव-स्वामी है।’ इस उत्तर से भी राजा चुप ही रहा।

इसके पश्चात् धीरे मन्त्रियों ने क्रमशः ‘अकृमण-व्यायण’ ‘सञ्जय-वेत्तुपुत्र तथा ‘नियच्छातपुत्र’ आदि गणाचार्यों की चर्चा की। पर राजा को इन नामों से कोई तृप्ति नहीं हुई और वह चुप ही बैठा रहा।

उस समय राजा के पास ही प्रसिद्ध वैद्य बीषक कुमारमृत्यु बैठा था। वह चुपचाप ही था। उसकी बुद्धि के सम्बन्ध में राजा ने प्रश्न किया। इस पर उसने मज्जातसन्नु को सम्यक् समुद्भूत के पास जाने की सलाह दी। राजा तैयार हो गया और उसने आज्ञा की—“तो सौम्य बीषक हाथियों की मर्षा ही तैयार करामो।”

राजा पाँच ही हाथियों पर राशियों को बिछा कर, स्वयं राजहाथी पर मर्षा हो मर्षाओं की राशनी के साथ निकला। बगीचे के निकट पहुँचने पर (बाप के हृष्यारे) मज्जातसन्नु को भय पकड़ा और तैयार होकर रोमांच होने लगा। यह पकड़ाकर बीषक से बोला—“सौम्य बीषक नहीं तुम मुझे बोला

तो नहीं दे रहे हो ? कहीं तुम मुझे धनुषों के हाथ में तो नहीं दे रहे हो ?
सादे बाण ही मिश्रुणा के बड़े सब के खल पर भी मसा जैसे बूकने
तथा कौसले तक का या किसी बूखे प्रकार का राज्य म हागा ?

“महाराज मत डरें, भाये जैसे महाराज वह मध्य में हीप जन रहे
हैं”

धनाठयानु जहाँ मगवान व जहाँ गया निमल बलाघय की तरह
बिलकुल बुपबाप दासत मिसु-सब को देखकर यह प्रीतिबाक्य (उदान)
उबाग—“मेरा उदयमत्र भी इसी शान्ति से युक्त हो जैसा यह मिसु-सब
बिराज रहा है।” राजा मगवान को समिबादन कर मिसु-सब को हाथ
जोड़ एक घोर बैठ गया और मगवान से कुछ पूछन की अनुमति माँगी।

बुद्ध ने कहा—“जो बाहो पूछो।” उसने पूछा—“जैसे मन्ते यह मिश्र-
मिश्र को चित्पराबान है इसके चित्पराब से इसी शरीर में लोग प्रत्यक्ष
जीविका करते हैं। इसी प्रकार क्या आमभ्य (सामुल) फल का भी
इसी जग में साक्षात्कार किया जा सकता है ?”

बुद्ध ने उससे इस प्रश्न के विषय में यह भी पूछा कि इसे उसने बूखे
भयन तथा बाह्यो से पूछा है अथवा नहीं और यदि पूछा है तो जहाँ पर
उसे क्या उत्तर प्राप्त हुआ है ? बुद्ध के ऐसा पूछने पर राजा ने इस सम्बन्ध
में जो उत्तर बूखे तीर्थाकरी ने उसे दिए थे उसे उनके समक्ष उपस्थित किया—

‘पूरयवस्सप’ ने पूछन पर कहा—महाराज करते-नरते खेदन करते,
संच काटते पाँव नूटते, बटमाटी करते पररभी-जमन करते नूट बोसते
भी पाप नहीं होता। बाण होते बाण बिनाते यज्ञ करते यज्ञ करते, संया
के उत्तर तीर भी जामे तो इस कारण पुष्य नहीं होता। बाण, दम तथा
संयम करने और सत्य बोलने से न पुष्य है, न पुष्य का भायम। इस
प्रकार उन्होंने प्रत्यक्ष आमभ्यफल के पूछने पर धर्मिबाद का वर्णन किया।
जैसे मन्ते पूछे आम जबाब दे कटहल यही बात जहाँ भी हुई।

‘मन्तमिसोसात’ (माजीवक भाषार्थ) से भी एक दिन राजा ने जहाँ
प्रत्यक्ष पूछा तो मोसान ने कहा—महाराज जीवों के ज्ञेय का कोई हैपु

मूर्ख, बिना हेतु-प्रत्यय के ही सार करनेवाले होते हैं, मूठ होते हैं। सभी जो बनिबल निर्विकार मान्य और सरोम के फेर में शक्तियों में प्रत्यय ही मुक्त-मुक्त मोचते हैं। मस्ती साज छोटे-बड़े कल्प हैं जिन्हें मूर्ख और पंडित जानकर और अनुभव कर बुद्धों का अन्त कर सकते हैं। वही यह नहीं है—इस लीन का प्रथम या तप धरणा ब्रह्मचर्य से मैं अपरिपक्व कर्म को परिपक्व करूँगा। परिपक्व कर्म को भोगकर प्रसन्न करूँगा। मुक्त-मुक्त शोक (माय) से तुझे हटा दें तथा संसार में घटना-बढ़ना—उत्कर्ष-अपकर्ष नहीं होता। जैसे मूठ की मोती फेंकने पर खुलती हुई मिलती है, वैसे ही मूर्ख और पंडित बौद्धकर बुद्ध का प्रसन्न करेंगे। आत्मस्पर्श के बारे में पृथ्वी पर 'अच्छाति कोसास' ने इस प्रकार से अहेतुक संसार को धुँडि का निरूपण किया।

'अधितकेसकम्बल' के सम्बन्ध में राजा ने कहा—अधितकेसकम्बल से यही प्रश्न पूछा तो अधित ने उत्तर दिया—महापद्म न शत है, न यज्ञ है न होम है और न पुण्य धरणा पाप का अन्त-मुक्त फल होता है। न यह शोक है, न परलोक है, न माता है, न पिता है, न धर्मोक्ति देव हैं और न इस लोक में जैसे शानी और समर्थ यमण या ब्राह्मण हैं जो इस लोक या परलोक को स्वयं जानकर, देखकर बतलावेंगे। मनुष्य चार महानुषों से मिलकर बना है। जब बटु मरता है, तब पृथिवी महामृगिणी में जल जल में तेज तेज में वायु वायु में और इन्द्रियाँ धाकादा में सौन हो जाती हैं। लोग मरे को साट पर रख कर ले जाते हैं, उसकी निम्ना-प्रणसा करते हैं। इन्द्रियाँ कबूतर की तरह उमनी हो (बिखर) जाती हैं और सब कुछ मत्स्य हो जाता है। मूर्ख सोच जो शान देते हैं जबका कोई फल नहीं होता। आस्तिकवाद (धार्मिक) मूठ है। मूर्ख और पंडित दोनों ही गण्ड के मूठ होते ही माय (अज्ञान) को प्राप्त होते हैं। मरने के बाद कोई नहीं रहता। इस प्रकार आत्मस्पर्श के पूछे जाने पर उन्होंने उच्छेदवाद का ही विस्तार किया।

'अधुवकम्बल' ने यही प्रश्न पूछने पर कहा—महापद्म, ये सात काय घट्टन, धरणा तथा स्तम्भवत् है। ये जल नहीं होते बिकार को

प्राप्त नहीं होते। वे कौन सात काम हैं? पृथिवीकाम मातृकाम ऐश्वर्यकाम वासुकाम सुख सुख और जीवन। वहाँ न कोई हन्ता है न कोई शत्रुपिता। तीक्ष्ण अस्त्र से यदि शीघ्र भी काट दें तो भी कोई किसी को प्राण से नहीं मारता। अस्त्र उन कामों से अस्त्र उठके बीचबाले अस्त्राद्य में निरता है। इस प्रकार कल्याण में दूसरी ही इतर-उपर की शक्ति बतानी।

मन्ते 'निमग्नतापुत्र' से पूछने पर उन्होंने इसका उत्तर दिया—महाराज निपट चार प्रकार के संघर्षों से व्याप्यरित रहता है—(१) वह जल के व्यवहार का बारण करता है (जिससे जल के बीच मारे न जायें) (२) सभी पापों का बारण करता है (३) सभी पापों के बारण से धुने पाप-बाला होता है तथा (४) सभी पापों के बारण करने में लगा रहता है। इस प्रकार वह भी उत्तर उत्तमोत्तम नहीं रहा।

'सम्बन्धसहितपुत्र' से भी जब मैंने यही प्रश्न पूछा तो उन्होंने इसका उत्तर धर्मिचर्यादि में दिया—महाराज यदि आप पूर्ण कि क्या परलोक है और यदि मैं समझू कि परलोक है सभी तो उसे आप को बता सकता हूँ। मैं ऐसा भी नहीं कहता मैं बीसा भी नहीं कहता मैं दूसरी तरह से भी नहीं कहता मैं यह भी नहीं कहता कि यह नहीं है मैं यह भी नहीं कहता कि यह नहीं नहीं है। कही स्थिति उनकी प्रयोगिक प्राथिकों अथवा तपायत के सम्बन्ध में रही। इस प्रकार उन्होंने धर्मिचर्यादि का ही व्याख्यान किया।

अज्ञानपुत्र ने यही प्रश्न बुद्ध से भी पूछा। बुद्ध ने उत्तर में प्रश्न किया—“तो मैं आप से ही सुझता हूँ बीसा आप समझ बीसा उत्तर दें। आपका भौकर (जो) आपके बारे कामों को करता है—आप के बहन से पहले ही आप के सारे कामों को कर देता है; आपके सोने या बीटन के बाद ही स्वयं छोटा या बँटा है। आपकी आज्ञा मुझ मुनन के लिए तैयार रहता है प्रिय आचरण करनेवाला प्रिय बोलनेवाला है। आपकी आज्ञाओं को सुनने के लिए सदा आपके मुँह की ओर टाकता है। उठ

मीकर के मन में यह होता है—मगधराज वैदेहीपुत्र भी मनुष्य है, मैं भी मनुष्य हूँ। यह मगधराज पाँच प्रकार के भोगों का भोग करता है, जैसे मानों कोई देव हो, और मैं उसका मीकर हूँ, मैं भी क्यों न पुष्य करूँ? ऐसा कहकर यदि वह विर-राज्ञी मुझा कापाय बस्त्र पहन कर से बबर हो प्रव्रजित हो जायें तो क्या प्राय कर्रेंगे कि यह पुरुष लौट आये तथा फिर मगध मीकर हो जायें ?”

“इस ऐसा नहीं कह सकते। बल्कि हम ही उसका परिचालन कर्रेंगे उमकी सेवा कर्रेंगे उम धामन देंगे, बीबर, पिडपल्ल गयनासन पथ्य देने के लिए निर्मज्ज हेंगे; उमकी ममी तरह देखभाल कर्रेंगे।”

“तो महाराज क्या साबु होने का यह फल इमी जन्म में नहीं मिल रहा है ?”

भगवान् ने “हाँ” कहा।

इसके बार बुद्ध ने धारमिन्नक-दीर्घ मध्यम-दीस महाशीस एवं इन्द्रिय-संयम, स्मृति की सावधानी सन्तोष समाधि चार ध्यान ज्ञान-साक्षात्कार, सिद्धिर्मा विष्यभोट परचिञ्जान पूजजन्मस्मृति और विष्यदृष्टि प्राप्त करनबासे समयों की बात कही जिनकी साबुता का फल भी इमी जन्म में मिलता है।

राजा बुद्ध के बचन का परिमन्त्रन कर जसा गया। बुद्ध ने मिसुर्षों से कहा—“यदि इसने अपने धार्मिक धर्मराज पिता की हत्या न की होती तो यह इसी धामन पर निष्पाप धर्मचतुर्बाता हो जाता।”

(३) अम्बदुमुत्त—भगवान् उस समय कोशल (मगध) देश के ‘इच्छानगत’ नामक ब्राह्मण-धाम में बिहार कर रहे थे। कोशल के राजा प्रसेनजित् न पीत्यरसाति नामक बिद्वान् ब्राह्मण का ‘उक्कट्टा’ की जमीन दे रानी थी। वह ब्राह्मण स्वयं भगवान् के दान को नहीं जा सका। उसने अपने प्रमुन छात्र अम्बष्ठ को यह कहकर इच्छानगत भजा—“जाओ देखो कि अमम गौतम की जो इतनी श्वाति पैसी हुई है वह ठीक है या र्षा ही। क्या उनमें शास्त्रों में बधित बत्तीस महापुरुष-सहाय बिद्यमान है ?”

घम्बळ रथ द्वारा उस स्वागत् पर गया जहाँ बृद्ध ठहरे वे घीर नहीं जाकर मिलुओं से यह पूछा कि भगवान् कहाँ हैं ? उन्होंने कहा—“बड़े बड़े द्वारवाली कोठरी है बुधवास बीरे से जा कर वहाँ पर कुंड़ी की हिमायो भगवान् तुम्हारे लिए द्वार खोल देंगे।” घम्बळ ने बीसा ही किया। बृद्ध ने द्वार खोल दिया घीर उसने घम्बर प्रवेश किया।

उस समय घम्बळ मानवक स्वयं बैठे हुए ही भगवान् के टहलते नक्त कुछ पूछ रहा था स्वयं बड़े ही बैठे भगवान् से कुछ पूछ रहा था। उसके इस अधिष्ठाचार को देख भगवान् ने कहा—“घम्बळ क्या बृद्ध प्राचार्य—प्राचार्य ब्राह्मणों के साथ क्या-बताय ऐसे ही होता है बीसे कि तुम बसते बड़े बैठे हुए मरे साथ कर रहे हो ?”

“गद्दी हे नीतम चलते ब्राह्मणों के साथ चलते हुए, बड़े ब्राह्मणों के साथ बड़े हुए, बैठे ब्राह्मणों के साथ बैठकर बात करनी चाहिए। किन्तु हे नीतम जो मुझक भमण इम्म (नीच) कालों के पेट की संतान (घृह) है उनके साथ एत हो कत-नीतम होता है बीसा कि मेरा भाव नीतम के साथ।”

“घम्बळ वाचक के तीर पर तेरा यहाँ घाना हुआ है। मनुष्य जिस काम के लिए चाये उसी धर्म की उठे मन में करना चाहिए। घम्बळ जान पक्का है तू न मुस्तुल में बाध नहीं किया।”

तब घम्बळ बुझाते भगवान् की निम्न कछे तथा तन्ना बैठे हुए बोला—“शास्य जाति बड़ है, शास्य जाति बुर है, शास्य जाति बकबादी है। नीच हमने से शास्य ब्राह्मणों का उत्कार नहीं करते घीर यह भयोच है कि नीच नीच-समल शास्य लोग ब्राह्मणों का उत्कार नहीं करते।”

इस प्रकार घम्बळ ने इम्म (नीच) कहू शास्यों पर यह प्रबल प्रालेप किया।

“शास्यों ने तेरा क्या बिबादा ?

“हे नीतम एक समय मैं अपने प्राचार्य ब्राह्मण पीन्द्रमाति के किन्ती अप्र से कविनबल्लु गया था। वहाँ शास्यों का जहाँ संस्थाचार (ससुबकन)

वा बर्ही पहुँचा । उस समय बहुत से शाक्य तथा शाक्यकुमार संस्वागार में ऊँचे-ऊँचे घासनों पर बैठकर एक दूसरे पर प्रंगुली पड़ाते हैं-लेन रहे थे । बर्ही किनी ने मुझे घासन नहीं दिया । घात है गौतम यह प्रयुक्त है, जो इन्म तथा इन्मसमान शाक्य ब्राह्मणों का सत्कार नहीं करते ।”

इस प्रकार अम्बष्ठ मानवक ने शाक्यों पर क्रूरता प्रकट किया ।

“गौतमा भी अम्बष्ठ अपने बोसों पर स्वच्छन्द प्रामाण करती है वपिसवस्तु तो शाक्यों का अपना घर है । अम्बष्ठ इस घोड़ी-सी बात से तुम्हें धर्म नहीं करना चाहिए ।”

“हे गौतम चार वर्ण हैं—शत्रिय ब्राह्मण वैश्य और शूद्र । इनमें शत्रिय वैश्य और शूद्र में तीनों वर्ण ब्राह्मणों के ही सबक हैं । घात यह प्रयुक्त है ।”

इस प्रकार अम्बष्ठ ने शाक्यों पर तीसरी बार प्रामाण किया ।

उस समयान् को यह हुआ—यह बहुत बड़-बड़ कर, इन्म कह, शाक्यों पर प्रामाण कर रहा है । क्यों न मैं इससे गोत्र पुछूँ ।

“अम्बष्ठ तुम्हारा क्या गोत्र है ?”

“इत्थापन है गौतम ।”

“तुम्हारे पुत्रों नाम-गोत्र के अनुसार शाक्य धर्मपुत्र होते हैं तुम शाक्यों के शत्री-पुत्र हो । शाक्य राजा इन्बाहु को अपना पुरखा मानते हैं । अपनी प्रिया रानी के पुत्र को राज्य देन के स्थान से ही राजा इन्बाहु न अपना चार बड़े सड़कों—इत्थामुत्र करण्डु हास्तिनिक और सिनी-मूर—को राज्य से निर्वासित कर दिया । न निर्वासित हो हिमालय के पास सटपर के किनारे एक बड़े जाल (साजु) के बन में रहने लगे । बन (रंग) क विगड़न के दर से उन्होंने बहनों के साथ सहवास किया । राजा इन्बाहु के प्रदत्त पर अमायों ने यह बात बताया, तो इन्बाहु ने कहा—कुमार शाक्य (वसिष्ठाने) है । तब से यही (शाक्य) नाम पड़ गया । पिताओं को बंधकर उस समय उन्हें कृप्य कहते थे । उसी कृप्य के वंशज कार्प्यापन हैं, तुम शाक्यों के शत्री-पुत्र हो ।”

धम्मपठ ने इसे स्वीकार किया। तब दूसरे माणवकों ने यह हस्ता करमा चुक किया—“धम्मपठ धाक्यों का दासी-पुत्र है।” भयवान् ने काष्म्यापनों के पूर्वज हृष्य की महिमा बतलायी और कहा—“हृष्य ने बलिष्ठ देग में जाकर, बहामंज (बेद) पढ़कर, राजा इन्नाकु से उसकी सुवस्ती कम्बा मांगी। राजा ने सोचा—मेरी दासी का पुत्र होकर मेरी कम्बा माँपठा है। यह सोच क्रुद्ध होकर, उसने पाष बड़ाया पर बहु ऋषि के ब्रवाप से बाज को न छोड़ सकता था न समेट सकता था। धमत्प्यों ने हृष्य ऋषि के पास जाकर प्रार्थना की—‘महत्त राजा का मंगल हो।’

हृष्य ऋषि ने उन धमत्प्यों को यह प्रबयत करमा कि इन परिस्थितियों में ऐसा करने पर ही राजा का मंगल होया और बीसा हुमा नी। उस ब्राह्मण से तबिल राजा इन्नाकु ने ऋषि को अपनी कम्बा प्रदान की। धमत्प ने हृष्य एक महान् ऋषि थे।” बुद्ध ने यही कहे हुए उन दूसरे माणवकों को सम्बोधित करके कहा—“माणवकों धम्मपठ माणवक की दासी-पुत्र कह तुम बहुत अधिक मत मजबाघो। इससे हृष्य की महता ही सिद्ध होती है।”

धामे मूष में बुद्ध ने जातिवाद का खंडन करते हुए बतलाया—“अग्निम सोम जाति से मुद्धता का ज्वादा-ज्वात रगतते है—ब्राह्मण-कन्या से अग्नि-कुमार का जो पुत्र होगा उसे अग्निम अग्निपेक मही बने क्योंकि माँ की घोर से कमी है। इसके विपक्ष ब्राह्मण अग्निम-कन्या से उत्तम ब्राह्मण-पुत्र को भाव, स्वात्मिपाक यत्र पट्टनाई धादि तब में सहयोग बने। ब्राह्मण उभ बेद पढ़ायेंगे। उसे अपनी कम्बा नी बने। इस प्रकार, धम्मपठ, स्त्री की घोर से तथा पुरप की घोर से अग्निम ही खेठ है ब्राह्मण हीन है।”

‘गोष सेकर बसनेबाले बनों में अग्निम ही खेठ है।’

बुद्ध ने जाति तथा गोष के समिमान को छोड़ दिया और धाचरन को मुख्य बतसाया—“हे धम्मपठ, क्या तुमने ब्राह्मणों के धाचामे प्राचामों से मुगा है कि जा न ब्राह्मणों के धम्टक धादि धाचामे से क्या वे बीसे मुस्तात मुबिमिलित (संवरण सगाय), कस-मूँध तंबारे, यधिहुंजत

घानरम पहम स्वच्छदन्वभाठी पाँच काम-मोगों में लिख मुक्त धिर खुते
ये वैसे कि मात्र भाषाय सहित तुम ?”

“तहीं हे मीत्रम ।”

घम्बळ ने लौटने पर भाषाय पीकरसाति से सब बातें बतमायीं । वह
स्वय दर्शन करने घामा घौर अपने यहाँ मोहन का निर्माण हे गया । भाजन
के बाद बुद्ध-उपदेश मून पीकरसाति पुन-भाषाय-परिपद्-अमात्य-अहित
मगबाल् की दग्ग में धा उपासक हुया । उसने कहा—“जैसे ‘उक्तहुँ’ में
घाय मोहन दूसरे उपासक-कुओं में धाते हैं वैसे ही पीकरसाति-मुक्त में
धाते । वही माणवक या माणविका मयवान् का अतिबादन करेगी घानको
जल देगी या घापके प्रतिबिल का प्रमथ करेगी घौर यह उनक लिए चिरकाल
ठक हित तथा मुक्त के लिए हुया ।

(४) सोपदण्डमुक्त—‘सोपदण्ड’ धीग बेध के ब्राह्मण महाभाग
घौर मयबरज बिम्बिसार की घौर से चंपा का जागीरदार का । बुद्ध धीग
बेध में चारिका करते हुए चंपा पहुँचे घौर गम्पर्य पुनरभी के लट पर
बिहार करने मये । उस समय ‘सोपदण्ड’ उनके बसत के लिए धामा । उसने
बुद्ध ने ब्राह्मण-धर्म के विषयमें प्रश्न किये । इसके उत्तर में ‘मायदण्ड’ ने
‘मुखातिव बेध में पारंगत हीना अतिकपल घीस तथा पण्डित्य घौर
मया’ इन पाँच ब्राह्मण-धर्मों को बतया ।

पाँचों धर्मों में किसी की बमीसे भी क्या ब्राह्मण हा मचना है
यह पूछने पर एक-एक की छोड़ते प्रमा घौर घीम को उसने घावत्यक
बतसाया बजाकि बातों एक दूसरे को पुन तथा चुड़ करत हैं । इस पर
भाव गय ब्राह्मणों ने बहुत हल्का किया—“सोपदण्ड ठा अमय मोहन की
बात मान गया ।” इस पर ‘सायदण्ड’ ने स्वयं उनसे बात करने की बात
करते हुए अपने बाँध धीगक माणवक की उपास करने कहा—“अगर माणवक
अतिमुक्त तथा बधपाठी भी है किन्तु यदि वह धोतदण्ड हो तो वह
मम्पुनं मुन किस नाम का ?”

निमजन स्वीकार कर मयवान् दूसरे दिन सोपदण्ड के पर भाजन

करने गये। 'सोमदण्ड' को बार्मिक कबा का उपदेश करके नयबाम् चले गये।

बिभक्तुम धिय्म को तरह पाचरण करने पर 'सोमदण्ड' का बस शीघ्र होता जिसमें उसके योगों को हानि की संभावना होती। इसलिए उन्होंने बुद्ध से कहा—“परिपप् मेँ बैठ हाप जोड़ने को घाप प्रबुपत्सान्, छाफा हटाने को धार से प्रमिबावन पान में बैठे कोड़ा उठाने की यात्र से उठरना तथा छत्र उठाने को प्रमिबावन समझें।”

(५) कूटबन्तसुत्त—मगधराज-सम्मानित विद्वान् ब्राह्मण महाशाल कूटबन्त सोमदण्ड के बीसा ही बीमबसाली मगधदेश के 'खापुमत्' पाँव का स्वामी था। पाँव के सम्बन्धिका में मगधान् बिहार कर रहे थे। उनके दर्शन के लिए खापुमत् के ब्राह्मण जा रहे थे। कूटबन्त ने जी जाना चाहा। इस पर ब्राह्मणों ने कहा—“घाप बड़े ही घाप न बराहए। उस समय कूटबन्त एक महापद्म करने का रहा था जिसके लिए एक बड़ी संख्या में बैल बधड़े बकरियाँ तथा अन्य पशु यज्ञ के स्तूप पर बलि के लिए भाये गये थे। कूटबन्त ने मुन रखा था कि नयबाम् बुद्ध बीसह परिष्कार बहिय विविध यज्ञ-सम्पदा से मनीजाति परिचित हैं। भठएव ब्राह्मणों के उस कथन पर कूटबन्त ने बुद्ध की महिमा का व्याख्यान करते हुए कहा—

“यमज पीतम विद्या तथा पाचरण से युक्त हैं और इन्हीं पुरुषों के कारण मगधराज भौतिक विन्विताएँ ऐसे सम्राट् तथा शीघ्ररमाति के समान छत्र ब्राह्मण धारि उनकी धरण को पये हैं। इन समय से हमारे पाँव 'खापुमत्' में प्रायं हैं। जो हमारे पाँव-बेठ में घाते हैं, वे हमारे प्रतिपि होते हैं और प्रतिपि हमारे लिए सत्करणीय गृहकरणीय एवं पूजनीय हैं। साथ ही इस समय जो मैं विद्यात् ब्रह्म संभल करना चाहता हूँ उसके संबन्ध में मैं बुद्ध से पूषना चाहता हूँ।

ब्राह्मणों ने यह सुनकर उत्तका समर्वन किया और उतने बुद्ध के पास जाकर यज्ञ-सम्पदा के सम्बन्ध में प्रश्न किया। बुद्ध ने धार्मिक ज्ञान के महाविश्विद राजा के परिष्कारय यज्ञ का वर्णन उसे सुनाया जिसमें बाह,

बैल भेड़ बकरियाँ मुषर तथा मुमियों आदि का बंध नहीं हुआ था साथ ही नीकरों को ममतजित करने उनसे बेगार भी नहीं लिया गया था । यज्ञों में बुद्ध ने ज्ञान-यज्ञ त्रिस्तरण-यज्ञ शिक्षापद-यज्ञ समाधि-यज्ञ तथा प्रज्ञा-यज्ञ को भी सम्मिलित करते हुए कूटगत को उनका व्याख्यान सुनाया ।

कूटगत भी उनकी शरण गया तथा उसने दूसरे दिन बुद्ध को भोजनार्थ प्रपने घर पर निमन्त्रित किया । बुद्ध उसक यहाँ भोजन के लिए गये और भोजनोपरान्त उपवेश देकर वहाँ से चले गये ।

(६) महासिसुल—बैशाखी के महाव्रत की कूटागारशाला में बुद्ध विराज रहे थे । मिथु नागित भगवान् के उपस्थान थे । उस समय भगवत् तथा कोसल के कुछ ब्राह्मण बूत किसी काय से बैशाखी धाये हुए थे । वे भगवान् के दर्शन के लिए कूटागारशाला में पहुँचे । आयुष्मान् नागित ने कहा—“भगवान् के दर्शन का यह समय नहीं है ।” यह सुनकर वे प्रतीक्षा करने लगे । सिद्धविष्णुमार ‘घोटुड’ (कटे होंठों वाले) भी एक बड़ी सिद्धवि परिपक्व के साथ वहाँ पहुँचे । मिथु नागित ने उनसे भी वही कहा कि भगवान् के दर्शन का यह समय नहीं है ।

तब ‘सिंह भमनोद्देश’ ने दर्शनार्थ धाये इन लोगों को प्रतीक्षा करते हुए देखकर नागित से कहा—“मन्ते कापय्य भच्छा हो यदि यह जनता भगवान् का दर्शन पाये ।” मिथु नागित ने उन्हीं को भगवान् से यह निवेदन करने के लिए कहा । उन्होंने बुद्ध से निवेदन किया कि लौम उनके दर्शनार्थ प्रतीक्षा कर रहे हैं ।

बुद्ध ने ‘सिंह भमनोद्देश’ को बिहार की छाया में धासन विछाने को कहा और वही धाकर बैठ गये । ४ ब्राह्मण बूत तथा ‘घोटुड’ सिद्धवी आदि भी वही-धाये । वहाँ घोटुड सिद्धवी ने ‘मुनकलत्त’ सिद्धवीपुत्र की बात छोड़ी कि वह तो दिव्यभोज आदि अमत्कार्य के उद्देश्य से ही मिथु बना था और तीन बयों तक जब कुछ हाव नहीं आया तो वह धमग हो गया । बुद्ध ने इसके उत्तर में कहा—“महासि, इनसे भी अधिक उत्तम धर्म आदि हैं जिनके- सासात्कार तथा धनुमृति के लिए लोग भिक्षु-धर्म का पासन करते हैं ।”

इसके परभाव बुद्ध ने आत्मवाद के सम्बन्ध में 'भण्डिस' को कहा कही घोर निर्वास के सामाजिक के उपाय बतसाये ।

(७) आनियमुत्त—बुद्ध के कौशाम्बी में जोपितायम नामक विहार में विहार करते समय 'मुण्डिय' परिव्राजक तथा शक्याधिक के विषय आनिय इन दोनों ने वहाँ जाकर उनसे पूछा—“आबुस गौतम वही जीव है, वही शरीर है अथवा जीव वृत्त शरीर वृत्त है ? बुद्ध ने जीव तथा शरीर के भेद-भ्रमों को प्रकृत बतभाते हुए शील समाधि तथा प्रज्ञा के निरलेपन द्वारा इसका व्याख्यान किया और उन्हें समझाया कि ये प्रश्न तो उनके सामने उठते हैं, जो प्रज्ञानान्धकार से भ्रान्छरित हैं । पर एक धर्म के लिए इन प्रश्नों का कोई महत्व नहीं है, क्योंकि वह प्रज्ञानान्धकार से दूर सिद्धांतियों से परे रह कर अन्तर्दृष्टि द्वारा स्थिति की वास्तविकता को समझता है ।

(८) महासीहनाबुत्त—कोद्यम देस के 'उबुम्मा' के पास 'कम्म-कल्मस' 'मिमबाय' (मूवबाय) में बुद्ध विहार करते थे । अनेक (मन्त्र साधु) काश्यप ने भयबान् के पास जाकर उपसमाधों के बारे में पूछा । भगवान् ने कहा—“सभी उपसमाधों निन्दनीय नहीं हैं । सत्त्व बर्षाचरण से भी मैं सहमत हूँ । जो अमन्त्र-बाह्य निपुण पंडित शास्त्रार्थ-विजयी बाल की ज्ञान निकामनबाध अपनी बुद्धि से दूसरे के मन को मिला करते होसते हैं वे भी किन्हीं-किन्हीं बातों में मुझ से सहमत हैं पर किन्हीं में मैं सहमत नहीं हूँ । कुछ बातें जिन्हें वे ठीक कहते हैं, उन्हें हम भी ठीक कहते हैं और कुछ बातें जिन्हें वे ठीक नहीं कहते उन्हें हम भी ठीक नहीं कहते । किन्तु कुछ बातें जिन्हें वे ठीक नहीं कहते उन्हें हम ठीक कहते हैं । उनका पास जाकर मैं ऐसा कहता हूँ—‘आबुसों जिन बातों में हमलोग सहमत नहीं हैं उनको अभी जाने दें जिनमें सहमत हूँ उन्हें ही एक दूसरे से पूछें-विचारें ।’

वहाँ जाता प्रचार की झूठी उपसमाधों एवं उनमें सम्बन्धित उपसमाधों का उन्नेत अनेक काश्यप ने किया । भयबान् ने उनका खंडन करते हुए

कहा—“जो मन्म रहता है वह भावार-विचार को छोड़ देता है । वह सीत-सम्पत्ति चित्त-सम्पत्ति और प्रज्ञा-सम्पत्ति की भावना नहीं कर पाता और वह उनका साक्षात्कार भी नहीं कर पाता । अतः वह भ्राम्य तथा ब्राह्म्य दोनों से दूर है । अब मिथु बँद और दोह से रहित होकर मैत्री-भावना करता है, चित्त-मर्तों के लय होने से निर्मल चित्त की मुक्ति और प्रज्ञा की मुक्ति की इसी अन्त में स्वयं जानकर साक्षात्कार प्राप्तकर विहार करता है । यथार्थ में वही भिक्षु तब अमम या ब्राह्मण की संज्ञा से विमुक्ति होता है । सागमात्र जानेवाला सीत चित्त एवं प्रज्ञा की भावना नहीं कर पाता ।’ इस प्रकार से बुद्ध ने झूठी शारीरिक उपस्वाधों का निषेध किया और उनके विपरीत सीत चित्त एवं प्रज्ञा सम्पत्तियों का व्याख्यान किया ।

इसी प्रकार में बुद्ध ने राजगृह में स्यप्रोव उपस्थी के प्रश्नों के पूछने की चर्चा की तथा उनके उत्तरों से सन्तुष्ट होकर किस प्रकार से सन्तुष्टि को प्राप्त हो वह उनकी शरण में आकर प्रश्रित हुआ इसे भी उन्होंने बतलाया । दूसरे मतवासे जो बुद्ध के दर्शन से प्रभावित होकर उनके पास प्रश्रया तथा उपसम्पदा चाहते हैं उसके बारे में बुद्ध ने कहा—“काश्यप दूसरे मतवासे परित्राजक इस जर्म में प्रश्रया तथा उपसम्पदा चाहते हैं तो वे चार मास परित्राजक (परिवास) करते हैं तब भिक्षु उन्हें प्रश्रया देते हैं । अभी तो मैं केवल इतना ही जानता हूँ कि तुम कोई मनुष्य हो ।” अथवा काश्यप ने कहा—“मन्ते मैं चार साल परिवास करूँगा यदि भिक्षु मोग मुम से सन्तुष्ट हों तो प्रश्रया दें ।”

अथवा काश्यप ने अमवाल् के पास प्रश्रया-उपसम्पदा पायी ।

(६) पौट्टपावसुत्त—बुद्ध धावस्ती में अतवनायक में विहार कर रहे थे । उस समय ‘पौट्टपाव’ परित्राजक वहीं पास में एक शाला में ठहरा था । धावस्ती जाते समय बुद्ध ‘पौट्टपाव’ के यहाँ गये । उस समय इस परित्राजक की परिपद् में राजकथा चोरकथा तथा धामकथा आदि व्यर्थ की कथाओं की चर्चा हो रही थी । बुद्ध ने पहुँचते ही पूछा—“क्या कथा

बीच में बस रही थी ?" 'पोट्टपाद' ने उत्तर दिया—“जान बीबिय, मत्ते इस कथा को. यह भयवान् को पीछे भी सुनने को दुर्लभ न होगी ” तथा इसके पश्चात् 'अभिसंज्ञा-निरोध' के सम्बन्ध में अनेक मठों का उन्मत्त करते हुए इसकी चर्चा बुद्ध से की। बुद्ध ने इन मठों को अन्धविश्वास बतसाते हुए उस अनुपम साधना का व्याख्यान किया जिससे साधक 'निरोध-समापत्ति' नामक अवस्था को प्राप्त करता है। साथ ही इसके लिए सीम तथा समाधि आदि सम्पत्तियों को भी उन्हूने बताया। 'निरोध-समापत्ति' के बारे में बुद्ध ने यह कहा—“इसमें 'अभिसंज्ञा' का पूर्ण निरोध हो जाता है। उसको यह होता है—मेरा चिन्तन करना बहुत बुरा है और चिन्तन न करना ही भोपसू है। यदि मैं अभिसंस्करण न करूँ तो मेरी ये संज्ञाएँ गप्ट हो जायेंगी और बुरी उदार (विद्याल) संज्ञाएँ उत्पन्न होंगी। क्यों न मैं न चिन्तन करूँ और न अभिसंस्करण। उनके चिन्तन न करने तथा अभिसंस्करण न करने से वे संज्ञाएँ गप्ट हो जाती हैं और बुरी उदार संज्ञाएँ उत्पन्न नहीं होतीं। यह निरोध को प्राप्त होता है और उसे कथ्य अभिसंज्ञा निरोधवासी 'संज्ञात-समापत्ति' उत्पन्न होती है।” इसके पश्चात् वहाँ संज्ञा और आत्मा पर प्रत्येक उपस्थित हुआ और बुद्ध ने उसका भी विवेचन किया।

'पोट्टपाद' इस प्रसङ्ग को छोड़कर अव्याकृत (अनिर्बचनीय) प्रश्नों पर ध्याया कि (१) लोका नित्य है, (२) लोक अनित्य है, (३) लोक अन्तवान् है, (४) लोक अन्तवान् है (५) नहीं बीब है नहीं सरीर है, (६) बीब बुरा है सरीर बुरा है (७) तथागत मरण के बाद उत्पन्न होते हैं, (८) मरण के बाद तथागत उत्पन्न नहीं होते (९) मरण के बाद तथागत होते हैं नहीं भी होते तथा (१०) मरण के बाद तथागत न होते हैं, न नहीं होते।

बुद्ध ने इनका निर्बचन करते हुए यह व्यक्त किया कि ये सब प्रश्न धर्मयुक्त नहीं हैं और न धर्मयुक्त। ये न आदि-इच्छाचय के लिए, न असाक्षीयता के लिए, न विषय के लिए, न विरोध के लिए, न शान्ति के

लिए, न धमिञ्जा के लिए, न सम्बोधि के लिए और न निर्वाण के लिए उपयुक्त है। इसीलिए इनको धम्मोद्धत कहा गया है।

'पोट्टुपाद' ने तब व्याहृत के विषय में उनसे पूछा और बुद्ध ने उत्तर दिया कि उन्होंने (१) दुष्ण (२) कुत्तहट्टु, (३) दुत्तनिरोध तथा (४) दुत्तनिरावमामिनी-प्रतिपद् (मार्ग) को व्याहृत किया है, क्योंकि यही सावक धर्म-उपयोगी धारि ब्रह्मधर्म-उपयोगी निर्बोध विराग निरोध उपराम धमिञ्जा सम्भाषि तथा निवान के लिए हैं। 'पोट्टुपाद' न इस उद्देश का अनुमोदन किया और बुद्ध वहीं से चले गये।

बुद्ध के जाग के पश्चात् परित्राजकों न 'पोट्टुपाद' को चारों ओर से बाम्बाणों द्वारा अर्बरित करना प्रारम्भ कर दिया कि उसने एम बुद्ध का अनुमादन क्या किया बिनाका कोई धम एकता नहीं है? इसके दो-तीन दिन बाद 'पोट्टुपाद' तथा "अस हत्थिमारपुत्त" बुद्ध के यहाँ गये और सब वृत्तान्त से उन्हें अवगत कराया।

भगवान् ने कहा—“पोट्टुपाद परित्राजक धाँख बिना धरें हैं उनमें तू ही एक धाँखवाना है। कोई-कोई धमण बाह्याय धात्मा को मरने के बाद भीराय उच्छान्त-मुक्ती बनतात हैं। उनमें मैं पूछना हूँ—क्या तुम उम एच्छान्त-मुक्तवाने धात्मा का जानते हो? पूछने पर नहीं कहते हैं। क्या एच्छान्त-मुक्तवाने देवताओं के राज्य का मुने हा? पूछने पर नहीं कहते हैं। ऐसा हान पर उनका कवन प्रमाणदर्शन है। 'पोट्टुपाद' जैसे कोई पुद्गल बहे—इस अनपद में जो जगत्तकम्पाणी (वेग को परम मुन्दरी) है, जने मैं जाहता हूँ उनमें लोग पूछें—जिसे तू प्रेम करता है, जानता है बहुलविद्याणी है बाह्याणी है, वीर्य-श्री है या मूरी है? ऐसा पूछने पर 'नहीं' कहे। तब पूछें—जिसे तू चाहता है, जानते हा बहु किम सामवाणी है किम मोक्षवाणी है मम्बी, नाटी धबवा मत्ताना है कामी, क्यामा या मङ्गुर बब की है धाम नियम या मपर में रहती है? ऐसा पूछने पर बहु 'नहीं' यह उत्तर दे। तब लोग यह कहें—जिसे तू नहीं जानता बिनको तू नही देना उनको तू चाहता है उनको तू कामना करता है। इस पर

यह 'हाँ' कहे। ऐसा होने पर उस पुत्र्य का कर्म क्या प्रमाणरहित नहीं हो जाता?"

'पौटुपाब' ने इसे स्वीकार किया। इस पर बुद्ध ने यह कहा कि इसी प्रकार से उन भ्रमण-ब्राह्मणों का कर्म प्रमाणरहित है।

इसके पश्चात् बुद्ध ने कहा—“तीन प्रकार के शरीर हैं—स्वून मनोगम्य शरीर अर्थात् स्वरूप। स्वून शरीर चार महामूर्तों से बना है। मनोगम्य शरीर इन्द्रियों से पूर्ण अर्थात् प्रत्यङ्गवाना है। देवलोके में संज्ञायय होना यह अर्थात् शरीर है।

'पौटुपाब' मैं स्वून शरीर-परिग्रह से छूटने के लिए धर्म का उपदेश करता हूँ। इस तरह मार्गस्वयं हुए क विरामम उत्पन्न करनेवासे धर्म छूट जायेंगे। शोकक धर्म प्रज्ञा की परिपूर्णता तथा विपुलता को प्राप्त होंगे और यह पुत्र्य इसी धर्म में स्वयं जानकर, छात्रात् कर, प्राप्त कर बिहारेया मैं मनोगम्य शरीर तथा अर्थात् शरीर के परिग्रह से छूटने के लिए भी धर्मोपदेश करता हूँ।”

बुद्ध ने यह भी कहा कि वर्तमान शरीर ही सत्य है। 'पौटुपाब' तथा विराम इतिहासपरुत्त' दोनों ने बुद्ध के पास प्रश्रया तथा उपसम्पदा पायी।

(१०) मुमुक्षुसुत—भगवान् बुद्ध के परिनिर्वाण के चौड़े ही समय बाद आयुष्मान् धानन्द आबस्ती धामे हुए थे। वहाँ पर 'मुमु' मागवद ने उनसे उन धर्मों को सीखने की विज्ञाना प्रकट की जिसका प्रतिपादन तथा प्रतिष्ठापन स्वयं बुद्ध द्वारा हुआ था। धानन्द ने उन्हें शीघ्र समाधि तथा प्रज्ञा स्कन्धा के विषय में उपदेश दिया।

(११) केवट्टसुत—बुद्ध नामन्वा के पावारिवाअवन में ठहरे थे। वहाँ पर 'केवट्ट' मुहपति ने किसी भिक्षु द्वारा अलौकिक शक्तियों को प्रदर्शित करने के लिए बुद्ध से निवेदन किया पर बुद्ध ने इसे स्वीकार नहीं किया। इसके पश्चात् बुद्ध ने उसे उस भिक्षु की कहानी सुनायी जो अपने शक्तियुक्त से विभिन्न लोकों के देवताओं के पास गया था और सभी से यह प्रश्न किया

था कि पारों महामूत (पष्मी जल तेज वायु) नहीं निकल होते हैं। पर कोई सत्तोपवनक उत्तर न वे सका। यही उक्त कि ब्राह्मणों के देवता ब्रह्मा भी इससे धनमित्र थे। धन में वह मिश्र बुद्ध के पास आया और उपमा के द्वारा बुद्ध ने उसके इस प्रश्न का यह उत्तर दिया कि धनिर्दर्शन धनन्त तथा धत्यन्त प्रमाद्युक्त निर्वाण जहाँ है, वहाँ पारों महामूत नहीं रहते और वहीं दीर्घ ह्यस्य भ्रमु स्वूल पुमाद्युम नाम और स्व्य सर्वथा समाप्त हो जाते हैं।

(१२) लौहिकवसुत—क्रोधस बस क 'साधवतिका' नदी क तट के पास का जमीरदार ब्राह्मण महाधाम मौहित्य तथा बुद्ध क संवाद का वर्णन इस सूत्र में है। वह सभी धर्मों तथा धर्माचार्यों को झूठा मानता था। बुद्ध ने उसे इस ऐकात्मिक दृष्टि से मुक्त किया।

(१३) त्रिबिज्जसुत—क्रोधस वेस में विचरण करते हुए बद्ध अचिर नदी (राष्टी) नदी क किनारे 'मनसावट' नामक ब्राह्मण धाम में पहुँचे। उस समय वह स्वान क्रोधस के प्रमुख ब्राह्मण 'बद्धी' 'तास्स' 'पोत्तर' 'साणि' 'आनुस्सोभि' 'तोवेध्य' तथा अन्य प्रसिद्ध ब्राह्मणों का निवास स्थान था। वहाँ पर बसिष्ठ तथा भारद्वाज इन दो ब्राह्मण-तस्मा में ब्रह्ममोक्ष की प्राप्ति के विचारप्रसन्न प्रश्न को लेकर विवाह उपस्थित हो गया। दोनों बुद्ध के पास गये। बुद्ध ने दोनों के रचयिता अष्टक नामक बामदेव विस्वामित्र यमरत्नि अङ्गिरा भारद्वाज अग्निष्ठ काश्यप तथा भृगु के बारे में कहा कि उन्हें भी ब्रह्मा की सत्त्वता का मार्ग विरहित नहीं था तथा इन त्रिबिज ब्राह्मणों के पूजन अधियों को भी दत्तना ज्ञान नहीं था। बुद्ध ने उन्हें समझाते हुए कहा—“इस परिस्थिति में भी त्रिबिज ब्राह्मण ऐसा कहते हैं—मिसकी न जानते हैं, जिसकी न देखते हैं, उसकी सत्त्वता के लिए मार्ग का उपदेस करते हैं।

जिस प्रकार अचिरवती नदी जल से सबासब भरी हो धीरे धीरे किनारे पर बैठे कौरों के पानी पीन क्षामक हो। उसी समय पार जाने की इच्छा वाला पुरुष धाँसे धीरे इस किनारे पर खड़े होकर दूसरे तीर का आह्वान

करे कि हे सीर तुम बने धामो । तो क्या नबी का पार (दूमर किनारा)
 इस पार या धामेना ? इसी प्रकार 'इन्ड ह्वेम' (इन्द्र को पुकारता हूँ)
 धारि कहने से क्या वे बने धामेने । इस तरह इनके धामाहत में कोई
 धर्म नहीं है ।"
 इनके परवान् बुद्ध ने धम्म मार्ग का उन्हें उपदेश दिया ।

२ महाव्रग

(१४) महापरिनिब्बानसुत्—मगधान (मगधान) पुराण पुस्त्या के अरि
 को कहत है । धामस्ती के जेतवन में कते मये इस मूत्र में धनी वैहासिक
 विपश्यी बुद्ध के अति गोष यम में धाने का महाम मूह्याय प्रपञ्चा
 बुद्धत्व या त्त धर्मबन्ध-प्रवर्तन देवता-साक्षी धारि की कथा है जो बुद्ध
 जीवनी के ही धामार पर बर्णित है ।

(१५) महाभिक्षानसुत्—उपनिषद् युग म प्रजापान के लिए
 प्रसिद्ध कुष वेम के कम्मामबन्ध नामक त्रिवम (कस्त्रे) म यह मूत्र धामन्व
 से भगवान् न कहा । इनम बुद्धदर्शन के मुख्य सिद्धान्त प्रतीयसमुत्पाद,
 ज्ञानात्मबाध अनारमबाध तथा प्रज्ञाविमुक्ति धारि का बचन है ।

(१६) महापरिनिब्बानसुत्—यह मूत्र बुद्ध की जीवनी के अन्तिम
 वर्ष (४८३ ई० पू०) का पूरा विवरण देता है । बद्ध राजपुत्र के पुत्रकू
 पर्वत पर रहते हैं फिर वैदस बध पाटलिप्राम धाते ह जहाँ मगध के
 महामगधी गुनीब धौर बर्षकार निबन्धविद्या (बज्रिया) स रसा पाने
 के लिए पाटलिपुत्र (पटना) नगर बसा त्त ब फिर वैशाखी में जीवन्
 वैदस बनने कुमीनारा' (कसया) जा वैमाल की पूजिमा को निर्वास
 प्राप्त करते हैं ।

निबन्धियों पर कई बार धाममध बर धनक्य हो राजा धामाप्रपु
 ने धपने मन्त्री बर्नार ब्राह्मण की भगवान् बुद्ध के पाण मुद्रकूट पर्वत पर
 यह कहकर भेजा—“ब्राह्मण भगवान् के पाण जाधा धौर धाकर बहो—
 मन्त्रे राजा इन वैशाखी 'बज्रिया' को ना चाहता है

मगवान् बीसा तुमसे बोले उसे मादकर मुझसे कहो तथापि भयवार्ध नहीं बोला करते ।”

यह श्रावण पाकर बर्बकार मगवान् बुद्ध के पास मूधकूट पर्वत पर पहुँचा और उससे जाकर राजा घमातवान् के सम्बन्ध की कथा । उस समय भावुष्मान् धानन्द मगवान् के पीछे सके हो उन्हें पंखा मस रहे थे । मगवान् ने धानन्द को सम्बोधित करके कहा—

गण के अपराजेय होने के कारण

१ “धानन्द क्या तुमने सुना है—बग्गी सम्मति क मिए बराबर बैठन (सन्निपाठ) करते हैं तथा सन्निपाठ-बहुत है ?”

“हाँ भन्ते ।”

“धानन्द, जब तक बग्गी बैठन करते रहेंगे सन्निपाठ-बहुत रहेंगे जब तक उनको बुद्धि ही समझना हानि नहीं ।

२ धानन्द क्या तुमने सुना है—बग्गी एक हो बैठन करते है एक हो उत्थान करते है एक ही करणीय की करते है ?

“हाँ भन्ते ।”

“धानन्द जब तक बग्गी

३ धानन्द क्या तुमने सुना है—बग्गी घप्रज्ञप्त (वैरजानुनी) को प्रज्ञप्त नहीं करते प्रज्ञप्त का उच्छेद नहीं करते । जैसे प्रज्ञप्त है, वैसे ही प्राचीन बज्जि-धर्म को ग्रहण कर बर्तते है ?

“हाँ भन्ते ।”

“धानन्द जब तक बग्गी

४ धानन्द क्या तुमने सुना है—बज्जियो के जो बुद्ध है, उनका वे मत्कार करते है, उन्हें मानते है पूजते है तथा उनकी गुणने योग्य बात स्वीकार करते है ?

“हाँ भन्ते” ।

धानन्द जब तक बग्गी

५ भानन्द, क्या तुमने सुना है—जो वह कुल-स्त्रियाँ हैं कुम-कुमारियाँ हैं उन्हें वे चीनकर जबरदस्ती नहीं बसाते ?
 “हाँ मन्ते ।”

६ भानन्द, क्या तुमने सुना है—बज्जियों के नगर के भीतर या बाहर के जो शैत्य (शौरा) हैं वे उनका सत्कार करते हैं मानते हैं पूजते हैं उनके लिए पहले किये पड़े दान का पहले को यपी बर्मानुसार बलि को लाप नहीं करते ?”
 “हाँ मन्ते ।”

७ भानन्द क्या तुमने सुना है—बज्जी साथ प्रहृतीं की प्रक्री तरह शानिक रसा करते हैं । किसलिए ? भविष्य में प्रहृत् राज्य में पावे तथा पाये हुए प्रहृत् राज्य में सुख से बिहार करें ।
 “हाँ मन्ते ।”

“भानन्द जब तक बज्जी जब भयवान् बुद्ध ने बर्षकार ब्राह्मण को सम्बोधित किया—“ब्राह्मण ही समझना चाहिये हानि नहीं । बर्षकार ने कहा—“हे गौतम इनमें से एक भी अपरिहानीय पम से बज्जिया की बृद्धि ही समझनी होगी सात बनों की ता बाग ही क्या । राजा को उपसाप (रिखन) या आपस में फूट की छोड़ बुद्ध करना ठीक नहीं ।” ऐसा कहकर वह वहाँ से चला गया ।

पट्टनवा के अनुसार ब्राह्मण ने सीटकर मारी बात राजा से कही । राजा इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि उपसाप का शौरा मर्हंगा है इनलिए फूट करने का रास्ता पकड़ना चाहिये । विधानों के रूप में राजा से समझा करके निर्वासित हा बर्षकार वैश्यानी पहुँचा घोर बज्जियों ने उसका विरवास किया । चार बनों में ही उसका एसी फूट पैदा कर ही कि

वा घाबरी भी एक साब रास्ता नहीं चलने लगे। और इस प्रकार से इस प्रथम मण्डलन को निर्बल करके घनालसनु न उसे पराजित कर दिया।

अन्तिम यात्रा के लिए बुद्ध राजगृह से निकले। इनके पश्चात् इस मूत्र में राजगृह और नागन्दा के बीच 'अम्बसट्टिका' (सिमाव) में आयुष्मान् धारिपुत्र द्वारा व्यक्त किये गये बुद्ध के प्रति सुन्दर उद्धारों का कथन है, पर यह प्रसंग ही जान पड़ता है, क्योंकि उसके पहले ही धारिपुत्र का नागन्दा में देहावसान हो चुका था।

पाटलिपुत्र की ओर

'अम्बसट्टिका' में ठहर कर बुद्ध पाटलिग्राम (पटना) की ओर चले। वहाँ के उपामका ने नये प्रायमयापार (अतिविद्यासा) में प्राप्त विद्या बुद्ध का उपदेश सुना। वहाँ महाचार के साथ तथा बुद्धाचार की हानि पर रात भर उनका उपदेश होता रहा।

उस समय सुनील और बर्षकार ममब महामात्य बन्धियों को रोकने के लिए पाटलिग्राम में नगर बसा रहे थे। दोनों महामात्यों ने बुद्ध की भावना का निमंत्रण दिया। मगवान् ने स्वीकार किया। भोजनोपरान्त दोनों मन्त्री मगवान् के पीछे-पीछे यह सोचते चले—जिस द्वार से ममग गौतम निकलेगे उसका नाम 'गौतम' द्वार होगा तथा जिस बाट से गंगा नदी पार करेगी उसका नाम 'गौतम' तीर्थ होगा। वही हुआ।

वदासी की ओर

मया तट से बीसानी जाते समय बुद्ध कौटिग्राम में ठहरे और वहाँ पर उन्होंने भिक्षुओं की उपदेश दिया। इनके पश्चात् वे 'नादिका' (मातुका) पय और वहाँ भी यम के प्रादुर्भाव पर उनका व्याख्यान हुआ। वहाँ से बुद्ध बीसानी गये और अम्बपानी पबिका के आश्रय में ठहरे। अम्बपानी ने सुना कि मगवान् आकर मेरे आश्रय में ठहरे हैं। तब वह सुन्दर सुन्दर धाना को चुनवाकर, उन पर बैठ, बीसानी से निकली और मगवान्

के ठहरने के स्थान पर यमी। वहाँ पहुँच उन्हे प्रतिबन्धन करके, वहाँ एक घोर बैठ गयी घोर भयभानु के उपदेशों का उसने श्रवण किया। धर्मिक कथा से संवसित होकर उसने दूसरे दिन के भोजन के लिए अपने यहाँ बुद्ध को निर्ममण दिया। भगवान् ने मीन हो उसे स्वीकार किया।

लिच्छवियों (बम्बियों) ने भी भयभानु के प्रागमन की बात सुनी। वे भी सुन्दर-सुन्दर यानों पर घास-हो बैधानी से निकसे। उनमें से कोई कोई मीन मीन बर्ष मीन बस्त्र तथा मीन घनकारवाले वे तथा दूसरे दूसरे बर्षवाले। घम्बपासी ने तरुण लिच्छवियों के घुरों से बुरा बर्षकों से बर्षका तथा जुषों से जुषा टकरा दिया। उन लिच्छवियों ने उससे इसका कारण पूछा। उसने कहा—“धार्मपुत्रों क्योंकि मैंने भिक्षु-संग के साथ कम के भोजन के लिए भयभानु को निर्ममण किया है। लिच्छवियों ने कहा—“एही हजार कार्यापण लेकर यह भोजन हमें कराने दे। इसका उत्तर घम्बपासी ने दिया—“धार्मपुत्रों, यदि बैधानी जनपद भी दे दो तब मी इस महान् भोजन को मैं न हूँगी।” लिच्छवियों ने चुटकी बजाते कहा—“घटे, हमें घम्बिका ने जीत लिया घटे, हमें घम्बिका ने बर्षित कर दिया।

वे लिच्छवी भयभानु के दर्शनार्थ घम्बपासी-जन को मय। भयभानु ने दूर से ही उन्हें घाते देखकर कहा—“भवनाकम करो भिक्षुओं लिच्छवियों की परिपद् को भवनाकम करो भिक्षुओं लिच्छविका की परिपद् को। भिक्षुओं इस परिपद् को आयस्त्रिष देव-परिपद् समझो। लिच्छवियों ने दूसरे दिन के भोजन के लिए भयभानु को निर्ममण किया जिसके सम्बन्ध में बुद्ध ने यह उत्तर दिया कि उसके लिए वे घम्बपासी को बर्षन दे चुके हैं।

धर्मो दिने भोजन कराकर घम्बपासी ने उस धाराय को बुद्ध-भिक्षु भिक्षु जन को दे दिया।
बेभुवप्राम

बनी घा गयी। जब बुद्ध बेभुवप्राम (बेभुवप्राम) में पहुँचे तो उन्होंने भिक्षुओं को जगह-जगह बर्षावाग करने के लिये कहा घोर एवम बेभुवप्राम

में टहरे। सर्पावास के समय मगवान् को कड़ी बीमारी हो गयी परन्तान्तक पीड़ा होने लगी। मगवान् ने दृढ़ मनोबल से उसे सहा। बीमारी से उठने पर धानन्द ने प्रसन्नता प्रकट की—“मन्ते मगवान् को मैंने सुखी देखा प्रच्छा देखा। मगवान् को बीमारी में मुझे विद्यार्थे नहीं मूल रही थी।”

“धानन्द मिश्र-मंत्र मुझसे क्या चाहता है? मैं बिना धन्य-बाहुर किम् (छियावे) धर्म-उपदेन कर दिये ह। धानन्द उपागत की कोई धार्मिक-सृष्टि (रहस्य) नहीं है। जैसे पुराना छकड़ा बाँध-बूँधकर बसाये, जैसे ही उपागत का शरीर भी बाँध-बूँधकर बस रहा है। धानन्द धारम-धरम (स्वावलंबी) तपरदारण धर्मधारण होकर बिहरो।”

निर्वाण की तैयारी

मगवान् आपामर्षस्य में धानन्द के साथ बिहरने गये। वहाँ उन्होंने धातु-मंस्कार (जीवनपक्ति) छोड़ दी। मूचाल हुआ। मगवान् ने अपने देवों स्वानों का स्मरण करते हुए कहा—“रमणीय है राजगृह का गीतम-पद्योव 'शोरपपाठ' बीमार-मरत की बगल में सप्तपर्षी गहा ऋषिगिरि की बगल में कालमिता धीनवन के सर्प-सौमित्रिक पहाड़ तपाधराम वेगवन का कमन्दक-निवास जीवकाप्रवन मद्रकुम्भि मृगबाव। इन इन स्वानों में भी धानन्द मैं यह कहा था—धानन्द जिसने चार ऋषिपाद साथ हैं, वह चाहे ता कल्प भर टहर सकता है या कल्प क बने काल तक। मैं भी चार ऋषिपाद साथ हूँ यदि मैं चाहूँ तो कल्प भर टहर सकता हूँ या कल्प के बने काल तक। यदि धानन्द तुमने याचना की होगी ता तबामत दो ही बार गुम्हारों बाण का प्रस्वीकार करते तीसरी बार स्वीकार कर लने। इसलिए, धानन्द यह तुम्हारा ही पुण्य है गुम्हार ही धपराव है।

धानन्द क्या मने पहम ही नहीं कह दिया—‘सभी त्रिभों स जुदाई विद्योय तथा धर्म्यबाभाव होगा है। धानन्द मा वह कहीं मिल सकता है कि जो उत्पन्न मृत सस्यत तथा नागवान् है वह मन्द न हो।’

संभव नहीं। प्राणन्द, जो यह तयागत ने जीवन-संस्कार छोड़ा तयाग तथा प्रतिनिधित्व किया तयागत ने विस्मृत पक्षी बस्त नहीं है। पक्षी ही प्राज से तीन मास बाद तयागत का परिनिर्वाण होगा। जीवन के लिए तयागत क्या फिर बमन किये को निरन्तरे ? यह संभव नहीं। प्राणो प्राणन्द जहाँ महाबन कूटागारस्थाना है, वहाँ चले।”

महाबन कूटागारस्थाना में आकर उन्होंने धामुष्मान् प्राणन्द से कहा—
 बैद्यानी के सभी विद्युओं को उपस्थानस्थाना में एकत्रित करो। वहाँ आकर बुद्ध ने विद्यु पक्ष को उपदेश दिये—“मैंने जो धर्म का उपदेश किया है तुम लोग प्रच्छी तौर से सीखकर उसका सेवन करना भावना करना भावना बड़ाना जिससे कि यह ब्रह्मचर्य चिरस्वामी ब्रह्मचर्यवर्तमान ब्रह्मचर्यवर्तमान लोकात्मिकात्मा तथा वेद-मनुष्यों के धर्म-हित-सुख के लिए हो।” और इसी प्रसङ्ग में उन्होंने उस धर्म का आस्वादि भी किया। उन्होंने कहा—“हम विद्युओं तुम्हें कहता हूँ—‘संस्कार नाश होनेवाले हैं प्रमाद-रहित ही आचार्य का सम्पादन करो अचिरकाल में ही तयागत का परिनिर्वाण होगा प्राज से तीन मास परचात् तयागत को परिनिर्वाण की प्राप्ति होगी।”

इसके बाद बुद्ध पूर्वाह्न के समय बैद्यानी में विद्युत्कार करके भोजनो पटन्त नागावसाहन (हाथी को तरह सारे शरीर को बुझाकर लेटना) से बैद्यानी को बेलकर धामुष्मान् प्राणन्द से बोले—“बना भद्रप्राम धामुष्मान् जम्बूनाम तथा भोजनगर चले। भोजनगर आकर-वहाँ के प्राणन्द रक्ष में विहार करते हुए धर्म (बुद्धोपदेश) को चार कसौटियाँ (महाप्रदेश) उन्होंने बतानी—

बुद्धोपदेश की चार कसौटियाँ

(१) “विद्युत्वा यदि कोई विद्यु देना कहे—‘मैंने इने भववान् के बुद्ध ने मुला मुल से ग्रहण किया है यह धर्म है यह धर्म है यह धर्म है यह धर्म है’ तो विद्युओं उस विद्यु के भाषण का न प्रविनन्दन करना

न निन्दा करना । एसा न करके उन पर-स्यवानों का शस्त्री तरह सीस-कर, सूत्र से तुलना करना विनय में देखना । यदि सूत्र से तुलना करने पर तथा विनय में देखन पर वह न सूत्र में उतरे, न विनय में विश्वासी वे तो विश्वास करना कि शबर्य ही वह भगवान् का वचन नहीं है, इस भिक्षु का ही दुर्गुणित है । ऐसा होन पर, भिक्षुओं उसको छोड़ देना । यदि उपयुक्त तुलना में वह सूत्र तथा विनय दोनों में उपस्थित हाँ तो यह विश्वास करना कि शबर्य ही वह भगवान् का वचन है और उसे धारण करना ।

(२) धीर, भिक्षुओं यदि कोई भिक्षु ऐसा कहे कि शमुक भाषास में स्वबिग-मुक्त प्रमुक्त-मुक्त भिक्षु-संघ विहार करता है और मैंने उसके मुख से सुना है कि वह धर्म है यह विनय है यह शास्त्र का शासन है तो विश्वास करना कि शबर्य ही वह भगवान् का वचन है इसे संघ में सुगुहीत किया ।

(३) धीर, भिक्षुओं यदि कोई भिक्षु ऐसा कह कि शमुक भाषास में बहुत से बहुभूत प्रागतागम धर्मधर, विनयधर तथा मात्रिकाधर भिक्षु विहार करते हैं यह मैंने उन स्वबिरों के मुख से सुना और ग्रहण किया है तो विश्वास करना कि शबर्य ही वह भगवान् का वचन है इसे संघ न सुगुहीत किया ।

(४) धीर, भिक्षुओं यदि कोई भिक्षु ऐसा कहे कि शमुक भाषास में एक बहुभूत प्रागतागम धर्मधर, विनयधर तथा मात्रिकाधर भिक्षु विहार करता है और यह मैंने उस स्वबिर के मुख से सुना है मुख से ग्रहण किया है तो विश्वास करना कि शबर्य ही वह भगवान् का वचन है इसे संघ न सुगुहीत किया ।”

बड़ोरधम की सत्यता को जाँच क लिय बुद्ध न इन्हीं चार कसौटियाँ को बनाया ।

वहाँ से वे पाशा गये और बुद्ध कर्मारपुत्र (सोनार) क आश्रम में ठहरे । बुद्ध न योजन का निर्माण किया उत्तम जाघ (भोग्य) बहुत सा गुरुरमार्दव रँमार करमा ।

बुद्ध न भात को खाकर भगवान को खून गिरल की कड़ी बीमारी उत्पन्न हुई, मरणालोक पीड़ा होन लयी । भगवान् ने बिना बुर्जिय हुए सब सहन

किया। फिर कुशीनारा (कसया) को और बचम। मयवान मार्ग में हूँ एक बूढ़ के नीचे मरे। जानन्द ने सबाटी बिछा बी।

‘मेरे सिये पानी लावो प्याया हूँ पीऊँगा।’

जानन्द पानी माय।

उसमें ‘आभारकामाम’ के शिष्य ‘पुक्कुस मस्सपुव’ ने प्रसन्न हो ३० वर्ष का एक भाम भगवान् को और एक जानन्द को बीछा दिया।

उसके जाने के पश्चात् जानन्द ने उस भाम से मयवान् के शरीर को बीछ दिया। उस समय बूढ़ का शरीर देखीप्यमान था। इसे देखकर जानन्द ने कहा—“कितना परिशुद्ध तबागत का बर्ण है ?” बूढ़ ने उत्तर दिया—“एसा ही है जानन्द एसा ही है जानन्द। वा समय म जानन्द तबागत के शरीर का बर्ण अत्यन्त परिशुद्ध बात होता है। किन ही समय म ? जिस समय तबागत में अनुपम सम्यक सम्बोधि का साक्षात्कार किया और जिस उक्त तबागत उपाधि उचित निर्वाण की प्राप्ति होते हैं। जानन्द आज रात के विछने पहर ‘कुशीनारा’ के उद्वर्तन नामक मस्सा के घासघन में बीछ शास बूढ़ों के बीच तबागत का परिनिर्वाण होमा। आजो जानन्द वहाँ ‘बकुन्धा’ गयी है वहाँ बसो। अच्छा कहकर आयुष्मान् जानन्द ने मयवान को उत्तर दिया। वहाँ जाकर तबा स्नान करके बड धरु गये वे वे जानुम्मान् बुन्दर से बीने—“बुन्दर मेरे सिये चौगती सबाटी बिछा बा। बर गया हूँ लट्टू गा। इसके पश्चात् उन्होंने जानन्द से कहा—‘कोई यदि बुन्दर को फणकारे तो कहना—‘आबुस साम है तुम तुमन सुत्ताज कमाया औ कि तबागत तैर विहपात की भोजन कर परिनिर्वाण का प्राप्ति हुए। यह ही विहपात समान-कथवान है। कीन से बी ? जिस विहपात की भोजन कर तबागत अनुत्तर सम्यक सम्बोधि की प्राप्ति करते हैं और जिस विहपात की भोजन कर तबागत अनुवादिषय निर्वाण-आणु की प्राप्ति करत है।

हित्थवती नदी का पार करने बूढ़ कुशीनारा के मस्सा के घासघन

— में — के । अच्छा कहकर आयुष्मान् जानन्द को आमन्त्रित किया—

“आनन्द यमक (जुड़वें) शाला के बीच में उत्तर की ओर गिरहाना करके मक्क (चारपाई) बिछा दो बका हूँ भेटूंगा।”

तब भगवान् दाहिनी ओर करबन् करके सिंह-उपमा में सेटे । उस समय वकाल ही में वे जोड़ घाल ब्रुव सिने हुए थे । तत्प्रागत् की पूजा के लिए उनक पुण्य भगवान् कं दारीर पर बिसरते थ ।

भगवान् ने कहा—“धर्यासु कुसपुर्वों के लिए ये चार स्वान दर्शनीय हैं, बैराग्य-दायक है—(१) जहाँ तप्रागत पया हुए (मुम्बिनी) (२) जहाँ तप्रागत बुद्धरक का प्राण्ट हुए (बोबगया) (३) जहाँ तप्रागत ने यर्मक-प्रवर्तन किया (घारनाथ) और (४) जहाँ तप्रागत निर्वाण को प्राण्ट हुए (कुपीनारा) । धर्यासु मिश्रु मिश्रुणियाँ उपासक-उपासिकायें यहाँ आबगी ।

आनन्द सं कषर मुन कुमीनारा' के मस्त स्त्री-ग्रहय तप्रागत को बन्दना करने दास । परिघाजक मुमद्र ने दर्शन करना चाहा । आनन्द न कहा—“गही आधुम सुभद्र तप्रागत को तकसीफ मत बी । भगवान् बके हुए है ।

आनन्द के मना करत को तप्रागत न मुन लिया । उम्होंन उसे बुसाया और बिना चार मास का परिबास बराय मुमद्र को उपसम्पश (मिश्रु शीक्षा) पी । वे भगवान् के अन्तिम शिष्य हुए । अन्त में बुद्ध न कहा—“मिश्रुमा अब तुम्हें कहता हूँ सारे संस्कार (कृतवन्तु) नाघवान् है आनस न कर बीबन-नक्य का संपादन करी । यही तप्रागत का अन्तिम बचन है ।”

भगवान् निर्वाण को प्राण्ट हुए । अबिरागी मिश्रु बहिँ पकड़ कर रामे मव । आनन्द ने 'कुमीनारा' क मस्त्रा का मूपता बी । वे बड़ बूमबाम में नृप्य-बाध द्वारा भगवान् के दारीर का सत्याग करते नगर के बाहर-बाहर उत्तर से आकर, उत्तर द्वार से प्रबस कर, पूबद्वार म निकल नगर के पूर्ब द्वार, जहाँ नृकुट्ट-बग्यन नायक मस्त्रों का बरय था बहाँ से गय । बिता बसान के लिए महाकाश्यप के पाषा से जाने की प्रतीक्षा की यपी । महाकाश्यप ने एक कंबे पर बीबर कर भंजनी जोड़ तीन बार बिता की परिष्कमा की तथा उनके हाथ भगवान् के बरगों में शिर से बन्दना करत पर बिता अब उठी । अजातमनुष, बैदानी क मिश्रुउचियां में कपिसबस्तु व शाक्यों न, 'अस्तक्य'

के 'बुधियों' से, बळीय (बैतिया) के ब्राह्मणों ने 'कुसीनाय' के मन्त्रों के पास दूठ भंजकर स्तूप बनाने के लिए बूढ़-बाणु का माँगा । कुसीनाय के मन्त्रों से घी उत संवा और गनों से कहा—“ममबाम् हमारे बामशेष में परिनिवृत्त हुए, हम ममबाम् के शरीरों का माग नहीं बेने । वहाँ पर झगड़ा होल की समावना हो गयी पर होल ब्राह्मण ने समझा-बुझाकर उन्हें उनमें बाँट दिया । सबसे उन पर अपने-अपने यहाँ स्तूप बनवाए । बाँटनेवासे कुम्भ पर होल ने स्वयं स्तूप बनवाया । 'पिप्पसीवन' के मीर्म बेर से आये से । वे बिता के कीमर्क की ही स्तूप बनाने के लिए म मय ।

(१७) महादुस्सनसुत—इसम बळपठी राजा के जीवन का बर्णन है ।

(१८) बानवसमसुत—इस सूत्र में मन्त्रों की मणि पर प्रशाम आता गया है ।

(१९) महापोबिम्बसुत—म शक द्वारा बूढ़-धर्म की प्रवर्णा की मयी है साम ही बूढ़ के आठ पुत्र तथा उनके धर्म की महिमा का व्याख्यान है ।

(२०) महासमयसुत—इसमें उस समय के प्रसिद्ध बेवतात्रा के नाम-शाम आदि लिखे हैं ।

(२१) लक्ष्मणसुत—इसम इन्द्र द्वारा बूढ़ से किये धम प्रदन किये गये हैं और लक्ष्मण पञ्चविंश का निम्बक लक्ष्मणराज की बन्वा से प्रेम का बर्णन है ।

(२२) सतिपुत्रानसुत—यहाँ पर आपानुपस्पना बेवतानुपस्पना, बिठानुपस्पना तथा बर्षादुनस्पना आदि चार स्मृति-ग्रन्थानों का व्याख्यान है ।

(२३) पायातिराजकल्पसुत—कोणमराज प्रसेनजित् के धर्मपुत्र मिथु कुमार काश्यप सेतम्या के आशीरवार दक्षिण श्यामासी के पीर नासिदक (मीनिगवासी) बिचारों का समाधान करने का प्रयत्न करते हैं । सेतम्या के नाकाविर्ग राजग्य के जन बमान की बात जैनायम के 'उपपेठकइव' में भी है । 'वेगवइय' 'पायासी' का ही नाम है । दोनों में 'उतम्या' के

राज्य की ओर नास्तिक (मौलिकवादी) बतसाया गया है। जैन सूत्र ने उसे अपना मत छोड़ जैन धर्म स्वीकार करने की बात लिखी है।

एक बार भिक्षु कुमार काश्यप कोसल देश में पाँच सौ भिक्षुओं के साथ बिचरते उस देश 'सेतव्या' (इरोताम्बी) नगर में पहुँचे और शिवपावन में ठहरे। उस समय पायासी राज्या (मौलिक राजा) कोसल राजा प्रसेनजित् द्वारा यह 'सेतव्या' का स्वामी होकर रहता था। ब्राह्मण गृहस्थों की आँखें देख करण जान यह भी कुमार काश्यप के पास गया और बोला— हे काश्यप मैं इसी सिद्धान्त को मानता हूँ कि यह साक भी नहीं है परलोक भी नहीं है क्योंकि मरे नहीं सीटते धर्म में आस्तिकों को भी मरण की इच्छा नहीं होती मृत शरीर में यह बिह्व नहीं मिसता कि जीव यहाँ से निकला है।

“मेरे नीकर सोम ओर को पकड़कर मरे पास आते हैं। उनको मैं यह आदेश देता हूँ कि इस पुरुष को जीते भी एक बड़ हड में डाल मुँह बन्द कर, गीस चमड़ से बाँध गीसी मिट्टी सेपकर पूरने पर रख आँध लगाओ। वे बीसा हो करते हैं। जब मैं जान सेता हूँ कि वह पुरुष मर गया हुआ तब मैं उस हड की उतार धीरे से मुँह खोलकर (इस आगा से) देखता हूँ कि जीव को बाहर निकसते देखूँ। किन्तु मैं यह नहीं देखता। इस कारण मैं यह सोच भी नहीं है परलोक भी नहीं है जीव मरकर पैदा नहीं होते तथा अच्छे धीरे बुरे कर्मों का कोई फल नहीं होता।”

‘राज्या मैं तुम्हीं से पूछता हूँ कि दिन में सोते समय कभी स्वप्न में तुमने रमणीय आराम रमणीय बत रमणीय भूमि रमणीय पुष्करिणी नहीं देखी है?’

“हाँ पत्नी है।”

“उस समय क्या तुम्हारे यहाँ कुबड़ बौल स्थिरी तथा कुमारियाँ पहरें पर नहीं होतीं।”

“मे पहरें पर उस समय होती हैं।”

“वे सब क्या तुम्हारे जीव को उद्यान के लिए निकसते धीरे भीतर आते देखते हैं?”

“नहीं हूँ काश्यप।”

शुद्धिबल दिखासाना चाहिए। यमज नीलम जापा मार्प प्राबे में भी जापा मार्प बाई। हम दोनों मिलकर शुद्धिबल दिखावें। यदि यमज नीलम एक शुद्धिबल दिखावेंगे तो मैं हो दिखाऊँगा। यह सुन कर एक दिन मैं अश्वेत पापिकपुत्र के आग्रह को मया। घोर बैशाखी के सोनों का एक भारी जमपत्र वहाँ पर एकत्रित हो गया। यह सब देख सुन कर अश्वेत पापिकपुत्र सन्निह होकर वहाँ से चला गया। सोय उसे बुझाने मने पर वह नहीं आया।”

ईश्वर निर्माणवाद का खंडन

इसी मूख में आपे कहा है—“जो यमज-बाह्यज ईश्वर या ब्रह्मा के सृष्टि-कर्त्तापन के गठ को खेप्ट बतलाते हैं उनके पास जाकर मैं कहता हूँ—क्या सचमुच आप लोग ईश्वर के कर्त्तापन को खेप्ट बतलाते हैं? मेरे ऐसा पूछने पर उत्तर न देकर भूमि से पूछने लगते हैं। मैं कहता हूँ—बाबुलौ बहुत दिनों के बाद कोई समय जायेगा जब इस लोक का प्रलय होया जब इस लोक की उत्पत्ति होती है। उसके (ब्रह्मा) मन में होता है—मैं ब्रह्मा महाब्रह्मा विजेता अभिहित सर्वज्ञ बसकर्त्ता ईश्वर, कर्त्ता निर्माता स्वामी भूत तथा सबिष्य के प्राणियों का पिता हूँ। येन ही इन प्राणियों की उत्पन्न किया। सो क्यों मेरे ही मन से उत्पन्न होकर ये प्राणी यहाँ जाये हैं? घोर जो प्राणी पीछे उत्पन्न होते हैं, उनके मन में भी होना है—यह ब्रह्मा महाब्रह्मा ईश्वर कर्त्ता, पिता है। इसने हम लोगों को उत्पन्न किया है। इन प्रकार आप लोग ईश्वर का कर्त्तापन बतलाते हैं।

इस प्रकार से ब्रह्मा के सृष्टिकर्त्ता होने की कल्पना का यहाँ खंडन किया गया है।

(१५) अनुम्बरिकसीहनादसुत्त—इसमें वास्तविक उपस्यार्थों का वर्णन है।

१ मित्तानी उपविषद्—एकौण्हं बहु स्याम् ।

(२६) अकलवत्तिसीहनावसुत—इस सुत में स्वावसम्भन अकलवत्तियत्त निर्धनता सभी पापों की जननी 'पापों से आयु तथा वर्ण का ह्रास' 'पुष्य से आयु तथा वर्ण की वृद्धि' और भिक्षुओं के कर्तव्य का व्याख्यान है।

(२७) अम्यग्गसुत—इस सुत में बन्धित विषय है—प्रसव के बाद सृष्टि, प्राणियों का प्रथम आहार, स्त्री-गुरु का मेघ वैयक्तिक सभ्यता का आरम्भ आगे वर्णों का निर्माण राजा की उत्पत्ति ब्राह्मण वैश्य पुरुष की उत्पत्ति भ्रमण की उत्पत्ति अम्म नहीं कर्म की प्रधानता।

(वैयक्तिक सम्पत्ति)—प्रादिकाल में खाने-पीने की चीजें स्वयं होती थीं। तब किसी मालगी के मन में यह आया—'आम-मुबहु दोनों समय बाल भान के लिए खाने का काम क्यों करें? क्यों न एक ही बार घासि (घान) लाऊँ। वह प्राणी एक ही बार खाया तब कोई दूसरा प्राणी उस प्राणी के पास गया आकर बोला—'आजो घासि भाग पर्येँ।' "हम तो एक ही बार खाये।" देखा-देखी वह भी एक ही बार बार बिनो के लिए खाया। फिर घासि बाँटन लग दो क्षेत्र में मेंड़ बाँटने लगे। सासणी बादमी न अपनी भाग की रसा करते हुए दूसरे के भाग को चुराकर खा लिया। दूसरी बार भी उसने दूसरे के भाग को चुराकर खा लिया। सोमों ने उसे पकड़ लिया। कोई हाथ से मारने लम कोई बंडे से कोई माठी से। इसके बाद बोरी निम्बा मिथ्या-भाषण और बंडकर्म होने लगे। तब प्राणी इकट्ठा हो कहने लग—"प्राणियों में पाप प्रकट हुए, जो कि बोरी है। आजो हम लोग एक ऐसे आदमी को निर्वाचित करें, जो हम सोपों को ठीक से खाये। हम उसे घासि का भाग देंगे। महाजनो द्वारा सम्मत (निर्वाचित) होने से उसका नाम 'महासम्मत्' पड़ा—'सभिय' दूसरा नाम पड़ा। वह धर्म-से दूसरों का रंजन करता था अथ 'राजा' यह उसका तीसरा नाम पड़ा।

(२८) सम्पसावनीपसुत—में यह बन्धित है कि परम भ्रम में बुद्ध तीनों कार्यों में अनुभव है और सर्वथा ही उनमें अभिमान-गुण्यता खूटी है। साथ ही यहाँ बुद्ध के उपदेशों की विधेपताओं का भी उल्लेख है।

(२९) पातादिकमुत्त—इसे बुद्ध ने छापय देश में 'बेभम्भा' नामक स्वान में कहा था। 'निगण्ठावपुत्त' (जैन तीर्थंकर) की उसी समय 'पावा' में मृत्यु हुई थी। और इसके पश्चात् उनके अनुयायियों में फूट हो गयी थी। उनके दो पक्ष हो गये थे और वे आपस में खूब लड़ रहे थे। बुद्ध ने यह खबर जानकर को ही। वे इसे लेकर बुद्ध के पास गए। तबरात ने विचार के सहाय योग्य पुरुष तथा धर्म आदि का ध्यास्थान करते हुए बुद्ध के उपदिष्ट धर्मों तथा बुद्धवचन की कसौटी को बताया। उन्होंने यह भी कहा कि बुद्ध कासबाही तथा यथार्थवादी हैं और इसी प्रसंग में बध्माकृत तथा बध्माकृत एवं पूर्वान्त और अपराज्य वर्णनों को बताते हुए स्मृति-ग्रन्थानों का उन्होंने उपदेश किया।

(३०) लसणपमुत्त—में महापुरुषों के बसीस लक्षण वर्णित हैं। साथ ही यह भी बताया गया है कि किन्तु कर्म-विपाक से इन लक्षणों में से कौन-सा लक्षण उत्पन्न होता है।

(३१) सिगासोपादमुत्त—राजपूह के बेषुवन कलन्दकनिवाप में मापित यह मुत्त है। इसमें गृहस्थों का कर्तव्य बतलाया गया है, इतीतिर इष्टे गृहस्थों का विनय भी करते हैं।

'सिगास' राजपूह का वैश्य-मुन था वह सास-सवरे उठकर सभी दिशाओं को हाथ जोड़कर नमस्कार करता था। भगवान् के पूजने पर उसने कहा—
"भयले समय पिता ने कहा था—तस दिशाओं को नमस्कार करना। पिता के बचन को मानकर मैं नमस्कार करता हूँ।" भगवान् ने कहा—
"ऐसे नहीं। कार कर्मफलेषों के नाश से इस लोक तथा परलोक की विजय होती है।
(१) प्राणी न मारना (२) चोरी न करना (३) ध्वनिचार न करना
(४) झूठ न बोलना।

सम्पत्ति नाश के कारण है—(१) शराब आदि का सेवन (२) चोरते की चोर, (३) समाज-नाश-उपाया (४) जुआ, (५) बुरे मित्र की मित्रता (६) कामस्य में केंद्रना। इनमें से हरेक से अपिष्ट होता है।" इसमें आये बतलाना है—

“चार मित्र-कर्म में सबु हैं—(१) परषनहारक (२) बातूनी (३) सदा मीठा बोलनेवाला (४) अपाय (हानिकर) बात में सहायक ।

सच्चे मित्र में चार बातें होती हैं—(१) उपकारी होता (२) सुख-दुःख में समान रहनेवाला (३) अर्थ प्राप्त करनेवाला (४) अनुकम्पक ।

विद्याओं का नमस्कार है—(१) माता-पिता पूर्व विद्या (२) आचार्य बलिष्ठ दिशा (३) पुत्र-स्त्री परिश्रम विद्या (४) मित्र-अमात्य उत्तर दिशा (५) बास-कर्मकर नीचे की विद्या (६) भ्रमण-ब्राह्मण ऊपर की विद्या । इनकी सेवा विद्या-नमस्कार है ।”

(३२) आदानाट्टियसुत्त—भूत-प्रेतों को संतुष्ट करने के लिये यह सुत्त एबधुह में मृगकूट पर भाषित किया गया । इसमें बहुत से भूतों तथा मन्त्रों के नाम आये हैं ।

(३३) संवीतिपरियाय^१—‘पावा’ में बुद्ध कर्मारपुत्र के आश्रम में बिहार करते समय वहाँ के नवीन संस्थायार में यह सुत्त भाषित किया गया । ‘नियच्छनासपुत्त’ के मरने पर जैनों के आपसी विवाद की खबर सुनकर वहाँ बुद्ध के मन्त्रियों की सूची एक-दो-आदि संख्याक्रम से ‘सारिपुत्त’ के मुख से दी गयी है ।

(३४) बभुत्तरसुत्त—एक समय भगवान् बुद्ध जन्मा में ‘गम्पठ’ पुष्करणी के तीर पर बिहार कर रहे थे । वहाँ पर ‘सारिपुत्त’ ने बीड-मन्त्रियों की सूची प्रस्तुत करते हुए उपकारक भावनीय परिश्रम प्रवृत्तम्, हानि नाशीय विघ्नेषमाशीय दुष्प्रतिबन्ध उत्पादनीय अमित्रम तथा साक्षात्करणीय आदि दशोत्तर बर्णों का व्याख्यान किया ।

— • —

१ अट्टगुत्तरनिकाय के प्रारम्भिक छोटे कर्म को यह सुत्त व्यक्त करता है ।

दूसरा अध्याय

२ मन्त्रिमणिकाय

मन्त्रिमणिकाय मुत्तपिटक का दूसरा निकाय है। इसमें १३२ सुत्त हैं और जालन्धा देवनागरी संस्करण के ११, ११४ पृष्ठों को एक भाष्यकार मानकर यदि हम गणना कर तो इस निकाय में ११३ भाष्यकार होते हैं। इस निकाय में भाष्यकारों की संख्या उल्लिखित नहीं है। ११३ भाष्यकार का अर्थ हुआ कि ३२ अक्षरों के श्लोकों में पिनने पर अनुप्युत् संख्या होती २६७३०। इसका हिन्दी अनुबाध मीम किया था जो कि महाबोधि सना सारनाथ से १६३३ ई० में प्रकाशित हुआ था। इसमें अक्षर विषय क्या है, यह भी उही संस्करण से ही उद्धृत करता हूँ। इस सम्बन्ध में इस निकाय का विनायक बतलाना अत्यन्त आवश्यक है। इसमें तीन पञ्चासक हैं—
 (१) मूलपञ्चासक (२) मन्त्रिमण्यसक तथा (३) अन्तिपञ्चासक। प्रथम दो पञ्चासकों में ३०-३० सुत्त हैं और अन्तिम में ३२। ये पञ्चासक भी विभिन्न ऋषियों में विभक्त हैं। नीचे यह सम्पूर्ण विनायक सुत्त स्वल्प तथा विषय के साथ प्रस्तुत किया जा रहा है—

३ २ मूलपञ्चासक

१ (१) मूलपरिषयापवण

सुत्त	स्थान	विषय
१ (१) मूलपरिषयामुत्त	उत्कण्डा (कोसल)	अत्राणियों की इष्टि
२ (२) सञ्जासक०	वेतवन (भाबस्ती)	चित्तमय का समन, अनात्मभाव
३ (३) पम्पशायाद०	"	अर्पके बारित्त बनी, वित्त के नहीं पम्पय मार्ग

- ४ (४) भयभेदः " भय-भूत सम्मोहन विघार्यै
- ५ (५) अतङ्गः " चित्त-मत्तवासे चार व्यक्तित्व मिश्रण का ध्येय
- ६ (६) आकृष्टेयः " मिश्र-नियमों का ग्रहण ध्यान प्रज्ञा नवसागर के दन्धन
- ७ (७) बलः " चित्त-मत्तों का दुष्परिणाम उपश्लेष मैत्री आदि भावनायें तीर्थ-स्नान ध्येय
- ८ (८) सस्तेयः " पर्याय रूप
- ९ (९) सम्मार्ष्टिः " पुष्प पाप अष्टाङ्गिक मार्ग प्रतीत्य समुत्था
- १० (१०) सतिपट्टाभः कर्मासुरम् (कुरु) कथं मन आदि की भावनायें बोधि साम के रंग मार्ग कथं

२ (२) सीहनाह्वय

- ११ (१) पुलसीह्वयः चेतन उपादान या भास किं का रयान निदान या प्रतीत्य समुत्था , ,

- १२ (२) महासीह्लाह० अवरपुराणसंघ (बैशाखी) बुद्ध-जीवनी उप
स्वार्थे अचेतक इत,
आहार-सुद्धि
- १३ (३) महादुक्खसंख्य० चेतवन भोगों के दुष्प
रिचाम रावदण्ड
- १४ (४) ब्रह्मदुक्खसंख्य० स्यगोवाराण (कपिलवस्तु) भोगों के दुष्प
रिचाम, भोगों के
कारण दुष्कर्म सुख
के सुख अत्राय्य
मत्तवार
- १५ (५) अनुमान० संसुमारपिटि, भेद्यकज्ञानम दुर्बलन के कारण
मिषवाण (भग्न) और उनके हटाने
के उपाय
- १६ (६) चैतोसित० चेतवन चित्त के कटि, श्रुद्धियाँ
- १७ (७) वनपत्थ० " शैला बरख्य-वास करना चाहिए
- १८ (८) मधुपिच्छक० " विषयों के स्पर्श उत्पत्ति और
परिष्कार
- १९ (९) द्वैवावित्तक० " वित्तमर्मा का धमन ध्यान, अष्ट-
ङ्गिक मर्य
- २० (१०) वित्तकसंघटान० " एक-द्वैप-भोह के हटान का उपाय
- ३ (३) औपमसवण
- २१ (१) ककचुपम० " बाटे से पीरे जाने पर जी दान्त रहना
शान्ति है।
- २२ (२) अतपपुद्गुपम० " साँप पकड़ने की सावधानी उपरेण
बहुत में भी अपेक्षित अनापवाद
- २३ (३) वम्मिक० " पुत्थ की निर्वाण-प्राप्ति में बाधाएँ,

- २४ (४) रपिनीत • " इहापर्यं के पीय और मुख्य उद्देश्य विमुक्तियाँ
- २५ (५) निवाप • " संसार के तिकार होने से बचन का उपाय
- २६ (६) पासरासि • " बुद्धजीवनी (गृहत्याग से धर्म-चक्रप्रवर्तन तक)
- २७ (७) ब्रुतहत्थिपरोपम • " यथार्थ बुद्ध और उसकी मोक्षोपयोगी शिक्षायें
- २८ (८) महाहत्थिपरोपम • " उपादान स्कन्धों से मुक्ति प्रतीत्य-समुत्पाद
- २९ (९) महासारापेपम • गृहकूट मिश्र-बीजल का वास्तविक (पत्रपृष्ठ) उद्देश्य
- ३० (१०) ब्रुससारोपम • जतवन " " "

४ (४) महायमकवग्ग

- ३१ (१) ब्रुसयोसिङ्ग • गिज्जकावसय अनुसुद्ध आदि की सिद्धार्थ (नाशिका)
- ३२ (२) महामोसिङ्ग • मोसिङ्गसालवन कैसे पुण्य से तपोमूमि घोमित
- ३३ (३) महायोपासक • जेतवन बुद्धधर्म में सधर्मताओं की प्यारह बातें
- ३४ (४) ब्रुसयोपासक • उज्जवावेम • मुमुक्षुओं की योगियाँ
- ३५ (५) ब्रुससञ्चक • कूटापार(बैसासी) जालेबाइ-बाइल, अनाले-बाइ-मैडन
- ३६ (६) महासञ्चक • महावन वापा की नहीं मन की छावना (बैसासी)
- ३७ (७) ब्रुतठ्ठासद्दय • पूर्वायम नृप्या के क्षय का उपाय (भाबम्भी)

१८. (८) महात्सवसङ्घः • जेतवन • (अनारमबाप, गर्भ वेद की क्री भाँति पार होने के लिए पकड़ रखने के लिए नहीं प्रतीत्यसमुत्पाद, बीबनप्रवाह, गर्भ वास्य पीबन संघास पीन-समाधि)
१९. (९) महावस्तपुर • अश्वपुर (बर्म) शमन-आह्वान बनने का संघ
४०. (१०) ब्रूमध्वसपुर • " " " "
३. (१) ब्रूमयमकषाय
४१. (१) सासेम्य • सामा (कोसल) काद-वचन-मन के उदाचार और दुपचार से सुगति दुर्गति
४२. (२) वेरुजक • यतवन " "
४३. (३) महुरोवस्म • " प्रजाहीन प्रजावान् प्रजा विज्ञान वेचना संजा पीन समाधि प्रजा आयु, ध्यमा और विज्ञान
४४. (४) ब्रूमवेदस्म • वेणुवन (शिवमूह) आत्मवाद-स्वाम्य उपादान-स्वयं अष्टाङ्गिक मार्ग बाहि
४५. (५) ब्रूमध्वसमावाज • जेतवन चार प्रकार के धर्मनियामी
४६. (६) महावध्वसमावाज • " धर्मनियामियों के भेद
४७. (७) बीमसक • " पुन की परीक्षा
४८. (८) कोमभिय • कौशाम्बी मेलजाम के लिए उपयोगी छद्म बार्ते
४९. (९) ब्रह्मनिमन्त्रिक • " बुद्ध आच सुष्टिबर्ता ईश्वर तथा ब्रह्म का संकन
२०. (१०) भारतज्वरीय • लुमुमारविदि मानापमान वा त्याग मार को घटकागता

३२ मज्झिमपण्यासक

६ (१) यहपतिवग्ग

- ५१ (१) कन्दरक० मग्गय (ब्रह्मा) स्मृति-ग्रन्थान् भावना आत्म
तप आदि चार पुरुष्य
- ५२ (२) जटुकनायर० वेजुप्राम (बैशासी) म्यारख् अमृतदार (ध्यान)
- ५३ (३) सेज्ज० म्यप्रोचाराम सवाचार, इन्द्रिय-संयम
(कपिसवस्तु) परिमितमौजन जायरण
सउर्म ध्यान
- ५४ (४) पोतसिय० आपन्न (अंगुत्तरण) संसार के जाम तोड़न के
उपाय
- ५५ (५) जीवक० जीवकाअन्नन मांस-जीवन में नियम
(राजगृह)
- ५६ (६) ठपामि० प्रावारिकअन्नवन मन ही प्रघान कात्या-बचन
(नामन्वा) गीज
- ५७ (७) मुन्डुरवतिक० हलिइवसन निरर्थक बत चार प्रकार के
(कोलिय) कर्म
- ५८ (८) अमयराजकुमार० वेजुवन हित-अप्रिय बात बहनी
(राजगृह) चाहिये
- ५९ (९) बहुवेदनीय० जेतवन मीरधीर छा भेतजोस, संज्ञा-
वेदयित निरोध
- ६० (१०) अपण्णक० सासा त्रिभिधारहित धर्म अभिप्यावाद
(कोसल) जादि मतबाह आत्मतप जादि
चार पुरुष

७ (२) त्रिरत्तुवग्ग

- ६१ (१) अण्डमट्टिक- बमुवन मिथ्या-भाषण की निन्दा
राहुमोवाद० (राजगृह)

- ६२ (२) महाराजुलोबाद० अठवन प्राधायन कायिकमावता
मैत्री आदि भावनाएँ
- ६३ (३) चूलमातुल्य० " अ्याहृत अ्याहृत करन का
कारण
- ६४ (४) महामातुल्य० " संसार के बन्धन और उनसे
मुक्ति
- ६५ (५) महाजि० " नियमित जीवन क्रमता
धिया
- ६६ (६) लकुकुपम० आपण (अंगुत्तरप) छोटी बात भी भाएँ हाणि
पहुँचा सकती है
- ६७ (७) चालुम० आमलकीवन भिक्षुपन के चार विष्णु
(चालुमा)
- ६८ (८) गलकपान० गलकपाम (कोस्तम) मुमुक्षु के वर्तव्य
- ६९ (९) मुत्तिस्सानि० बेचुवन संयम नहीं तो अरुप्यवास
(राजगृह) व्यर्थ
- ७० (१०) कीटामिदि० कीटामिदि संयम चार प्रकार के पुरुष
(काधी वेस) मोमी बुद्ध

८. (३) परिज्जाज्जकवम्य

- ७१ (१) पैविज्जकवम्य- महावनकूट्यमार बुद्ध अपने को सर्वत्र नहीं
गोत घाला (बैघामी) मानते तीन विद्याएँ, सुवर्ति
के उपाय
- ७२ (२) अम्मिबध्दोत्त० अठवन मठबारों का बंधन अ्याहृत
भाग के बुझने जैसा निर्वाण
- ७३ (३) महाबध्दोत्त० अमुवन निर्वाण का मार्ग निर्वाण
(राजगृह) प्राप्ति का उपाय
- ७४ (४) दीपनल्ल० मुल्लकूट (राजगृह) मठबारों का भाषण, वावा

- अपनी नहीं सभी अनुभव
अनित्य
७५. (५) मागन्धिय० कम्मासवम्म (कुब) इन्द्रिय-संयम उमर जाने पर
तीचे का मुक्त फीका
- ७६ (१) सत्थक० धोविताराम
(कौसाग्धी) धर्म और अर्थोपकर प्रवृत्त्या
अधिम्यावाद आदि मत विचारों,
अर्थत्व का ज्ञान
- ७७ (७) महासकुत्तुपायी० कम्मासावम्म
(कुब) दुःख में नास्तविक थडा कैसे
बुद्धत्व के उपयोगी धर्म
- ७८ (८) समणमग्घिक० जेतवन मुक्ती पुरव
७९. (९) पूससकुम्भवायि० वज्जुवन
(राजगृह) जीनों का सिद्धान्त परित्राजकों
का सिद्धान्त मुलमय भोक का
मार्ग
- ८० (१०) वेत्थणस० जेतवन परित्राजकों का सिद्धान्त
पूर्वन्ति अपरान्त क सिद्धान्त
- ८ (४) राजवला
- ८१ (१) धम्मिकार० (कौसम) त्यागमय गृहस्थ-जीवन
- ८२ (२) रट्टपास० बुस्सकोट्टिठ
(कुव) त्यागमय भिक्षु-जीवन
भोगों की असारता
- ८३ (३) मन्नादेव० भिषिमा (विदेह) कस्याधमार्ग
- ८४ (४) मात्तुरिय० मुन्दवन (मत्तुरा) वर्ण-अवस्था का संबन्ध
८५. (५) बोधिराजकुमार० भसकभावन बुद्धजीवनी (गृहत्याग से
(सुमुत्तारपिरि) बोधि-प्राप्ति तक)
- ८६ (६) अट्टगुत्तिमास० जेतवन अट्टगुत्तिमास शास्त्र का बीकन-
परिवर्तन
८७. (७) पियवाठिक० " त्रियों से शोक और दुःख की
उत्पत्ति

८८. (८) बाहीतिय० बुद्ध निन्दनीय कर्म नहीं कर सकते
८९. (९) बम्मभेदिय० मोत्तसूप (घाणप) भोगों के दुष्परिणाम बुद्ध-महा
- ९० (१०) कण्णत्पसक० कण्णत्पत्त कमियत्ताय (उज्जवा) सर्वज्ञता अर्धमव बर्ण-व्यवस्था-खंडन, दण बह्मा

१० (१) ब्राह्मणवच्य

- ९१ (१) बह्मायु० मिमित्ता (बिदेह) महापुरुषलक्षण बुद्ध का रूप गमन कर में प्रवेश भाषि
- ९२ (२) सेम० आपण (अमुत्तराप) भोजन का ङग ब्राह्मण वेदमू आदि की व्याख्या बुद्ध के पुत्र सेन ब्राह्मण की प्रशंसा
- ९३ (३) अस्सत्तापय० जेतवन बर्ण-व्यवस्था-खंडन
- ९४ (४) बीत्तक- समियजम्बवण मुत्त० (बाणपत्ती) आत्मतप आदि चार पुरय
- ९५ (५) बड्ढि० बीपत्तार देववन (कोत्तम) बुद्ध के पुत्र ब्राह्मणों के वेद और ऋषि सत्य की रक्षा और प्राप्ति
- ९६ (६) फामुत्तारि० जेतवन बर्ण-व्यवस्था-खंडन
९७. (७) वात बणुवन (राजगृह) अग्ना दिया अपने साथ ज्यानि०
९८. (८) वासिदु० इच्छानकुत्त बर्ण-व्यवस्था-खंडन
९९. (९) सुम जेतवन गृहस्थ और संन्यास की तुलना ब्रह्मलोक का मार्ग
- १०० (१) सङ्गाण्व० मंडसकण्य (कोत्तम) बुद्ध की तरद्वर्षा

५ ३ उपरिपण्णासक

११ (१) देववह्वण

- १०१ (१) देववह्व • देववह्व (साक्य) कायिक उपस्था निस्सार, मानस उप ही सामप्रद भिक्षुपन का सुख आरम्भवाय आदि नाना मतवाय मसजोम का डंग
- १०२ (२) पम्पत्तय • अतयन
- १०३ (३) क्कित्ति • बभिहरणवनघड (कुत्तिनाय)
- १०४ (४) सामगाम • सामगाम (साक्य) बुद्ध के मूल उपदेश संघ में विबाध होने का कारण सत्त प्रकार के फँसने मेमजोम का डंग
- १०५ (५) मुनक्कत्त • महावनकूटागार ध्याय चित्त-धंयम घामा (दीक्षाणी)
- १०६ (६) आणञ्ज सप्पाय • कम्मासुवम्म (कुड) भोग निस्सार हैं
- १०७ (७) गबकमोमा- पूर्वाराम स्थान • (आवस्ती) कम्मस धर्म में प्रगति
- १०८ (८) मोपकमो वेमुवन म्पत्तान • (राजगृह) बुद्ध के बाद भिक्षुओं का मार्ग बर्धयिता
- १०९ (९) महापुण्यम • पूर्वाराम (आवस्ती) स्त्रय आरम्भवाय-संघन
- ११० (१०) बूसपुण्यम • " सत्तुल्य और असत्तुल्य

१२ (२) अनुपववम्य

- १११ (१) अनुपवद • जेतवन सारिपुत्त के पुत्र—प्रजा समाधि आदि

- ११२ (२) छविचोवन० " बर्हण की पहचान
- ११३ (३) सप्तुरिसचम्म " सप्तपुर्य और असप्तुर्य
- ११४ (४) सेवितम्ब " सेवनीय; असेवनीय
नसेवितम्ब०
- ११५ (५) बहुबालुक० " धातुर्ण, बुष्टि-प्राप्त पुर्यस्याम-
स्वान-ज्ञानकार
- ११६ (६) इतिविभि० ऋषिगिरि
(राजपुह) ऋषिगिरि के प्रत्येक बुद्ध
११७. (७) महाचत्त- जतवन ठीक समाधि
रीसक०
- ११८ (८) आनापाम पूर्वापाम प्राणापाम ध्याम
सति० (भावस्ती)
- ११९ (९) कामपठा- जतवन कामायोग
सति०
- १२० (१०) सद्यारप्यति० " पुष्य-संस्कारों का विपाक

१३ (३) मुञ्जतावन्म

- १२१ (१) ब्रुतमुञ्जता० पूर्वापाम चित्त की मुन्यता का योग
(भावस्ती)
- १२२ (२) महामुञ्जता० म्यप्रोवापाम "
(कपिसवस्तु)
- १२३ (३) अण्डरियचम्म० जेतवन बुद्ध नहीं और जैसे उत्पन्न
होते हैं
- १२४ (४) बककूम० वेजुवन (राजपुह) बककूम का त्यागमय मिथु
जीवन
१२५. (५) वन्तमूयि० " चित्त की एकाग्रता, संयम की
सिद्धा

- १४१ (११) सन्धविमञ्जु • ऋषिपुत्र चार चारदश
मुगवाव
(वाचनाही)
- १४२ (१२) बन्धनविमञ्जु • सन्धोवा संघ व्यक्ति से ऊपर है
उम
(कर्मवस्तु)

१५. (२) सम्प्रदायवाच्य

- १४३ (१) अनापिण्डकोवाह • जेतवन अनापिण्डिक की मूल
अनासक्ति योग
- १४४ (२) अमीवाह • केवुवन अनात्मवाद अत्र ही आत्म
(उपबृह) इत्या
- १४५ (३) पुण्योवाह • जेतवन कर्म प्रचारक की सहिष्णुता
और त्याग
- १४६ (४) नन्दकोवाह • " अनात्मवाद शीघ्रज्ञ
- १४७ (५) अनापिण्डोवाह • " अनात्मवाद
- १४८ (६) सम्प्रदाय • " इन्द्रिय विषय, विज्ञान और
और तीनों का समावेश अना-
त्मवाद (अविस्तार)
- १४९ (७) महासत्तापचन • " तुष्णा और कु-स
- १५० (८) नपटविन्देय्य • नपटविन्देय्य सत्कार के पास
(कोसल)
- १५१ (९) विष्णुपालपारिमुद्धि • केवुवन विषयों का त्याग स्मृति-प्रस्थान
(उपबृह) आदि माधवार्थ
- १५२ (१०) इन्द्रियनाशना • मुनेकेवुवन इन्द्रिय-संयम
(कर्मवस्तु)

मज्झिमनिकाय के ४० सूत्र संक्षिप्त तथा यन्धीर है । य उपमहल
(विहार) के कर्मवस्तु (कर्मवस्तु) से लेकर कुद वेद्य के 'उत्थानवस्तु'

मगर तक कहे गये हैं। इन सूत्रों से स्पष्टतया यह बात होता है कि बुद्ध के मूल उपदेशों तथा उनके कार्य का लक्ष्य क्या था? दो सूत्रों में बुद्ध ने बत्सराज उदयन के पुत्र बोधिराजकुमार से सुमुनारमिरि (बुनार) में अपने जीवनी से सम्बन्धित कुछ बातें भी बतलाई हैं। सूत्रों की विषय-सूची पहले ही दे दी गयी है। यहाँ पर कुछ विशेष सूत्रों का उल्लेख किया जा रहा है—

१ मूलपरिपायसुत्त (१)—इस निकाय का यह प्रथम सुत्त है। ज्ञान के अभिमान में बुरे ब्राह्मण मिश्रुओं को यह उपदेश दिया गया था। यह तत्त्व-ज्ञान से परिपूर्ण सुत्त है। अथ इधे समसने में उन्हें कठिनाई हुई तथा इसे वे न समझ सके, और उपदेश के समाप्त होने पर चुप रहते हुए बुद्ध के कर्म का उन्होंने अभिनन्दन नहीं किया। इस सुत्त में दर्शन का व्याख्यान इस प्रकार से किया गया है—संसार में मिट्टी पानी आदि, हवा प्राणी देवता प्रजापति ब्रह्मा आभास्वर देवता गुणहरस्त देवता अभिभू देवता, आकाशात्मन्यायतन देवता विज्ञानात्मन्यायतन देवता आदिबन्धन्यायतन देवता, नैवसंज्ञानासंज्ञायतन देवता एकत्वं ज्ञानात्वं तथा निर्वाण आदि संज्ञाएँ सभी व्यवहार के लिए हैं। एक अल्पस सामान्य व्यक्ति से लेकर बर्हत् तक सभी व्यवहार में इन सबका प्रयोग नित्य करते हैं। पर इन दो प्रकार के पुरुषों के इन व्यवहार में अन्तर केबस इतना है कि मूल अथवा सामान्य जन उन्हें परमार्थतः वैसा ही ग्रहण करके उनसे तृप्त होत हैं, पर बर्हत् जो परमार्थतः उनके मूल्य स्वभाव का ज्ञाता होता है उनसे तृप्त नहीं होता। जिस व्यक्ति ने अपने ज्ञान के विकास में जिस स्तर की प्राप्ति की है वह जमी के अनुसार व्यवहार की सम्पूर्ण बन्धुओं की परमार्थ रूप में देखता है, और अपने स्तर के अनुसार ही उतनी ही दूर तक वह उनसे अभिष्ट हो पाता है।

इस प्रकार इस सुत्त में उस समय की दृढव्यवस्था भी व्यक्त है। यह धार्मिक दृष्टियों के मन्वीर विवेचन से परिपूर्ण सुत्त है अतएव कठिन है।

२. अमङ्गलमुत्त (५)—इस सुत्त में यह कहा गया है कि संसार में चार प्रकार के मनुष्य होते हैं—(१) वे जो बुरे होते हुए भी यह नहीं जानते कि उनमें बुराई है, (२) वे जो बुरे होते हुए यह जानते हैं कि उनमें बुराई है (३) वे जो अच्छे होते हुए भी यह नहीं जानते कि उनमें अच्छाई है और (४) वे जो अच्छे होते हुए यह जानते हैं कि उनमें अच्छाई है। इनमें पहले प्रकार के मनुष्य सबसे हीन हैं और चौथे प्रकार के सबसे उत्तम। इस प्रकार से इस सुत्त में बुद्ध के अग्रश्रावकों (छारिपुत्त तथा मोम्मल्लान) के वर्गीकरण का उल्लेख है। अन्त में आपुप्मान् 'महामोम्मल्लान' ने आपुप्मान् 'छारिपुत्त' के इस वर्णोपदेश का बड़ा अभिनन्दन किया।

३. बुद्धवृत्तकल्पसुत्त (१४)—एक समय भगवान् शाक्य देश में कपिलवस्तु के पञ्चोपासम में विहार करते थे। शाक्यों का प्रधान नेता महात्मा शाक्य एक दिन बुद्ध के पास गया। बुद्ध ने बताया कि कल्प एतद्, गन्ध रस और स्पर्श ये पाँच कामधुन हैं। साद्य संसार इन्हीं के आस्वाद्य के पीछे पड़ा है। यही अज्ञानि तथा दुःख के कारण हैं। इस सम्बन्ध में बात करते-करते बुद्ध ने निर्द्वन्द्व (बौद्ध साधुओं) की बात कही—

“महात्मा ये राजगृह के पृथक्कृत पर्वत पर रहते थे। उस समय बहुत से निर्द्वन्द्व साधु अग्निविरि की कामक्षिता पर बड़े रहने का व्रत ले, आसन छोड़ उपसम करते दुःख कट्ट, तीव्र वेदना मन रहे थे। शाक्य को उनके पास जाकर देने पूछा—‘बाबुसहे, तुम क्यों दुःख कट्ट, तीव्र वेदना मन रहे हो ? उन्होंने कहा—‘बाबुत्त ‘निगच्छात्तपुत्त’ (महावीर) सर्वथ सर्वस्वी एवं अपरिदेय वर्त्तन के आगनेवासे हैं और बफ्ठे बड़े सोते तथा जाते सब ही उनको आनन्द-वर्त्तन उपस्थित रहता है।

वे एवा कहते हैं—

निगच्छो तुम्हें कहते का किया जो कर्म है, उसे इस कड़वी दुष्कर तरस्या से अन्त करो और जो इस अन्त यहाँ काम-अचन-मन से संसृत हो यह भविष्य के लिए पाप का न करना हुआ। इस प्रकार पुण्य कर्मों का

वपस्या से मृष्ट होने से और नय कर्मों के न करने से भविष्य में चित्त
 अनालस्य (निर्मल) होगा। भविष्य में आलस्य न होने से कर्म का लय होगा।
 कर्मलय से दुःखसमय दुःखसमय से बेचना (सत्तन) का लय बचनालस्य
 से सगी दुःख मष्ट होगा। हमें यह विचार पसन्द है। हम इसके
 समुष्ट हैं।

‘ऐसा कहन पर, महानाम मीन इन नियच्छों स कहा—
 ‘क्या तुम आबुसो जानते हो—हम पहल य ही हम नहीं म प ?
 ‘नहीं आबुस।

‘क्या तुम आबुसो यह जानते हो—हमन पूर्व में पाप कर्म किय ही
 हैं, नहीं नहीं किय ?
 ‘नहीं आबुस।

‘क्या तुम आबुसो, यह जानते हो—अमुक अमुक पाप कर्म किय है ?
 ‘नहीं आबुस।

‘क्या तुम आबुसो यह जानते हो—इतना दुःख लक्ष को प्राप्त ही
 मया इतना दुःख नष्ट करना है तथा इतम दुःख के नष्ट होने से सब दुःख
 का नाश हो जायेगा।’
 ‘नहीं आबुस।

‘क्या तुम आबुसो जानते हो—इसी जन्म में अक्षुष्यम कर्मों का प्रहाण
 और दुःख कर्मों का नाश होगा है ?
 ‘नहीं आबुस।

‘हम प्रकार, नियच्छी तुम इन सबको नहीं जानते। एसा होने से ली
 इस पक्ष की प्राप्ति होने लपयी कि जो मोक्ष में स्वरुर्मा हैं वे ही नियच्छ साध
 बनते हैं।

हम पर नियच्छों ने फिर कहा—

‘आबुस यौगम मुख से मुख प्राप्य नहीं है दुःख से मुख प्राप्य है।
 यदि मुख से मुख प्राप्य होता तो राजा मायब अधिक विन्धिसार मुख प्राप्य

करता और आप से अधिक मुक्तबिहारी होता । चूंकि मुक्त से मुक्त प्राप्य नहीं है, अतएव यह स्थिति नहीं है । और यदि इसका उत्तर हम आप ही से जानना चाहें, तो क्या होगा ?

‘तो आबुसो मिगण्ठो, हम तुम्हीं से पूछते हैं, जैसा तुम्हें ज्ञेय वैसा उत्तर दो । तुम लोग क्या मानते हो—राजा विम्बिसार काया से बिना हिंसे बचन से बिना बोले छात रात-दिन एकान्त मुक्त अनुभव करते क्या बिहार कर सकता है अथवा वह छह, पाँच, चार, तीन हो तथा केवल एक रात-दिन एकान्त मुक्त का अनुभव करते बिहार कर सकता है ?

‘नहीं आबुस ।

‘आबुसो मिगण्ठो मे काया से बिना हिंसे बचन से बिना बोले एक, दो तीन चार, पाँच छह तथा छात रात-दिन एकान्त मुक्त का अनुभव करता बिहार कर सकता है । निबण्ठो ऐसा होने पर कौन अधिक मुक्त-बिहारी है—राजा मानव अधिक विम्बिसार अथवा मे ?

‘ऐसा होने पर तो राजा विम्बिसार से आमुप्मान् बीरम ही अधिक मुक्तबिहारी है ।’

बुद्ध ने महानाम को यह प्रवर्षित किया कि राजा पयार्ष में सुखी नहीं है । उसके जो मुक्त दिव्यतायी पढ़ते हैं, वे बाह्य साधनों पर अचलस्थित हैं और वे साधन परम रूप से अस्थायी हैं । राजा को यदि एकान्त स्वान में रहना पड़े तो वह म्याकुल हो जायेगा । पर इसके विपरीत ध्यानी विभु अनेक दिनों तक एक बन्द स्वान में पड़े-भड़े अपन स्वयं के अन्दर प्रस्तुति होनेवासे मुक्त-ज्ञोत में आनन्द लता रहेगा । इससे यही सिद्ध होता है कि वास्तविक मुक्त एक ध्यानी प्रयत्न को ही प्राप्त होता है । राजा को नहीं ।

महानाम ने समुत्प हो भगवान् के उपदेश का अभिमन्यन किया ।

४ अलपबुद्धपमसुत्त (२२)—बुद्ध अपने उपदेशों में बड़ी मुन्दर उपमाएँ देते थे । इस सुत्त में उपदेशों के ग्रहण करन की उपमा सर्व (अस-मह) पकड़ने से बी बयी है ।

एक बार अरिष्ट मिश्र को एसी बुरी बृष्टि उत्पन्न हुई थी—“मैं भयवान् हाथ उपदिष्ट धर्म को ऐसे जानता हूँ जैसे कि जो निर्वाण आदि के अन्तर्गमक (विघ्नकारक) धर्म भयवान् न रहे हैं, सेवन करने पर भी वे अन्तर्गम नहीं कर सकते।”

यह बात कुछ तक पहुँची। कुछ न उसे बुझा कर कहा—“मोक्ष पुरुष किसको मीने ऐसा बर्णनदेय किया है, जिसे तू ऐसा जानता है? मैं तो अनेक प्रकार से अन्तर्गमिक धर्मों को अन्तर्गमिक कहा है और उनके बहुत से दुष्परिणाम बतलाये हैं, पर तू अपनी उस्ती धारणा से इन्हें मूठ सगा रहा है और अपनी भी हानि कर रहा है तथा बहुत अपुष्प क्रमा रहा है। यह चिरकाल तक तेरे लिए अहितकारक तथा दुःखकारक होगा।”

इसके पश्चात् कुछ न मिलुओं को सम्बोधित करके कहा—“मिलुओं अरिष्ट इस धर्म में छु तक नहीं गया है क्या तुम भी मेरे ऐसे उपदेय किने धर्म को एसा ही जानते हो जैसा कि यह अरिष्ट मिश्र अपनी उस्ती धारणा के कारण बतसा रहा है?”

मिलुओं, कोई-कोई मोक्षपुरुष यय व्याकरण गाया उवाच इति-
 कुछ जातक बहुमुठधर्म तथा वैदस्य - इन भी प्रकार के धर्मों को धारण करते हैं। वह उन्हें धारण करते हुए भी उनके धर्म को प्रज्ञा से नहीं परकते और इससे धर्मों का आनाय नहीं समझते। वे या तो उपारम्भ के साम के लिए अपना बाद में प्रमुख ब्रह्म के लिए ही धर्मों को धारण करते हैं। उनके लिए य धर्म अहित और दुःखप्रद होते हैं, क्योंकि य उन्हें उल्टे रूप में ही धारण करते हैं।” इस सम्बन्ध में कुछ न ‘अनपद’ (साप) की उपमा दी—“जैसे मिलुओं ‘अनपद’ को पकड़नवाला उसकी खोज में घूमता हुआ कोई पुराय जाने और एक महान् साप उसे दिखायी है उसे वह देख से या प्रोष से पकड़े और वह उलट कर उसे काट ले तब वह उस धंघ के धारण मरण अपना उसके समान कुछ को प्राप्ति होने क्योंकि साप तो

दुर्गहीन वा । ऐसी ही गति बर्म के प्रति उस्ती दृष्टि रखनेवाले की होती है ।

इसलिए, भिक्षुओं मेरे जिस भाषण का अर्थ तुम समझ हो, उसे बीते बारण करना और जिसका अर्थ तुम नहीं समझे हो उसे मुझसे पूछना बचना किसी अन्य जानकार भिक्षु से ।

भिक्षुओं, मैं तुम्हें बर्म का उपदेश बड़े की भाँति पार जाने के लिए करता हूँ उसे पकड़ रखने के लिए नहीं ।

भिक्षुओं जैसे कोई पुण्य अस्मान मार्ग पर जाते हुए एक महान् असार्थक को प्राप्त हो । उस असार्थक का दूसरा किनारा धममुक्त और मयरहित हो तथा उसका किनारा कठरा और भय से पूर्ण हो । वहाँ न पार भेजाने-वासी नाव हो न द्वार से छपर आने-जाने के लिए पुन हो । तब उस पुण्य के मन में यह हो—'क्यों न मैं वृण-काष्ठ-वध बना करके बड़ा बाँधू और उस बड़े के सहारे हाम और पैर से मेहनत कटते स्वस्तिपूर्वक पार उतर जाऊँ । तब भिक्षुओं वह पुण्य बड़ा बनाकर पार उतर जाय । उत्तीर्ण ही जाने पर, पार बसे जाने पर, उसके मन में ऐसा हो—'यह बड़ा मैरा बड़ा उपकारी हुआ है इसके सहारे मैं पार उतरा हूँ । क्यों न मैं इस बड़े को धिर पर रखकर या कम्बे पर उठकर वहाँ इच्छा हो वहाँ जाऊँ ।' तो क्या मानते हो, भिक्षुओं क्या वह ऐसा करनेवाला पुण्य उस बड़ में कर्तव्य पामनेवाला होता ?"

"नहीं मन्ते ।"

"ऐसे ही भिक्षुओं मैं बड़े की भाँति विस्तरण के लिए तुम्हें बर्मों का उपदेश करता हूँ पकड़ रखने के लिए नहीं । बर्मों को बड़े के समान उपरिष्ठ जानकर तुम बर्मों को भी छोड़ दो । अथम की तो बात ही क्या ?"

बुद्ध की ऐसी उबावला बिरसे ही किसी बर्म-संस्थापक में होती ।

१. अरियपरियेत्तमसुत्त (२६)—मज्झिमनिकाय के कई सूत्रों में बुद्ध की जीवनी के कुछ बंध आये हैं । जतवन में भाषित यह सूत्र भी ऐसा ही है । बुद्ध कहते हैं—

“मिथुनो, मैं सम्बोधि से पूरे असम्युद्ध रहते हुए स्वयं जातिभर्मा होते हुए जातिभर्मों (पदाभों) की ही पर्येषणा करता था। तब मुझे ऐसा हुआ—‘क्यों न मैं योगक्षेम अनुत्तर निर्वाण की पर्येषणा करूँ?’

तब मैं मिथुनो दूसरे समय तस्म अत्यन्त काले केवोंवाला भद्र जीवन से मुक्त पहले बसन्त में अनिच्छुन माता-पिता को अयुमुक्त रोते छोड़ बेच-बसन्त मुझा कापाय बसन्त पहल घर से बहर हो प्रव्रजित हुआ। और इस प्रकार ‘क्या उत्तम है’ इसकी मनेपणा करते उत्तम धान्ति पर को सोचते मैं ‘आत्मार कामाम’ के यहाँ गया और पूछने पर उन्होंने ‘आकिञ्च ज्ञानायतन’ (आकिञ्चज्ञानायतन) बतलाया और उसके पश्चात् जहक रामपुत्र न बबसन्तज्ञानायतन (नैबसन्तज्ञानायतन) बतलाया। पर इनसे मेरी मन्तुष्णि नहीं हुई और उस धर्म को अपर्ष्यात्त समझकर, उससे विरक्त हा मैं वहाँ से चल दिया।

कमरा मणव में बसते हुए उठवना सेनालीगिमम में मैं पहुँचा। वहाँ एक रमणीय बनबंङ में एक नदी को बहते देखा जिसका घाट मनीहर तथा श्वेत था। पारों और मिलाचार के लिए गाँव था। मुझे हुआ—‘यह भूमि माम रमणीय है यही (यह बनबंङ) ध्यान योग्य स्थान है’ यह सोच वहाँ बैठ गया।

सो मिथुनो स्वयं धमने के स्वभाववाले धम्म सेने के दुप्परिणाम को जानकर, जन्मरहित अनुपम योगक्षेम निर्वाण को सोचते हुए मैं उठ पा लिया। यह अजर, व्याधि-धर्म रहित अमर, सोकरहित सक्लेश रहित था। मुझे दर्शन (ज्ञान) का घासात्कार हा गया मेरे चित्त की मुक्ति बचन बन गयी—‘यह अन्तिम जन्म है, फिर अब दूसरा जन्म नहीं होगा।

तब मिथुनो, मुझे एका हुआ—

मैंने बन्धीर, दुर्बरीन दुर्बरीन शान्त उत्तम तर्क से अप्राप्य निपुन पंडितों द्वारा जानने योग्य इस धर्म को पा लिया। यह बनता काम-तृप्ता में रमण करनेवाली, कामरत तथा काम में प्रसन्न है। इत बनता

के लिए प्रतीत्यसमुत्पाद (धापेक्षणकार) को बाल्या दुर्बर्धनीय है और सभी संस्कारों का समनस्वरूप दुष्प्राप्त-सम विराग निरोध और निर्बाध भी दुर्बर्धनीय है। मैं यदि बर्धोपदेश करूँ और दूखत उसको समझ न पाये तो मेरे लिए यह तरबुज और पीड़ा की वस्तु होगी। मेरे ऐसा समझने के कारण मेरा चित्त बर्ध-प्रचार की ओर न झुककर अल्प-उत्सुकता की ओर झुक गया।

तब ब्रह्मा सहस्रमति न मेरे चित्त की बात को जानकर व्यास किया—
‘लोक नाम को प्राप्त होगा जब तवामत का चित्त बर्ध-प्रचार की ओर न झुककर अल्प-उत्सुकता की ओर झुक रहा है। और ऐसा सोचकर उन्होंने मुझसे निवेदन किया—‘भगवन् भगवान् बर्धोपदेश करो, सुपत बर्धोपदेश करो, क्योंकि अल्प मत्सवासे प्राणी भी संसार में विद्यमान है और बर्ध के न मुक्तने से वे मृत हो जावेंगे’।

मैंने भिक्षुको ब्रह्मा के अनिप्राय को जानकर बुद्ध-नेत्र से लोक का अवलोकन किया और उस समय लोक के पीछों में कितने ही उत्पन्न सीरज-बुद्धि सुन्दर-स्वभाव तथा समझाने में सुगम प्राणी मुझ वृष्टिबोधर हुए। उनमें कोई-कोई परलोक और दीप से भय करते हुए बिहर रहे थे। जैसे उत्पत्तिनी पश्चिमी या पुण्डरीकिनी में से कितन ही उत्पन्न पद्म या पुण्डरीक उदक में पैदा हुए, उदक में बँधे उदक से बाहर न निकल उदक के भीतर ही डूबकर पोषित होते हैं। इतमें से कोई मीसकमल उत्पन्नकमल बचवा श्वेतकमल होते हैं। इसी भाँति मैंने संसार के पीछों को बिहार करते देखा और तब ब्रह्मा ने सहस्रमति से यह भाषा कही—

‘उनके लिए समुत्त का द्वार बन्द हो गया है जो कानवास होने पर भी यज्ञ को छोड़ देते हैं। हे ब्रह्मा यह व्यर्थ न हो ऐसा समझकर मैं मनुष्यों को निपुण तथा उत्तम बर्ध की देना नहीं कर रहा बा’।

ब्रह्मा सहस्रमति यह जानकर वहाँ से चले पडे कि भगवान् ने बर्धो-पदेश करनेवासे मेरे प्रस्ताव को मान लिया है।

उस समय मेरे मन में यह विचार उत्पन्न हुआ कि किसे मैं सर्वप्रथम इस धर्मोपदेश को कहूँ जो शीघ्र ही इस धर्म को जान सके। और इस सम्बन्ध में मैंने सर्वप्रथम 'आमार कात्तम' तथा उरुक रामपुत्र आदि के विषय में सोचा। पर उसी समय एक गुप्त देवता ने आकर यह निवेदन किया कि इन दोनों का बेहाबसाल हो गया है। सोचते-सोचते मेरी दृष्टि पञ्चवर्णीय भिक्षुओं पर गयी—'पञ्चवर्णीय भिक्षु मेरे बहुत काम करणवासे थे। जब मैं साधना में लगा था तो उन लोगों ने मेरी बड़ी सेवा की थी। क्यों न मैं प्रथमतः उन्हें ही उपदेश दूँ' और तब निम्न भिक्षुओं से यह जान पाया कि वे बाराणसी के श्रियपवन मूयदाव (सारनाथ) में बिहार कर रहे हैं।”

पञ्चवर्णीय भिक्षुओं से मिलने के लिए बुद्ध सारनाथ आये। बुद्ध ने कहा—“भिक्षुओ, इतर सुता;—मैंन जिस अमूठ को पाया है उसका तुम्हें उपदेश करता हूँ। उपदेशानुसार आचरण करने पर जिस उद्दम्य के लिए कुलपुत्र पर छोड़कर प्रव्रजित होते हैं, उस अनुत्तम ब्रह्मचर्य-मृत को इसी जन्म में शीघ्र ही स्वयं जानकर बिचरोमें।”

पञ्चवर्णीय भिक्षुओं ने उत्तर दिया—“आबुस पीठम उस साधना में उस चारणा में उस दुष्कर उपस्या में भी तुम आर्यो क ज्ञान-दर्शन की पराकाष्ठा की विशेषता तथा उत्तर-अनुप्य-धर्म को नहीं पा सके फिर अब बाहुलिक साधना-भ्रष्ट, बाहुल्य-वरापण होते हुए तुम आर्य ज्ञान-दर्शन की पराकाष्ठा उत्तर-अनुप्य-धर्म को क्या पाबोग?”

बुद्ध ने उन्हें बिस्वास दिसाया और अपना उपदेश बैठे हुए पाँच काम-मुर्षों का ध्यास्थान किया और उन्हें उनसे विरक्त रहते हुए सर्वप्रथम चार ध्यानो तथा अमना आकराणान्त्यायतन, विज्ञानान्त्यायतन, आकिञ्च म्यायतन, तथा संज्ञा-वैदयित्त-विरोध आदि को प्राप्त करते हुए प्रज्ञा द्वारा निर्वाण को प्राप्त करने के लिए कहा। इस प्रकार यहाँ पर बुद्ध का यह प्रथम उपदेश (धर्म-वक्त्र-प्रवर्तन) हुआ।

६ महासत्त्वकमुत्त (३६)—बैशासी के महाजन की कूटमारशावा में भी बुद्ध ने अनेक 'सत्त्वक' को अपने जीवनी से सम्बन्धित बातों को बताया और कामभावना तथा चित्तभावना के सम्बन्ध के विषय में उपदेश करते हुए अपनी बोधिसत्त्व-वर्षा का वर्णन किया।

७ उपालिमुत्त (३६)—'निगण्ठात्तपुत्त' (निर्गन्ध-ज्ञातुपुत्र वीण तीर्थङ्कर महावीर) और बुद्ध का साक्षात्कार नहीं हुआ था। पर ये समकालीन थे और कभी एक समय एक स्थान में विहार करते थे। बुद्ध मातन्दा में 'पाचारिक' नामक ब्राह्मण में ठहरे थे। संभवतः वीर्य काम तक तपस्या करने से तीर्थङ्कर के प्रधान शिष्य यौतम इन्द्रमूर्ति का ही दूसरा नाम वीर्य तपस्वी था। उस समय 'निगण्ठों' की बड़ी परिषद् के साथ 'निगण्ठात्तपुत्त' मातन्दा में विहार करते थे। एक बार वीर्यतपस्वी बुद्ध के पास जाकर संन्यास कर चाहा हो गया। बुद्ध न कहा—“तपस्वी, आसन मौजूद है। इच्छा हो तो बैठ जाओ।”

यह कहने पर वीर्यतपस्वी निर्गन्ध निम्न आसन पर एक ओर बैठ गया। भगवान् न ही बात आरम्भ की—

“वीर्यतपस्वी पाप कर्म की प्रवृत्ति के लिए निर्गन्ध ज्ञातुपुत्र चिट्ठने कर्मों का विधान करते हैं ?”

“आबुस यौतम कर्म-कर्म विधान करना निर्गन्ध-ज्ञातुपुत्र का नियम नहीं है। दण्ड-दण्ड विधान करना उनका नियम है।”

‘तो तपस्वी, पाप कर्म करने के लिए, पाप कर्म की प्रवृत्ति के लिए चिट्ठने दण्ड का ये विधान करते हैं ?’

“आबुस यौतम पाप कर्म के हटाने के लिए तीन दण्ड—कामदण्ड, बचनदण्ड तथा मनोदण्ड का विधान उनके द्वारा किया गया है।”

“क्या कामदण्ड दूतय है, बचनदण्ड दूतय और मनोदण्ड दूतय है ?” इसका वीर्यतपस्वी ने स्वीकारात्मक उत्तर दिया।

“इनमें कौन महादोष-मुक्त है ?” पूछने पर कामदण्ड का उत्तर दिया।

बुद्ध ने कहा—“कायदम्ब कहते हो ?”

“बाबुस गौतम, कायदम्ब कहता हूँ ।”

इस प्रकार तीन बार दीर्घतपस्वी से कहसाकर पूछने पर स्वयं मनोकर्म को महावोपी बतलाया । और इसे भी दीर्घतपस्वी निर्घन्व से तीन बार कहनामा । वह आसन से उठकर निर्घन्व-आतुपुत्र के पास चला गया ।

निर्घन्व-आतुपुत्र ने पूछा—

‘क्या तेरा धमज गौतम के साथ कुछ कथा-संसाप भी हुआ ?

दीर्घतपस्वी ने सब कह दिया ।

वहाँ मालम्दा का प्रसिद्ध सेठ धन-ध्यायक उपासि भी बैठा था । उसने आतुपुत्र से कहा—“मन्ते मैं जाऊँ और इसी विषय (कथावस्तु) में धमज गौतम के साथ विचार करूँ । यदि वह विषयमें नहीं तो मैं उसी तरह उसे सपेट भूंगा जैसे बगवान् पुण्य सन्धे बालबाली भड़ को बालों से पकड़ कर निकामता धुमाता डुलाता है । बगवा जैसे छठ बर्य का पट्टा हामी पुष्करणी में प्रवेद्य करके ‘सज-ओवन’ नामक सेत को लपता है, उसी तरह मैं धमज गौतम से भी इसी विषय पर बात करूँगा ।”

उपासि गृहपति बुद्ध के पास गया । बुद्ध ने सर्वप्रथम उससे यह कहा—
“गृहपति यदि तू सत्य में स्थित होकर मन्त्रणा करे तभी हम दोनों का संताप सम्भव है ।” उपासि ने इसे स्वीकार किया । बुद्ध ने कहा—

“गृहपति यहाँ एक चातुर्पास-संवर से संबृत् सब बारि से निवारित सब बारि को निवारण करने में तत्पर, सब बारि से धुसा हुआ सब बारि से छूटा हुआ निर्घन्व है । वह भावे-जाते बहुत से छोटे-छोटे प्राणि-समुदाय को मारता है । गृहपति निर्घन्व-आतुपुत्र इसका क्या विषाक बतलाते हैं ?”

“भन्ते अनजान को निर्घन्व-आतुपुत्र महावोप नहीं मानते ।”

“यदि जानता हो ?”

“तब महावोप होना ।”

“जानने की किस वृष्ट में मरणा करते हैं ?”

‘मत्तं मनोरथं मे ।’

उपासि ने बुद्ध के मत्तम्य (मन की प्रभावता) को मान लिया । वहाँ और भी बातें हुईं । मत्त में उपासि नृहृषि बुद्ध का श्रावक (शिष्य) बन गया ।

बुद्ध ने कहा—“उपासि निर्दोषों के लिए तुम्हारा घर प्याऊ की तरह रखा है । उनके वहाँ जाने पर अब भोजन नहीं देना चाहिए, यह न समझना ।”

उपासि इससे और प्रसन्न हुआ ।

४ कुम्भकरवत्तिस्तुत (३७)—मगधान् कौलिय वंश के ‘हमिद्वसन’ नामक निगम में विहार करते थे । गोत्रही कौलिय-युद्ध पूर्व और कुम्भकरवत्ती ‘अथेल सेनिय’ वहाँ गए । कुम्भकरवत्ती बुद्ध का संनियोग करके कुत्ते की भाँति घेड़री मारकर एक ओर बैठ गया । मगधान् ने समझाया कि सबंध कुम्भकरवत्त सफर उसे मरकर कुम्भकर पति में ही जाता होगा । वह बात सुनते ही अथेल सेनिय रो पड़ा । उपदेश का परिणाम यह हुआ कि उन्होंने वत्त छोड़ दिया ।

— ६. अम्बतद्विकपटुलोवास्तुत (६१)—इसमें बुद्ध ने राहुस को उपदेश दिया है, जिसे देखने से मालूम होता है कि अभी राहुस बहुत सयान नहीं था और उनकी अवस्था कम ही थी ।

मगधान् ने बोड़ से बंध जल को दिखाकर पूछा—

“इस बोड़े से बंधे पानी को देखता है ?”

“हाँ मत्ते ।”

“राहुस ऐसा ही छोटा (बोड़ा) जगका अयथपन है, जिनको जल-बुझकर झूठ भोजन में सज्जा नहीं जाती ।”

तब मगधान् ने बोड़ जल को फेंककर राहुस को सम्बोधित किया—

“राहुस देखा मैं उस बोड़ से बंधे जल को फेंक दिया ।”

“हाँ मत्ते ।”

“ऐसा ही फेंका हुआ उनका भ्रमणपत्र है, जिनको जान-बूझकर झूठ बोलने में सज्जा नहीं जाती।”

तब भयवान् ने उसे सोटे को सीधाकर कहा—

“राहुत तू इस सोटे को सीधा हुआ देखता है ?”

“हां भन्ते।”

“ऐसा ही सीधा उनका भ्रमणपत्र है, जिनको०।”

तब भयवान् ने उस सोटे को सीधाकर कहा—

“राहुत तू इस सोटे को सीधा हुआ देख रहा है, खाली देख रहा है ?”

“हां भन्ते।”

ऐसा ही खाली-तुच्छ उनका भ्रमणपत्र है, जिनको०।

“राहुत जैसे हरिस-समान सन्धे दंतोंवाला महाकाय सुन्दर जाति का संग्राम में जानबाना राजा का हाथी संग्राम में जान पर धगल पैरों से भी लड़ाई का काम करता है पिछले पैरों से भी घाटीर के अगले भाग से भी०, घाटीर के पिछले भाग से भी०, सिर से भी० कान से भी दन्त से भी० लेकिन सूँड़ को बेकाम रहता है। वा हाथीवान् को ऐसा विचार होता है— ‘यह राजा का हाथी सूँड़ को बेकाम रखता है। राजा के ऐसे भाग का जीवन विश्वसनीय है।’

लेकिन यदि राहुत हरिस-समान सन्धे दंतोंवाला राजा का हाथी सूँड़ बेकाम होता हो, तो राजाहाथी का जीवन विश्वसनीय है अब राजा के हाथी को और कुछ काम करना नहीं शक्य है। ऐसे ही राहुत जिसे जान-बूझकर झूठ बोलने में सज्जा नहीं है उसके लिए कोई भी पाप कम अकारण्य नहीं है—एसा मैं मानता हूँ। इसलिये, राहुत हेरी में भी झूठ नहीं बोलूंगा, यह सीख लनी चाहिए।—

“तो क्या मानते हो राहुत दर्पण किस काम के लिए है ?”

“भन्ते देखने के लिए।”

“ऐसे ही राहुत देख-देख कर काया से काम करना चाहिए, देख-देखकर बचन से काम करना चाहिए, देख-देखकर मन से काम करना चाहिए । जब राहुत तू काया से काम करना चाहे तो तुझे बिचार करना चाहिए क्या यह मेरा कार्य अपने लिए पीड़ादायक तो नहीं हो सकता, दूसरों के लिए पीड़ादायक तो नहीं हो सकता बनों के लिए तो पीड़ादायक नहीं हो सकता । यदि प्रत्यवेक्षण करने के पश्चात्, राहुत तू यह समझ कि यह कुछ कर्म है तो इस प्रकार के कार्य को छोड़ देना चाहिए ।

‘राहुत जिन किन्हीं अमण-ब्राह्मणों न अतीतकाल में काय-कर्म बचन-कर्म मन-कर्म आदि परिशोधित किये उन सबने इसी प्रकार प्रत्यवेक्षण करके इन्हें परिशुद्ध किया । राहुत इसी प्रकार का प्रत्यवेक्षण तुम्हें भी सीखना चाहिए ।’

६. कीटागिरिपुत्र (७०)—बुद्ध बड़ मारी मिश्र-सत्र के साथ काशी देश में चारिका कर रहे थे । उन्होंने मिश्रुओं को आमन्त्रित किया—
“मिश्रुओं मैं रात्रि-भोजन से बिरत हो भोजन करता हूँ, उससे आरोग्य उत्साह, बस सुखपूर्वक, विहार अनुभव करता हूँ । आगो, मिश्रुओ, तुम भी रात्रि-भोजन से बिरत हो भोजन करो ।”

“बन्धा मन्ते” मिश्रुओं ने कहा ।

तब काशी देश में क्रमशः चारिका करते हुए बुद्ध जहाँ काशीवासियों का नियम ‘कीटागिरि’ था वहाँ पहुँचे । मिश्रुओं ने रात्र के भोजन के त्याग के बारे में ‘कीटागिरि’ में भी कहा । वहाँ अश्वजित् और पुनर्वसु नामक दो मिश्रुओं ने कहा—“हम प्रातः तथा मध्याह्न में विकास भोजन को करते हैं, और नीरोप करते हैं । छोड़ हम क्यों प्रत्यक्ष को छोड़कर कामान्तर के लिए सीढ़ें । हम प्रातः भी चायेंगे प्रातः भी दिन में भी विकास में भी ।”

१०. रघुपालपुत्र (७२)—‘रघुपाल’ की कथा अश्वजित् को इतनी पसन्द आयी कि उन्होंने ‘रघुपाल-नाटक’ लिखा जो संस्कृत में था, पर

मष्ट हो गया। उसका अनुबाह भी सिम्बली तथा भीनी में नहीं है। केवल पमकीर्ति के 'बादम्याय' नामक ग्रन्थ में इसका उल्लेख अरबघोष की कृति के तौर पर है। राष्ट्रपाल कुब देश के 'मुस्तकोट्टित' नियम (कस्ब) क रहने वाला मष्टिपुत्र थे। मिशु बनने के लिए माता-पिता की आज्ञा होनी आवश्यक है। किसी तरह सत्याग्रह करके उन्हें आज्ञा से मिशु-दीला सी। कुछ वर्षों के बाद उन्हूज फिर अपनी जन्मनमरी देखनी चाही। वे 'मुस्तकोट्टित' पम। जब मिला का समय हुआ तो वे अपने घर की मार गय। उनक पिता बिपसी द्वारशाला में हजामत बनबा रहे थे। वूर से उन्हें जाते देखकर पीठ-बस्त्रधारियों की निन्दा करते हुए बुदबुदाल सप—इन मुडिया न मेरे प्रियमनाप एकमात्र पुत्र को सानु बना लिया। इस प्रकार राष्ट्रपाल ने अपन घर से मिला नहीं पायी बस्कि फटकार ही पायी।

उस समय घर की बासी बासी हाल फेंक रही थीं। राष्ट्रपाल न कहा—'मगिनी यदि इसे फेंकना चाहती हो तो मेरे पात्र में डाल दो।'

तब उस उनके पात्र में डालते समय उनकी आवाज और पैरों को बासी न पहचान लिया और जाकर उनकी माँ से कहा—'मायें जानती हो मायें पुत्र राष्ट्रपाल भाव हैं?' 'यदि तू सच बोसती है तो तू जगसी होगी।' दामिता युम के दाम मनुष्य-पम से अदास होला बड़ी बात थी। माँ न इन बात को अपन पति से जाकर कहा। सेठ बाहर गया और देखा कि बीबास ने पात्र बैठे राष्ट्रपाल बासी हाल का रहे हैं।

पिता ने कहा—

"भाबो ठात्र राष्ट्रपाल घर बसें।"

"बम गृहपति भात्र मैं भाजन कर चुता।"

"तो तान राष्ट्रपाल कस ना भोजन हमारे यहाँ स्वीकार कटे।"

राष्ट्रपाल ने उस स्वीकार कर लिया।

सेठ ने घर में जा हिरण्य-मुषर्ष की बड़ी राशि करबा चट्टाई म रेंदबा कर राष्ट्रपाल की स्त्रियों में कहा—

“आओ बहुओ जिन अंसकारों से अंसकृत हो तुम भोग राष्ट्रपाल को बहुत प्रिय लगती थी उन अंसकारों से अंसकृत हो आओ।”

दूसरे दिन सूचना देने पर राष्ट्रपाल पिता के घर पहुँचे। बाहर बिष्णु मासन पर बैठ। पिता न राक्षि को खोजकर कहा—“तात राष्ट्रपाल वह तुम्हारी माता का वन है पिता का तथा पितामह का अलय है। आओ तात राष्ट्रपाल भोग भी भोग सकते हो पुष्य भी कर सकते हो। आओ तात भिक्षु-बीशा झाड़ पृहस्प अत माओं को भोगो और पुष्यों को करो।”

राष्ट्रपाल न कहा—“यदि पृहपति तू मेरी बात माने तो इस सुवर्ण-पुत्र को यादियाँ पर रखवाकर मज्जा नदी की बीच बार में डाल दे। सो किसलिए? इसके कारण तुझे शोक परिवेद तथा दुःसादि नहीं हों।”

राष्ट्रपाल की अटक आर्याएँ उनका पैर पकड़कर कहने लगी—
“आर्यपुत्र कैसी है वे अप्सराएँ, जिनके लिए तुम ब्रह्मचर्य-व्रत का पालन करते हो?”

राष्ट्रपाल न कहा—“भगिनि हम अप्सराओं के लिए ब्रह्मचर्य-व्रत का पालन नहीं करते।

भगिनि शब्द को सुनकर वे भूभ्रष्ट होकर गिर पड़ी।

राष्ट्रपाल न खीसकर पिता से कहा—“पृहपति यदि मोहन देना हो तो दो हमें कष्ट मत दो?”

इसके पश्चात् राष्ट्रपाल के पिता न आयुष्मान् राष्ट्रपाल की उत्तम भोजन करवा और भोजन करने के बाद राष्ट्रपाल न तत्त्वपुत्र पाषाणों को कहा।

राजा औरष्य अपन उद्यान में भ्रमने आनेवाले थे और हमक लिए उन्होंने अपने माती की उद्यान भूमि साफ करने को कहा। माती अपन कार्य में रत हो गया और उसी समय एक वृक्ष के नीचे दिवाबिहार-निमित्त बैठे हुए राष्ट्रपाल को उमन देगा और जाकर राजा से निवेदन किया—“देव भुम्भ

कोटित' के अचक्रुसिद्ध का पुत्र राष्ट्रपाल जिसकी प्रमत्ता आप सर्वदा करते हैं मात्र उसी उद्योग में बैठे हैं।"

उत्तरा उनसे मिसने के लिए गया और वही जाकर राष्ट्रपाल से बोला—
 "हे राष्ट्रपाल चार हानियों के कारण ही लोग प्रवृत्त होते हैं—(१) बुझावे में अप्राप्त भावों का प्राप्त करना या प्राप्त भावों को भोगना मुश्किल नहीं है इससे भी लोग प्रवृत्त हो जाते हैं और इसको अरा-हानि कहते हैं पर आपके तो केन्द्र काम है, अतएव यह आप में विद्यमान नहीं है (२) व्याधि हानि के कारण भी लोग प्रवृत्त हो जाते हैं पर आपमें तो यह विद्यमान नहीं है (३) मोहों के क्षय हो जान के कारण भी लोग प्रवृत्त हो जाते हैं पर आपके साम तो यह भी नहीं है (४) ज्ञान-हानि के कारण भी लोग प्रवृत्त हो जाते हैं, पर आपका सम्बन्ध में तो यह नहीं है और इन 'मुक्तकोटित' में बहुत से मित्र-व्यस्य आपके हैं। अतएव आप क्या जानकर देखकर या सुनकर प्रवृत्त हुए हैं ?

राष्ट्रपाल ने उत्तर दिया—“महापुत्र उन भयवान् बुद्ध ने चार भवों-इस कहे हैं जिनको जानकर मैं प्रवृत्त हुआ हूँ—(१) यह मान अशुभ है, अनिष्ट हो रहा है (२) सोक प्राण-रहित तथा आत्माप्रण-रहित है (३) सोक अपना नहीं है और सब छोड़कर जाना है तथा (४) सोक निम्न वृत्ता का बाध है।”

विभिन्न उपमाओं से इन सबका व्याख्यान राष्ट्रपाल ने उत्तरा से किया और अन्त में यह व्यक्त किया—“बुद्ध के फल की भाँति तरण और बुद्ध मनुष्य गरीर छोड़कर मिरते हैं इन भी देखकर मैं प्रवृत्त हुआ क्योंकि मैं गिरनवासा मिथुपन (आमप्य) ही घट्ट है।”

११ पात्रुपेपमुत्त (८४)—बुद्ध के प्रधान शिष्य थे—“गण्डिवुत्र भौद्धसंघायन महाकाम्यन महाशाम्पायन। महाशाव्यायन अचन्डी (मापदा) के राजा अष्टप्रदात के पुरोहित और बड़े पंडित थे। अचन्ति राज की एक कन्या मधुरा के राजा की ब्याही थी और दूसरी वासवदत्ता बत्सपत्र उद्योग

को। अबस्ति-राज की कन्या का मधुरावासी मासी पीछे 'माधुरिय' (मापुर) अबन्तीपुत्र कहा जाता था।

एक समय महाकात्यायन मधुरा के 'गुण्यवन' में बिहार करते थे। राजा अबस्तिपुत्र ने उनका वहाँ जाना सुना। वह रात्र पर पक 'गुण्यवन' गया। उसने ब्राह्मणों के मत—“ब्राह्मण ही श्रेष्ठवर्ण हैं तथा और वर्ण नीच हैं”—के बारे में उनसे पूछा।

महाकात्यायन ने बताया कि जनमान् ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य तथा सूद्र सभी के मौकर ये चारों वर्ण हो चुकते हैं अतएव इस कारण से चारों वर्ण सम हैं। दुनियाँ में यह केवल हस्ता भर है कि ब्राह्मण ही श्रेष्ठ वर्ण हैं, और वर्ण नीच हैं तथा वे ब्रह्मा के दायाद हैं।

दुराचार और सबाचार की बातों की दृष्टि देखकर महाकात्यायन ने समझाया—“ब्राह्मणों का बाबा गसत है। सभी वर्ण समान हैं।”

अन्त में संतुष्ट हो राजा ने कहा—“आज से मुझे आप अत्रसिबद्ध धरणागत उपासक स्वीकार करें।”

महाकात्यायन ने कहा—

‘महाराज तुम मेरी धारण में मत आओ। उसी मयवान् की तुम भी धारण आओ जिसकी धारण मैं गया हूँ।’

“ह कात्यायन इस समय वे भगवान् आईए कहीं जाय कर रहे हैं ?”

“महाराज वे मयवान् निर्वाण प्राप्त हो चुके।”

इसके परचात् राजा निर्वाण-प्राप्त उन बुद्ध धर्म और भिक्षु-संघ की धारण गया।

इससे यह ज्ञात होता है कि बुद्ध-निर्वाण के परचात् उनके शिष्यों द्वारा मारित भूषा का संप्रद भी बुद्धचरनों में हो गया और उन्हें भी बुद्धोपदेश की तरह ही मान्यता प्राप्त हुई। आचार्य बुद्धोप न तो इस प्रकार के मूर्खों को बुद्धमापित सिद्ध करन के लिए अपनी 'अट्टकबाजा' में जमीन-आसमान एत कर गया है।

१२ भोजिराजकुमारसुत (८५)—जासबवता तथा बसराज उदयन का यह पुत्र था। इसे माता के गर्भ से ही बूढ़ भक्त माना गया है। बूढ़ एक बार 'सुसुमारपिरि' (सुमार) के ममदास में विहार करते थे और यहीं पर उन्होंने भोजिराजकुमार से अपनी जीवनी से सम्बन्धित कुछ बातें बतलायीं। भोजिराजकुमार ने तपायत के स्वामत के लिए अपन कोकनद प्राधाय में पाँचड़े बिल्कामें। बूढ़ न जानन्द की ओर देखा। जानन्द न कहा—
"राजकुमार, भगवान् पाँचड़े पर नहीं चलेंगे आतेबासी जनता का भी स्वागत कर रहे हैं।

राजकुमार ने पाँचड़े हटा लिये। भगवान् ने उस दिन अपनी जीवनी के बारे में कहा—

"राजकुमार, उस समय मैं बहुर (नववयस्क) बहुत काल केशवाला सुन्दर जीवन से युक्त प्रथम वयस् में था माता-पिता को अमुमुस्त होते छोड़ कर से बभर हो प्रव्रिभित हो यहाँ 'आमार कासाम' था बहूँ गया। जाकर कहा—'आबुस कासाम' में इस बर्ष में ब्रह्मचर्य पालन करना चाहता हूँ।

'आमार कासाम' ने आदि-ब्रह्मचर्यायतन' प्यान तक बतलाया। मैं फिर स्वयं इस सम्बन्ध में प्रयत्न किया और शीघ्र ही उसे स्वयं प्राप्त करके बिहुरल सगा। जब अपनी प्राप्ति को मैं 'आमार कासाम' से प्रकट किया तो उसने मुझे अपन संघ का उपनेता बनाना चाहा। पर इससे तो मेरे उद्देश्य की प्राप्ति नहीं हो सकती थी अतः उसके प्रस्ताव को ठकरा कर मैं भाग बड़ा और दान्ति-वद की घोषणा करते हुए उरक रामपुत्र के पास गया।

उरक रामपुत्र न मुझ 'मैबर्षमातातंजायतन' को बतलाया। उसकी भी प्राप्ति मुझ ही गयी और उसने भी इसके बाद मुझे अपन संघ का उपनेता बनाना चाहा पर उसके प्रस्ताव को भी मुझ ठुकराना पड़ा।

मैं फिर स्वयं ही प्यान भाषनाओं का अभ्यास बढ़ी बुद्धता के साथ किया। इसके पचास वर्षों में निराहारतपस्या करन सगा। मुझ हुआ—'अतीत काल

“ही महाराज ।”

“आर्य के माता-पिता का मोत्र क्या है ?”

“महाराज पिता गार्म्य तथा माता मैत्रायणी है ।”

“आर्य गार्म्य मैत्रायणी-पुत्र अभिरमण करें । मैं भीवर, पिच्छपात समानासन श्मान-अल्पय तथा भैषज्य परिष्कारों से आर्य की सेवा करूँगा ।”

आनंद आश्चर्य प्रकट करते हुए राजा ने भगवान् से कहा—“भन्ते ब्रिसका वमन हम बंध तथा छस्त्र से न कर सक उसे भगवान् न बिना बंध तथा सन्त्र के वमन कर दिया । एसा कहकर राजा चस गय ।

इसके बाद बुद्ध ने अँगुलिमान को अपने कूट पर परचाताप करण हुए उन पूर्व कर्मों के फल को नष्ट करने के लिए उपदेश दिया । अँगुलिमान ने विमुक्ति मुक्त का अनुभव करते हुए अपने विल ध्यतीत किम्प ।

१४ विषयातिकमुत्त (८७)—इस मुत्त में एक बूसरा ही वृष्य सामने माता है । धावस्ती में एक गृहपति (बैस्य) का एकमात्र पुत्र मर गया । उसे अपना कर्मान्त (पेसा) अष्ठा न लगता था न भोजन । वह सोमों के पास जा कन्दन करता था—“कहाँ हो मेरे एकमात्र पुत्र । भगवान् के पास भी जाकर उसने वही बात बुहरायी ।

भगवान् ने कहा—“यह ऐसा ही है गृहपति छोकर कन्दन मुत्त वीमंभस्म परेषानी आदि त्रिय-जातिक है त्रिया से उत्पन्न है ।” उसे यह बात जैकी नहीं । वह चला गया । नुजा भर में भी हमकी चर्चा चली । सहान भी कहा—

“यह एसा ही है गृहपति आमन्द त्रियजातिक ही है ।”

जवा बढ़ते-बढ़ते राजा के अन्तपुर में चली गयी । रानी मस्तिजा बुद्ध की बहुत मन्त्र थी । प्रसेनजित् ने उससे ताना बैसे कहा—“ठिरे धमण न यह कहा है—दुचा त्रियजातिक है ।”

“महाराज यदि भगवान् न ऐगा कहा तो यह होता ही है ।”

“ऐसा नहीं मस्मिका जो-जो भयम मीठम कहता है, उसका ही वू अनुमोदन करती है, क्योंकि गुद जो-जो कहे, वेसा उसी को बुहराता है— यह ‘ऐसा ही है’ । जस इट यहाँ से मस्मिका ।”

मस्मिका देवी ने ‘भासीबकु’ ब्राह्मण को भगवान् के पास पुछने के लिए भजा । जाकर उसने कहा—“गौतम मस्मिका देवी आप के चरभों में बन्दना करती है, और पूछती है क्या भगवान् न कहा—दुःख प्रियजातिक है ?”

भगवान् ने ‘हाँ’ कहा ।

१४. ब्रह्मसुत्त (११)—बुद्ध की चारिका विदेह में हो रही थी । उस समय १२० वर्ष की आयुवासा एक बूढ़ महस्तक ब्रह्मण्यु ब्राह्मण मिथिसा में रहता था । उसन भी बुद्ध के विषय में यह भगस शब्द सुना कि वे बहंद् हैं सम्मक सम्बुद्ध हैं आदि । उसने इसकी सत्यता की जाँच करन तथा बुद्ध को बेसकर अपन विचार को उसके पास तक पहुँचाने के लिए उत्तर नामक अपन माणवक को भेजा । उस शिष्य से जन्होंने जाँचन क मापदण्ड-स्वरूप महापुरुषों के बत्तीस कसना आदि को भी बतसा दिया ।

जाकर उसने पहले उनके शरीर में बत्तीस महापुरुष सदाया की विद्यमानता को परखा और तत्परभात् उनक र्स्यापन का भी अवसोदन किया और मिथिसा में जाकर इस सम्पूर्ण बुत्तास से ब्रह्मण्यु को परिचित कराया—

“वे जसते समय पहल दाहिना ही पैर उठते हैं न बहुत दूर पैर उठाते हैं न बहुत समीप न अति पीछ जसते हैं न अति देर से । बिना अबमारम करते मीठम सारी काया से अवलोकन जैसे करते हैं । गृहम्बा के पर के भीतर काया को न उठाते हैं न झुकाते हैं न हाथ का अबसम्ब लकर आसन पर बैठते हैं । पात्र में जस भेते समय पात्र को न ऊपर उठान है न पात्र को नचाते हैं । न भोजन (भात) न बहुत अधिक न बहुत कम ग्रहण करते हैं । जो-तीन बार करके मुल में घास को चबाकर खाते हैं । बुद्ध उनके शरीर पर नहीं विरता ।

हमने जन पीठम को बमन करते देखा खड़ हुए देखा, भीतर प्रवेश करते देखा घर में बुधबाप बैठे देखा भोजनोपरमत्त भोजन का अनुमोदन करते देखा आराम में जाते देखा आराम के भीतर बुधबाप बैठे देखा, आराम के भीतर परिपक्व को समोपदेश करते देखा ।”

पीछे ब्रह्मायु ब्राह्मण स्वयं मित्रिणा में बुद्ध के दर्शन के लिए गया और उपदेश सुनकर उभय उपासक बना ।

१६ बोटकमुत्तमुत्त (१४)—बोटकमुत्त (बोड़े जैसे मुहवाला) ब्राह्मण किसी काम से बाघमती आया था । एक दिन क्रुमते हुए वह समिक नामक धामवन में जा निकसा । वहाँ माजुप्पान् उदयन टहल रहे थे । बोटकमुत्त से बात शुरू होते ही वे उदयन के चकूतरे (चटकनन) से उतरकर, बिहार में प्रविष्ट हो आसन पर बैठ लगे और ब्राह्मण से बोले—

“ब्राह्मण आसन मीजूब है इच्छा हो तो बैठो ।”

“जाप उदयन की इस आज्ञा की प्रतीक्षा में ही मैं था । मेरे जैसे पुंस्य बिना निर्ममल के कैसे आसन पर बैठ जावेगा ।”

एक नीचा आसन ले बैठकर उस ब्राह्मण ने कहा—“जो धर्म यहाँ है वही हमारे लिए प्रमाण है ।”

“ब्राह्मण यदि मेरी किसी बात को स्वीकरणीय समझना तो स्वीकार करना धरणीय समझना तो संज्ञ करना और मेरे जिस वचन का अर्थ व समझना उसे मुक्त ही पुण्या ।”

इसके पश्चात् बुद्ध ने उसे उपदेश दिया । उपदेश सुनने पर बोटकमुत्त ने सबसे धरनिबद्ध उपासकत्व का प्रस्ताव किया । इस पर उदयन ने कहा—

“ब्राह्मण तू मेरी शरण मत जा उसी पश्चात् की तु भी शरण जा, जिसकी शरण मैं गया हूँ ।”

बोटकमुत्त ने पुछा—“व पश्चात् कहाँ है ?”

इस पर उदयन ने बताया कि जगका तो निर्बल ही गया ।

घोटकमुस ने कहा—“निर्वाण-प्राप्त उन भगवान् की उनके धर्म को तथा उनके सब की हम चरण बाते हैं और मङ्गलराम वही वैदिक मुझे भिक्षा देता है उन पाँच ही कार्यापनों की भिक्षा को मैं आपको समर्पित करता हूँ ।

उदयन ने कहा—“ब्राह्मण हमारे लिए सोना-चाँदी ग्रहण करना कस्य नहीं है ।”

“यदि यह विहित नहीं है तो मैं आपके लिए बिहार बनवाऊँगा ।”

“यदि मेरे लिए बिहार बनाना चाहते हो तो पाटलिपुत्र में मंत्र की उपस्थाननामा बतवा दे ।”

घोटकमुस ने उनके आदेशानुसार पाटलिपुत्र में उपस्थाननामा बनवायी जो आज भी ‘घोटकमुली’ कही जाती है ।

१७. चासेद्रुमुस (६८)—“उ सुत में बुद्ध ने बन्ध-व्यवस्था का संहन प्रस्तुत किया है । एक समय भगवान् ‘इण्ड्यानङ्गम’ में बिहार करते थे । उस समय बहुत से भविष्यवात ब्राह्मण यथा—ब्रह्मि, तारण आनुधोमि ‘तोवेय्य’ तथा दूसरे ‘इण्ड्यानङ्गम’ में ही निवास करते थे ।

बुद्ध के वहाँ आने पर चासिष्ठ तथा भारद्वाज माणवों में इन सम्बन्ध में बहुत विद्व मयी । दोनों ने मस्त में यह निश्चय किया कि इन सम्बन्ध में बुद्ध से पूछकर ही अपना निर्णय करेंगे । जाकर बुद्ध से उन्होंने अपना-अपने परा भी बतलाये कि एक जाति से तथा दूसरा कर्म से ब्राह्मण होने की मानता है । बुद्ध ने कहा—

‘प्राथियों की जातियों में एक दूसरे से जाति का भेद है जैसे तुण और बल में कीट पतंग और कीटी छोटे बड़े बीपाय जसबरे, आवागचापि बसियों आदि में जाति का भिन्न विद्यमान है पर इन प्रकार का जाति-भिन्न मनुष्यों में असम-असम नहीं है । मनुष्य के किसी भङ्ग को मज पर भी यह जातिभेद भिन्न नहीं प्राप्त होता । मनुष्यों में भेद सिर्फ मंत्रा में है ।

अतः कर्म के अनुसार जो मोरजा से बीबिका करता है वह कुपक है जो चित्त से बीबिका करता है वह चित्नी है जो व्यापार से बीबिका बिभित करता है वह बीरव है आदि ।

नासा तथा योनि से उत्पन्न होने के कारण कोई ब्राह्मण नहीं होता प्रस्तुत ब्राह्मण वह है, जो अपरिच्छिही हो ।

कमल के पत्र पर जल तथा आरे की शोक पर स्थित धरती की प्रति जो भोषों में निष्ठ नहीं है, वही मेरे अनुसार ब्राह्मण है ।”

इस प्रकार विस्तृत विवरण प्रस्तुत करते हुए बुद्ध म बर्ष-व्यवस्था का बंजन किया । वे सब उनके उपायक हुए ।

१८. सामनामसूत (१०४)—इस सूत में 'विबप्यनासूत' (जैन तीर्थङ्कर महावीर) के पात्र में मरने और उनके पात्रों में सदा होने की बात का उल्लेख है । यह कथा 'बीबिकाय' में भी आयी है । खबर लानेवाले बुद्ध भ्रमणोरुप थे । इस सूत में बौद्ध विद्यालया का विवरण तथा व्याख्या प्रस्तुत किया गया है ।

१९. शोषकमोक्षलानसूत (१०८)—इस सूत म बुद्ध-निर्वाण के शोक समक बार की घटनाओं का उल्लेख है । उक्त समक आयुष्मां आनन्द राजपुत्र में बुद्ध के 'कसलकनिवाप' में विहार कर रहे थे । मयवराज अजातशत्रु अवस्थितक प्रयेत के मय ल नगर में रत्ना की वैमारिया कर रहा था । आयुष्मान् आनन्द अपन मित्राचार के लिए निकल । पर अभी बहुत समय था अतः समक व्यतीत करण के लिए व 'शोषक-मोक्षलान' क यहाँ मय । वही पर मयक-महामात्य बर्षकार ब्राह्मण तथा उप-नन्द सनापति भी आये । वहाँ पर शोषकमोक्षलान' म आपन से करा—

“जो आनन्द गया आप सबमें कोई एक तिसु भी एसा है, जो कि सारे क सारे जन समों से मुक्त हो, जिनसे कुछ मयकाल् बुद्ध थे ?”

आनन्द म उक्तकी बात की छोड़कर बर्षकार के प्रश्नों का उत्तर देते हुए कहा कि ब्राह्मण हम बर्ष-व्यतिरारण है । और इसके परवात् व्याख-

जाबदा आदि का म्याक्मान किया। अन्त में गोपक के प्रश्नों का उत्तर देते हुए उन्होंने कहा कि हममें एक भिक्षु भी ऐसा नहीं है जैसा कि तुमन पूछा है। आजकल के धावक मार्ग-अनुगामी हो बिहार रहे हैं।

मगध और अजन्ती दोनों अपनी-अपनी शक्ति बढ़ा रहे थे। अन्त में मगध अपना साम्राज्य स्थापित करने में सफल हुआ।

२०. महेश्वरसमुत्त (१३१)—इस मुत्त में यह विषय भी गयी है कि मनुष्य को मृत तथा भविष्य की चिन्ता छोड़कर वर्तमान की ही चिन्ता करनी चाहिए। बुद्ध ने भिक्षुओं को उपदेश दिया—

“अतीत का अनुभव न करे और न भविष्य की चिन्ता में पड़े। जो अतीत है, वह मर चुका है तथा और भविष्य तो अभी आया ही नहीं। गुत्त दिन निरासक्त्य तथा उद्योगी होकर बिहारनेवाल को ही ‘महेश्वर’ कहते हैं।”

२१. पुष्पोत्तमसमुत्त (१३२)—आयुष्मान् पूर्ण न मगधान् बुद्ध से अपने लिए संश्लेषण बर्णोपदेश करने को कहा जिससे वे (पूर्व) एककी एकान्तवासी संयमी अग्रमादी और उद्योगी होकर बिहार कर सकें।

बुद्ध ने उन्हें संश्लेषण बर्णोपदेश दिया और पूछा—“पूज्य भरे इस संश्लेषण उपदेश से उपविष्ट होकर तू कौन से जन्मपर में बिहरेगा ?”

पूर्व ने उत्तर दिया—“मन्तु ‘शून्यापरान्त’ नामक जन्मपर है मैं वहीं बिहार करूँगा।”

उनकी इच्छा की परीक्षा लन के लिए बुद्ध ने इस सम्बन्ध में उनसे और प्रश्न किये और बिना अधिकतम हुए पूर्व ने उन सबका उत्तर दिया—

“पूर्व शून्यापरान्त के मनुष्य बन्ने तथा कठोर है यदि वे तुम बुद्धाध्य आदि कहकर ठेठ आश्रयण करेंगे तो तुम कैसा जन्मा ?”

“मन्ते यदि एसा होमा तो मुझ तो यही अनुभूति प्राप्त होगी कि शून्यापरान्त के मनुष्य भद्र है और वे मुझ पर हाथ में प्रहार नहीं करते।”

“यदि पूर्व यहाँ के मनुष्य तुम पर हाथ से प्रहार करें तब तुम्हें कैसा जन्मा ?”

‘मत्ते मुझे एसा होगा कि वहाँ के मनुष्य मर ही, जो मुझे उँडे से नहीं मारते ।

“यदि पूर्ण सूनापरान्त के मनुष्य कुछ तीक्ष्ण शस्त्र से मार डालें तब तुझे क्या होमा ?”

‘मत्ते मुझे एसा होमा—उन भगवान् के कोई-कोई शिष्य अपनी बिल्वगी से लंग भाकर और ऊबकर आत्महत्याके शस्त्रहारक सोचते हैं सो मुझे यह शस्त्रहारक बिना सोचे ही मिल गया ।”

इन सबको सुनकर बुद्ध ने कहा—“साधु साधु, पूर्ण ! साधु, पूण ! ! तू इस प्रकार के शम-दम से मुक्त हो सूनापरान्त जनपद में रह सकता है ।”

भगवान् के बचनों का अनुमोचन कर पूर्ण सूनापरान्त के लिए वहाँ से बस दिये और वहाँ पहुँच कर उसी वर्ष के वर्षा-काल में पाँच सौ उपासक/तथा पाँच सौ उपासिकाओं को ज्ञान की उपसम्पि उन्होंने करायी और स्वयं भी तीनों विद्याओं की प्राप्ति की और दूसरे समय परिनिर्वाण को प्राप्त हुए ।

‘मज्झिमनिकाय’ का वर्णन यहाँ संक्षेप में प्रस्तुत किया गया है । इस निकाय में ‘बेरवाह’ सम्प्रदाय के आचार्यसाम्प्रदाय सभी दार्शनिक सिद्धान्तों का विवेचन है अतएव इसे ‘बुद्धबचनानामृत’ की संज्ञा से विभूषित किया जाता है ।

इसमें अधिकतर सुत्त बुद्ध द्वारा ही उपदिष्ट हैं मज्झि बुद्ध एते सुत्तों का भी संग्रह हममें है जिन्हें ‘सारिपुत्त’ तथा ‘महाकच्चायन’ आदि बुद्ध के शिष्यों ने कहा था । अरु भी इनके सम्बन्ध में कह दिया गया है । इन सुत्तों के अतिरिक्त ‘माधुरिय’ तथा ‘पोटकमुत्त’ आदि कुछ एम भी सुत्त हैं, जो बुद्ध के परिनिर्वाण के पश्चात् उनके शिष्यों द्वारा कहे गये हैं । बुद्धबचन का संग्रह जिस प्रकार से क्रमान्तर में सम्पन्न किया गया हम पर इन सबसे वास्तविक प्रमाण प्राप्त होता है ।

तीसरा अध्याय

३ संयुक्तनिकाय

मुत्तपिटक का तीसरा निकाय 'संयुक्तनिकाय' है। यह पाँच बगों तथा छप्यन संयुक्तता में विभक्त है। 'नालन्दा दबनामरी पाणि ग्रन्थमाला' के अन्तर्गत प्रकाशित इस निकाय की पृष्ठ-संख्या निम्नप्रकार है—

प्रथम भाग (सपायबग्ग)	२४१
द्वितीय भाग (विद्यानबग्ग तथा लन्धबग्ग)	४८६
तृतीय भाग (सल्लापत्तनबग्ग)	३४३
चतुर्थ भाग (महाबग्ग)	४०७
योग	<hr/> १४८२

यदि पृष्ठों के आधार पर 'रीचनिकाय' के अनुसार इसका भाणवारां का हम विभाजन करें, तो यह संख्या समान १३४ होती है तथा ग्रन्थप्रमाण ४८० होता है। भिद्यु जयश्री कादम्प न उपर्युक्त मागरी संस्करण में 'संयुक्तनिकाय' में भूत्रों की संख्या २६४१ मानी है यद्यपि परम्परानुसार यह संख्या भिन्न ही है। इसी संस्करण के आधार पर 'संयुक्तनिकाय' का पूर्ण विभाजन नीचे प्रस्तुत किया जायेगा।

यह निकाय पाँच 'बग्ग' (बगों) में विभक्त है और प्रत्येक बर्ग में विभिन्न 'संयुक्तों' (संयुक्तों) का संग्रह किया गया है। बर्ग हैं—(१) सपायबग्ग (२) विद्यानबग्ग (३) लन्धबग्ग (४) सल्लापत्तनबग्ग तथा (५) महाबग्ग। इन बगों में वैषतासंयुक्तानि विभिन्न ३६ 'संयुक्त' संग्रहीत हैं। इसका पूर्ण विवरण नीचे प्रस्तुत किया जा रहा है —

१ समाधयवग (= २७१ सूत्र)

समुत्त		सूत्र-संख्या
१	(१) वेवठासंपुत्त	८१
२	(२) वेवपुत्त०	३०
३	(३) कोसल०	२३
४	(४) मार०	२५
५	(५) निक्खुमी०	१
६	(६) बहू	१३
७	(७) बाह्मण०	२२
८	(८) बज्जीस०	१२
९	(९) वन०	१४
१०	(१०) वक्ख०	१२
११	(११) सक्क०	२३

२ निदानभाग (= २६६)

१२	(१) निदान०	१३
१३	(२) अग्निममय०	११
१४	(३) धानु०	३९
१५	(४) वनमत्तम्प०	२०
१६	(५) कम्मप०	१३
१७	(६) काममवकार	४३
१८	(७) गहूम०	२२
१९	(८) मक्कपज	२१
२०	(९) ओरम्म	१२
२१	(१०) मिक्ख०	१२

३ अण्यभाग (= ७१६)

२२	(१) सग्ग	१३९
----	----------	-----

२३ (२) राम०	४६
२४ (३) विष्टि०	६६
२५ (४) मोक्षन्त०	१०
२६ (५) जप्पाद०	१०
२७ (६) किस्सेस०	१०
२८ (७) सारिपुत्त०	१०
२९ (८) भाग०	५०
३० (९) सुपण्ण०	४६
३१ (१०) गमम्भ०	११२
३२ (११) बलाहक०	५७
३३ (१२) बण्डगात्त०	५५
३४ (१३) क्षान०	५५

४ सञ्जायतनवग्ग (= ४३४)

३५ (१) सञ्जायतन०	२४८
३६ (२) बहना०	३१
३७ (३) मातुगाम०	३८
३८ (४) जम्बुत्थारक०	१६
३९ (५) सामण्डक०	१६
४० (६) मोग्गहत्तान०	११
४१ (७) वित्त०	१०
४२ (८) गामणि०	१३
४३ (९) अमहुत्त०	४४
४४ (१०) मय्याकत्त०	११

५ महावग्ग (= १२२४)

४५ (१) मग्ग०	१८१
४६ (२) बोम्मङ्ग०	१८६

४७. (३) सतिपट्टान०	११०
४८. (४) इन्द्रिय०	१८०
४९. (५) समप्यमान०	२५
५०. (६) बल०	११०
५१. (७) इन्द्रियाद०	८६
५२. (८) अनुद्वन्द्व०	२४
५३. (९) ज्ञान०	५५
५४. (१०) ज्ञानायान०	२०
५५. (११) सोत्तापत्ति०	७४
५६. (१२) सत्त्व०	१३७

बर्गों तथा संयुक्तों के नामों से ही उनमें वर्णित विषय के बारे में ज्ञान होता है। 'सगायबग्ग' के नाम से ही प्रकट है कि इसमें 'प्राये हुए मुक्त वाचकों से युक्त है। 'निदानबग्ग' में प्रतीत्यसमुत्पादवाद के नाम से संसार चक्र की व्याख्या की गयी है। 'सम्बन्ध' में पञ्च-स्कन्ध का विवेचन है पर इस सम्बन्ध में स्कन्धों की वार्षनिक व्याख्या न प्रस्तुत करके केवल यही बारबार कहा गया है कि रूप अनित्य है अनात्म है दुःख है आदि। 'संक्रायतनबग्ग' में पञ्च-स्कन्धवाद तथा संक्रायतनवाद दोनों के सिद्धान्त प्रतिपादित हैं तथा 'महाबग्ग' में बोध धर्म वर्णन और साधना के महत्त्व पूर्ण सिद्धान्त पर व्याख्यान विद्यमान है।

यहाँ पर स्वामीपुत्राक व्याप स 'संयुक्तिकाय' के कुछ मुक्त का भाव लिया जा रहा है। कुछ देश (मेरठ जमिन्दारी) की लोककथाओं में प्रन्तोत्तर करने की रीति है और वही 'सगायबग्ग' में भी प्राप्य है—

१ कतिदिग्गमुत्त (११.५)—

“वितने को काट, वितने को छोड़
 वितन और अधिक का अन्वय करे ?
 वितन संघों को पारकर कोई भिद्य,
 'बाड़ पार कर गया' कहा जाता है ?

“पाँच को काटे, पाँच को छोड़ दे
पाँच और अधिक का अभ्यास करे।
पाँच संघों को पारकर भिक्षु,
‘बाढ़ पार कर गया’ कहा जाता है।”

२ जागरमुत्त (११६)—

“जाग हुआँ में कितने सोये हैं,
सोये हुआँ में कितने जागे हैं ?
कितन से मैल सग जाता है,
कितने से परिशुद्ध हो जाता है ?”

‘जाग हुआँ में पाँच सोये हैं
सोये हुआँ में पाँच जागे हैं।
पाँच से मैल सग जाता है
पाँच से परिशुद्ध हो जाता है।’

३ नत्थिपुत्तसममुत्त (१११३)—

“पुत्र के समान कुछ प्यारा नहीं
मौझों के समान कोई धन नहीं।
सूर्य के समान कोई प्रकाश नहीं
मन्द सबसे महान् जतराति है”

“अपने के समान कोई प्यारा नहीं
बान्य के समान कोई धन नहीं।
प्रजा के समान कोई प्रकाश नहीं
बुद्धि सबसे महान् जतराति है।”

४ अठामुत्त (११२३)—

इस मुत्त में वे ही प्रसिद्ध वायाएँ हैं जिन्हें मिहान के स्वधिरों ने आचार्य
बुद्धजोय की परीक्षा मन के लिए उम्हें दिया था। उनका व्याख्यान में आचार्य

में 'विमुञ्चिमन्' जैसे यन्त्रों को प्रस्तुत करके अपनी योग्यता प्रमाणित की थी—

"भीतर में जटा (लगी है) बाहर भी जटा ही जटा है'
 सभी चीज जटा में बरतते उलझे पड़े हैं,
 इसलिए, हे मौलम आपसे पूछता हूँ,
 कौन इस जटा को मुक्तता सकता है?"

'शौन पर प्रविष्टिस्त हा प्रजायाम् मनुष्य
 चित्त और प्रज्ञा की भावना करते हुए'
 तपस्वी और विवर्णनीय मित्र ही
 इस जटा को मुक्तता सकता है।

जिनके राग द्वेष और अविद्या

विस्तृत हुए चुकी है

को जीनासक नहीं है

उनकी जटा मुक्त नहीं है।

वहाँ मास और रूप

विस्तृत निरुद्ध हो जाते हैं

(जहाँ) प्रविष्ट और सम्-संज्ञा भी (निरुद्ध हो जाते हैं)

वहाँ यह जटा कट जाती है।"

१ 'विमुञ्चिमन्' के इनका व्याख्यान इस प्रकार से है—"आत्म-कैवल्यवासी तुलना ही जटा कही गयी है। वह क्याहि आत्मस्वर्णों में ऊपर नीचे बारम्बार उत्पन्न होने और गुण जाने के कारण आत्म इत्यादि के साह की भाँति मानों जटा बँटी हो। इसी से तुलना ही यहाँ जटा कही गयी है। कही स्वकीय-परिष्कार, पर-परिष्कार, स्वात्मभाव वरमात्मभाव आत्म्यात्मा यत्न तथा बाह्यायत्न इत्यादि में उत्पन्न होने से 'भीतर की जटा' और 'बाहर की जटा' कही गयी है।

२ 'चित्त और प्रज्ञा की भावना करते हुए का तात्पर्य समाधि तथा 'विपस्वता' (विरागा) भावना से है।

५ पाषेव्यमुत्त (११७१)—

“क्या राह-खर्च बाँधता है
भोगों का वास किसमें है ?
मनष्य को क्या बसीट से जाता है
ससार में क्या छोड़ना बड़ा कठिन है ?
इतन जीव किसमें बँध है,
जैसे जाल में कोई पक्षी ?”

“अबदा राह-खर्च बाँधती है
ऐश्वर्य में सभी भोग बधते हैं ।
इच्छा मनष्य को बसीट से जाती है,
ससार में इच्छा को छोड़ना बड़ा कठिन है ।
इतन जीव इच्छा में बँधे हैं
जैसे जाल में कोई पक्षी ।”

६ प्रद्योतमुत्त (११८०) —

“सोक में प्रद्योत क्या है,
साक में कौन जाननेवासा है ।
प्राणियों में कौन काम में सहायक है
और उसके बसने का रास्ता क्या है ?
कौन आसपी और उछायी दोनों को
रखा करता है, जैसे माता पुत्र को ?
किसक हाने से सभी जीवन पारण करते हैं,
जितन प्राणी पृथ्वी पर बधते हैं ?”

“प्रजा सोक में प्रद्योत है,
स्मृति सोक में जागती रहती है ।
प्राणियों में बँध काम में साप देना है
और जोत उनके बसने का रास्ता है ।

बुद्धि आससी और उद्योगी दोनों की
रक्षा करती है जैसे माता पुत्र की
बुद्धि के होन से सभी जीवन बराल करते हैं,
जितने प्राणी पृथ्वी पर बसते हैं।”

इसके द्वितीय 'समुत्त' 'देवपुत्तसमुत्त' में देवपुत्रों ने बुद्ध से जो प्रश्न किये हैं
और उनका जो उत्तर उनके द्वारा प्रस्तुत किया गया है, वह सभी संज्ञहीन है—

७. अनामपिण्डिकमुत्त (१२२०)—

इसमें अनामपिण्डिक द्वारा अननाम जेतवनाराम का वर्णन है। १२११
में मेरे गुरु श्री बर्मानन्द महास्वविर (संका) जेतवन में गन्धकुटी के सामन
बैठ होकर जिस समय इन गाथाओं को पढ़ रहे थे उस समय उनकी
भाँसों से अविरल अश्रुधारा बह रही थी। (वह लंडहर बना जेतवन बैसा
ही था) गाथाएँ—

“यही वह जेतवन है,
आपियों से सेवित
बर्मराज (बुद्ध) जहाँ बसते हैं
(वह) मुझमें बड़ी श्रद्धा उत्पन्न करता है ।

इस निनाय का द्वितीय 'समुत्त' 'कोसलसमुत्त' है जिसके प्रायः सारे
मुत्त राजा प्रसेनजित् (कोसल के राजा) से सम्बन्ध रखते हैं।

८. बहरमुत्त (१३१)—

भगवान् जेतवन में बिहार कर रहे थे। उस समय कोसलराज प्रसेन-
जित् भयवान् के पास आया और शिष्टाचार आदि दिलभाकर एक ओर
बैठ गया और भयवान् से बोला— आप मौनम क्या अनुत्तर पूर्व बुद्धत्व
पा सने का दावा नहीं करते ?”

“महापुत्र यदि कोई किमी को सबभुष सम्पन्न सम्बुद्ध बनें तो वह
मुझ को ही कह सकता है महापुत्र मैं ही उस अनुत्तर बुद्धत्व का
माझालाकार किया है।”

“हे गौतम जो दूसरे अमन और ब्राह्मण हैं—संप्रदासे गयी, गणाचार्य विख्यात यशस्वी तीर्थङ्कर, बहुत सोंगों से सम्मानित जैसे—पूर्वकाश्यप, मन्करीगोशाम निर्धन्य मातृपुत्र ‘सञ्जय वेसद्विपुत्र’ प्रकृम कात्यायन, अजित केशकम्बमी—ज भी मुझसे पूछ जाने पर अनुत्तर सम्मक सम्बुद्धर पात का दावा नहीं करते हैं। आप गौतम तो आयु में भी छोटे हैं और मध-नये प्रवृत्ति भी हुए हैं।”

“महाराज चार ऐसे हैं जिनको ‘छोटे हैं’ समझ बबन्ना या अपमान करना उचित नहीं। कौन से चार ? (१) दक्षिण को, (२) चाप को, (३) बाग का और (४) मिथु को ।”

बुद्ध न फिर कहा—

“जैसे कुम में जन्म बड़ यशस्वी क्षत्रिय को
‘छोटा है’ जान कम न समझ उसका कोई अपमान न करे।

गौतम में या अंस में कहीं भी जो चाप देखे
‘छोटा है’ जान कम न समझे उसका कोई अनादर न करे।

सपटा में सब कुछ जमानेवाली कामे माग पर असनेवासी भाग को,
‘छोटा है’ जान कम न समझ कोई उसका अनादर न करे।

३३३

३३३

बिन्दु जिते शील-सम्पन्न मिथु अपने तेज से जमा देता है,
बहु पुत्र पम दामाद या धन कुछ भी नहीं पाता
निःसन्तान निर्धन गिर बट तास कुछ-मा हो जाता है।
इममित्य, पश्चित्त पुरुष अपनी मसार्ड का ब्यास कर
मौन जाग यन्मन्वी क्षत्रिय
और शील-सम्पन्न मिथु के साथ टीक से वेग भावे ।”

इम उद्धरण में यह भी पता चलता है कि बुद्ध अपने समय के सभी तीर्थङ्करों से भाव में छोटे थे।

६ मस्तिष्कामुत्त (१३.५)—

मस्तिष्का साधारण कृम की कन्या थी पर अपने मुनों से कोसलराज प्रसेनजित् की बड़ी प्रिय राणी हो गयी । एक बार राजा उमर महल पर था उसने बेबी से कहा—“मस्तिष्क तुझे क्या कोई अपने से भी अधिक प्रिय है ?” “मुझे अपने से बड़कर कोई प्रिय नहीं है ।” राजा न कुछ के पास जाकर यही बात कही । उन्होंने गाया कही—

“तुमी बिराजों में अपने मन को बँझा

नहीं भी अपने से प्यारा कोई दूसरा नहीं मिला

वैसे ही दूसरों को भी अपना बड़ा प्यारा है

इसलिए, अपनी नभलाई चाहतवाला दूसरे को मत सताव ।”

१०. पञ्चसङ्ग्राममुत्त (१३.१४)—

मगधराज अजातशत्रु ने चतुर्दशवीं सेना ले काशी (देस) में प्रसेनजित् पर आक्रमण किया । राजा प्रसेनजित् ने मुना । प्रसेनजित् भी चतुर्दशवीं सेना तैयार कर काशी गया । उस ब्रह्म म अजातशत्रु न प्रसेनजित् को जीत लिया । पराजित होकर वह अपनी राजधानी भावस्ती सीटा । यह सबार मित्रजनों से कुछको मिला ।

कुछ न कहा—“मित्रजनों अगधराज अजातशत्रु बँदहिपुत्र बुरे लोगों से मिलने-जुमनेवाला और बुराईको की पहचान करनेवाला है और कोसलराज प्रसेनजित् मसे लोगों से मिलने-जुलनपात्र और भलाईको की पहचान करनेवाला है । विलु हार कामे हुए कोसलराज की यह रात मारी वन में बीतेगी—

“जय वीर को पैदा करती है,

हारा हुआ वन से सीता है

पाम्य वन हार-जीत की बातों को छोड़

मुत्त से सीता है ।”

११. बुद्धिपतङ्गामुत्त (१३.१५)—

राजा अजातशत्रु सेना ले काशी में सङ्ग आया । मुनवर प्रसेनजित् भी गया । दोनों सटे । प्रसेनजित् ने अजातशत्रु को जीत लिया उसे

जिन्दा ही विष्णुसार कर लिया । प्रसेनजित् न सोचा—“राजा अज्ञात-
सञ्च जानि से रहनबान मेरे साथ होह करता है तो भी तो मेरा भाँजा ही
है । क्यों न मैं अज्ञातसञ्च के सारे हस्तिसमूह, सारे अश्वसमूह, सारे रथकाय
सारे पदाति (दौबल) समूह को लेकर उसे पीठा ही छोड़ दूँ । उषन
बैसा ही किया ।

मिहजुओं ने यह बात भगवान् से कही ।

भगवान् न कहा—

“अपनी मर्जी भर कोई मूटवा है
जित्नु जब पूछे मूटने समते है,
तो वह मूटनबाना मूटा जाता है ।

इस तरह अपन क्रिय कम के कर में पड़
मूटनबाना मूटा जाता है ।”

१२ बीतुपुत्र (१११६)—

उत्पन्न में राजा प्रसेनजित् भगवान् के पास था उही समय एक
मादमी ने आकर प्रसेनजित् क भान में कहा—“देव मस्तिष्का बेबी को
पुत्री हुई । राजा यह सुनकर उषान हो गया । इसे जानकर भगवान् ने
कहा—

“राजन् कोई-काई स्त्रियाँ भी पुरयों से बड़ी-मड़ी
बुद्धिमती दामबती साठ की सेवा करलबासी और पतिव्रता होती है,
मत पालन-पोषण कर ।
उससे दिगम्बों को जीतनेवाला महामूरबीर पुत्र उत्पन्न होता है
बैसी जण्ठी स्त्री का पुत्र राज्य का अनुमानन करता है ।”

भाटने संयुक्त ‘बह्नीसन्पुत्र’ में अधिकतर ‘बह्नीसि’ द्वारा उचित मापाएँ
है । वे एत स्वामाधिक कवि से । अपने पूर्व जीवन के बारे में उन्होंने स्वयं
मिया है—

१३ सुभासितसुत्त (१.८.३)—

भगवान् श्रावस्ती के जेतवनारायण में थे । वहाँ पर उन्होंने सुभाषित की प्रशंसा की । उसी समय आपुष्पाम् 'बज्जीस' न बुद्ध से कुछ कहने का अवकाश चाहा । भगवान् न उसकी आज्ञा दी । 'बज्जीस' बोले—

‘उसी वचन को बोले जिससे अपम को अनुताप न हो,
और, दूसरों को भी कष्ट न हो, वही वचन सुभाषित है ।
प्रिय वचन ही बोल जो सभी को सुखान
को दूसरों के दोष नहीं निकालता वही प्रिय बोलता है ।
सत्य ही सर्वोत्तम वचन है, यह सनातन धर्म है,
सायं जब और बम में प्रतिष्ठित संन्यतों में कहा है ।
बुद्ध जो वचन कहते हैं, धर्म और निर्वाण की प्राप्ति के लिए,
दुःखों को अन्त करने के लिए, वही उत्तम वचन है ।’

१४ बज्जीससुत्त (१.८.१२)—

भगवान् श्रावस्ती में जेतवनारायण में विहार करते थे । उसी समय तुरन्त ही अर्द्ध पर पाये विमुक्ति मुक्त का अनुभव करते हुए आपुष्पाम् 'बज्जीस' के मुख से ये वाक्याएँ निकलीं—

‘बहुते वैश्व कविता करते बिबरला रहा, पाँच से पाँच और बाहर से बाहर,
तब सम्बुद्ध भगवान् का दर्शन हुआ, मन में बड़ी यत्ना उत्पन्न हुई,
उन्हींमे स्वर्ग आयतन तथा पालुर्वा के विषय में मुझ भर्तृहृदय दिया
जलक उपदेश को मुक्त मैं पर से बंधन हो प्रश्रित हो गया ।
बहुतों को बर्ष-सिद्धि के लिए, मुनि में बुद्धत्व का साम हुआ
निष्ठा और भिक्षुचिन्ता के लिए, जो नियम को प्राप्तकर देव तिय है ।
आपका मेरा स्वागत हो, बुद्ध के पास मुझे
तीन विचारें प्राप्त हुई हैं बुद्ध का गायन सफल हुआ ।
पूर्व जन्मों की बात जानता हूँ विषय बहुत विस्तृत हो गया है,
नीचिण और अद्विष्टान् हूँ दुःखों के चित्त की जानता हूँ ।’

१३ तालपुटमुत्त (४४२२)—

राजबृह के बेलुकन की बात है । उस समय 'तालपुट' नामक नरों का धामिनी (मत्ता) भगवान् के पास आया और उसने भगवान् से पूछा—
"मन्ते मैन पूर्व के जाचार्यों-प्राचार्यों को कहूँ सुना है—'जा नर रंय के मध्य में तथा 'समग्गा' व मध्य में अपने अस्मिन्त्य से लोगों का हँसाता तथा रमक करता है, वह काया झोड़ने पर मरने के बाद 'प्रहास' नामक स्वभावों के साथ पैदा होता है ।"

'तालपुट' ने इस प्रश्न का कुछ न उत्तर देना स्वीकार नहीं किया और कहा—
"रहूँ वो धामिनि मुझसे मठ पूछो । यह ठीक नहीं है ।"

उसम वो बार पूछा पर कुछ ने वही उत्तर दिया । जब उसने तीसरी बार पूछा तो कुछ ने इसका व्याख्यान करते हुए कहा कि ऐसा कहना एक प्रकार की मिथ्यावृत्ति है । वे साथ मरण के बाद 'प्रहास' नामक मरक में जात है ।

'तालपुट' ने जब यह सुना तो उसकी झीलों में आँसू आ गये । कुछ ने समझाया कि इसी कारण से वे उसके प्रश्न का पहले व्याख्यान नहीं कर रहे थे ।

'तालपुट' ने कहा—
"मैं भगवान् का उत्तर मुनिकर नहीं रो रहा हूँ प्रसूत रो इसलिए रहा हूँ कि अतीत के महाचार्यों ने शार्पकाल तक लोगों को ठगा था वे ऐसा कहा करते थे ।"

उत्तरवान् वह कुछ के पास प्रवेशित एवं उपमन्त्र हुमा ।

'संपुत्तनिकाय' का संक्षेप में बयान यही है । इसमें आये हुए विवरण पर यदि हम विचार करें तो इसी निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि सम्पूर्ण 'सुत्तपिटक' में दानविक दृष्टि में 'संपुत्तनिकाय' का महत्त्वपूर्ण स्थान है ।

चौथा अध्याय

४ अद्भुत्तरनिकाय

'अद्भुत्तरनिकाय' में प्रायः २३०८ सूत्र तथा ११ $\frac{१}{२}$ पृष्ठों का एक मासवार मानन पर प्रायः १४५ भाष्यकार होत हैं। यह संख्या परम्परा द्वारा प्राप्त 'बहुकथा' की संख्या से कम नहीं जाती। 'समन्तासादिका' में इसके ६३५७ सूत्रों का उल्लेख तथा अथर्व भाष्यकारों की संख्या १२० बतायी गयी है। इसमें सूत्रों में अर्धित विषयों को एक, दो तथा तीन आदि के क्रम में रखा गया है जिसे 'अद्भुत्तर' (अद्भुत्तर) कहते हैं। सूत्रों की संख्या अधिक होने के कारण उनका छोटा होना आवश्यक है। इसका मूल चार भागों में भिक्षु अथर्वीस वासप के सम्पादनकाल में 'आमत्या देव तापटी पालि ग्रन्थमाला' से प्रकाशित हुआ है तथा इसके प्रथम भाग का अनुवाद हिन्दी में मदगत आनन्द कीसल्यावन न किया है जिसे महाबोधि समा भारताय के प्रकाशित किया है।

'अद्भुत्तरनिकाय' में प्याह 'निपात' है, जो बनरु 'अम्मा' (बनों में विभक्त है तथा ये 'अम्म' काय यथास्यान सूत्रों में विभक्त है। इन विभिन्न 'निपातों' में 'अम्मा' का निम्नलिखित क्रम से विभाजन है—

निपात	अम्मा-संख्या
१ एकननिपात	२०
२ दुननिपात	१७
३ तिननिपात	१६
४ चतुस्रनिपात	२७
५ पञ्चननिपात	२६
६ छाननिपात	१
७ सप्तननिपात	१०

८. अष्टकनिपाठ	१०
९. नवकनिपाठ	६
१०. दसकनिपाठ	२२
११. एकादशकनिपाठ	३

सिद्धित होने के पहले 'निकाय' कच्छस्म करसिये पय बे । अतएव प्रथमतः इनकी रक्षा स्मृति द्वारा ही हुई । बाद में (बट्टगामणि अमय ४४-१७ ई० पू०) ये सिद्धिबद्ध किये गये । श्रुतिपरम्परा के वेदपाठियों की भाँति दीर्घमात्रक मञ्जिममात्रक संयुक्तमात्रक अष्टवृत्तरमात्रक तथा पुष्टकमात्रक—य 'पञ्चमहायिक' कहे जाते थे । उस समय रक्षा का साधन कितना मंगुर था । कस्यता कौञ्जिए, यदि कासदोष से एक ही 'दीर्घमात्रक' बचा और वह भी बस बसा तो उसके साथ 'दीर्घनिकाय' भी मृत् । जैनपिटक में ऐसा ही हुआ है । अधिक समय तक कच्छस्म रखने पर जोर होम के कारण मात्र जैनपिटक का अद्यमान ही शेष रह पाया है ।

कमज एव दो अङ्गों के कम से मुक्तों का स्मरण रखना स्मृति के अनुसार सरल होता है । इसलिये इस शैली का अपनाया गया और 'अष्टवृत्तरनिकाय' इसका स्पष्ट उदाहरण है । यही शैली 'दीर्घनिकाय' के 'संज्ञीतिपरिचयानुक्त' में भी विद्यमान है ।

'अष्टवृत्तरनिकाय' का प्रारम्भ इस प्रकार से होता है—

एककनिपाठ

ऐसा मैन मुना । एक समय भगवान् श्रावस्ती में अनापपिण्डिक के अठवनाराम में बिहार करते थे । वहाँ पर भगवान् न मिसुनों को आमन्त्रित किया—“मिसुनों ।” “मदन्त” कह मिसुनों न भगवान् को उत्तर दिया । भगवान् ने यह कहा—

“मिसुनों मैं ऐसा एक भी अग्य रूप नहीं देखता हूँ जो पुरुष के चित्त को पकड़ कर रखता हो, जैसा कि स्त्री-रूप । मिसुमा, स्त्री-रूप पुरुष के चित्त का पकड़ कर रखता है” आदि ।

यह एक संख्या के अनुसार रूप की बात हुई । बाबे कर्मण स्त्री-ग्रन्थ, स्त्री-ग्रन्थ स्त्री-रस तथा स्त्री-स्पर्श आदि का व्याख्यान है । फिर इसी प्रकार स्त्री को लेकर पुरुष के रूपादि के सम्बन्ध में भी एसा ही कहा गया है ।

बुद्धनिपात

'बुद्धनिपात' दो बर्णों की गणना से प्रारम्भ होता है । इसमें दो प्रकार की स्वात्म्य वस्तुएँ, दो प्रकार के ज्ञानी पुरुष, दो प्रकार के बाल, दो प्रकार की बरियतों, दो प्रकार की इच्छामों आदि का विवेचन है । उदाहरणार्थ—

भिक्षुबो, वे दो प्रकार के बर्ण्य है—(१) प्रत्यक्ष बर्ण्य (२) सम्परायिक बर्ण्य ।

प्रत्यक्ष बर्ण्य क्या है ? जैसे भिक्षुबो, नीर को ज्ञाय मदानबास को तथा भोग पचड़कर नाना प्रकार की ठाढ़ना बैठ है—कोड़ से भी मारते हैं, बेंत से भी मारते हैं हाथ पैर, कान, नाक आदि भी उतारा कटवा देते हैं आदि । उन्हें कोई पुरुष देखकर यह सोचता है कि जन्मरुक्त अवस्थाओं में यह व्यक्ति इन प्रकार के दर्शों को प्राप्त कर रहा है । यदि मैं भी एसा ही करूँगा तो इतना भायी हूँगा । इससे डरकर वह इन कार्यों को नहीं करता । यही प्रत्यक्ष बर्ण्य है ।

सम्परायिक बर्ण्य क्या है ? कोई पुरुष यह सोचता है कि काम वाली तथा मन आदि से होना बाबे बुद्धियों का भुग बिचार होता है । मैं एना करूँ कि इन बिचारों को मुझे न भीचना पड़े । अतः सम्परायिक बर्ण्य से डरते हुए, वह इन सबसे बिरत होकर, इनके विपरीत स्वभावों का सेवन करता है । सम्परायिक बर्ण्य यही है ।

इन प्रकार से भिक्षुबो के दो बर्ण्य हैं । इसलिये, भिक्षुबा इन प्रकार से निराह बहूत करनी चाहिए कि हम प्रत्यक्ष बर्ण्य तथा संपरायिक बर्ण्य इन दोनों में डरान हुए रहेंगे । एना रहन हुए हम सभी बर्ण्यों से मुक्त हो जायेंगे ।

दो की गणना की परिणामाप्ति के पश्चात् ज्ञाय के 'निपातों' में जगदा तीन चार, पाँच छह सात आठ नव दश तथा प्यारह आदि की गणना

है। जब त्रिपिटक का कच्छप्य ही रखना था तो स्मरणशक्ति को सुममता प्रदान करने के लिए अनेक उपाय किये गये। उन्हीं में से एक यह थीसी भी थी।

तिकमिपात

इसमें तीन प्रकार के दुष्कृत्य (क्राधिक वाचिक तथा मामतिक) तथा तीन प्रकार की बेवनापों आदि का विवेचन है। इसके सुत उवाहरणस्वरूप नीचे दिये जाते हैं —

१ हृत्पकमुत्त (१४३)—एक समय भगवान् बुद्ध 'आञ्जली' में मार्गों के मार्ग में मिरम्बक में पत्त के बिछीने पर बिहार करत थे। तब हृत्पक भागवक न भगवान् को वहाँ बैठे देखा। देखकर, भगवान् के पास जा अभिवादन करके एक धार बैठ गया और उनमें बोला—

“मन्त भगवान् मुन से तो सोये ?”

“हाँ कुमार, सुष से सोया जो लोक में मुन से साये हैं मैं उनमें से एक हूँ।”

“मन्त यह हमन्त को शीतल रात हिमपात का समय अन्तराष्टक (भाग क अन्त के चार दिन तथा पद्मसुत के भाषि के चार दिन) है। गावों क घूर से कही हूँ जमीन तीली है। पत्तों का कासन पतला है। बृक्ष के पत्र बिरल हैं। कापाय बरस शीतल है। धीर्वात् वायु शीतल है, तब भी भगवान् ऐसा कहत हैं—हाँ कुमार मुन से सोया ।”

“तो कुमार, तुम ही पूछता हूँ जैसा तुम ठीक सम जैसा मत उत्तर दे। तो क्या कुमार तिसी गृहपति या गृहपति-भूत का मीमा-मोता वायु रहित हागबन्द विहारी-बन्द कूपापार (काञ्च) हो वहाँ चार अमृत पोम्नीन का बिद्या पट्टी-बिद्या वापीन-बिद्या उत्तम कम्पी-मृगधर्म बिद्या वनों भार नाम लक्ष्मीशाना ऊपर बिनामनामा पत्ता हो तेय प्रशोर भी जस रहा हो चार मुम्बर मार्वातें भी हाबिर हों ता भी
कह पाए के पाएके कि यमी ?”

“मझे बह बुद्ध से सोचना जो लोक में मुझ से सोते हैं जगमें वे बह एक हीगा ।”

“तो क्या मानते हो कुमार, यदि जब गृहपति या गृहपति-पुत्र को पद से उत्पन्न होनेवासे काविक या मानसिक परिचाह (उत्पन्न) उत्पन्न ही तो उक्त उत्पन्न-परिचाहों से प्राप्त हुए क्या बह बुद्ध से सोचना ?

“हाँ मझे ।”

“कुमार, ये गृहपति या गृहपति-पुत्र बिना उत्पन्न-परिचाह से बुद्ध से सोते हैं तथामत का बह गट्ट हो गया है । इसलिए मैं बुद्ध से सोता हूँ ।

परिनिर्वात (मुक्त) ब्राह्मण सर्वदा बुद्ध से सोता है,

जो कि शीतल-स्वभाव उपाधि-युक्त कामों में लिप्त नहीं है

सब आसक्तिषुओं को क्षिप्रकर बुद्ध से मन को हटाकर,

मन में ध्याति प्राप्तकर उपसन्न हो (बह) बुद्ध से सोता है ।”

२ कैसपुत्तिपुत्त [कालामसुत्त] (३०२)—एक बार बुद्ध कोसल में चारिका करते हुए कालामो के निवास स्थान ‘केसपुत्त’ नामक विषम में पहुँचे । कालामो ने इसे सुना । वे बुद्ध के दर्शन के लिए मग और उनका अभिवादन आदि करके उन्हींके भयवान् से पूछा—

‘मझे कोई-कोई भयम-ब्राह्मण ‘केसपुत्त’ में जाते हैं । वे जपन मठ की पचना करते हैं दूसरे के मठ की निन्दा करते हैं उभे झुड़वाने हैं । मझे दूसरे भी भयम-ब्राह्मण यहाँ जाते हैं और वे भी एसा ही करते हैं । तब हम इन बारे में संघय अचरम होता है—कौन आप इन भयम-ब्राह्मणों में सच कहता है और कौन झूठ ?”

बुद्ध ने उत्तर दिया—“कालामो, तुम्हारा संघय ठीक है तथ्य-बोध स्थान में ही तुम्हें संघय उत्पन्न हुआ है । जाओ कालामो, मठ तुम अनु-श्रवण से विचार करो मठ परम्परा से विचारम करो ‘बह एसा ही है’ इसमें भी तुम मग विचारत करत कालामो माम्ब धाएत की अनुकूलता से भी (पिटक सम्प्रदाय से) तुम मग विचारत करो मग ठक से मन म्याय

हेतु से मत बक्ता के आकार के विचार से मत अपने चिर-धारित विचार के होन से मत बक्ता के भव्य रूप होने से मत 'भ्रमण हमारा पुरु है' इस भावना से कासामा मत इन सब कारणों से तुम बिदबास करो ।

बल्कि, कासामो जब तुम अपने आप ही जानो कि ये धर्म अमुदास है, य धर्म सर्वोप ही, य धर्म विज्ञ-निन्दित है य ग्रहण करने पर अहितकर तथा बुद्धोत्पादक होंगे तो उन्हें छोड़ देना ।”

इसके पश्चात् बुद्ध ने उन्हें सोम द्वय तथा मोह के स्वरूप को बताते हुए उन्हें त्यागन की बेगना थी ।

किटना बुद्धिबारी दृष्टिकोण इस सुप्त द्वारा व्यक्त किया गया है कि किसी वस्तु को बिना उसकी परीक्षा के न माना जाय । बुद्ध इस प्रकार का दृष्टिकोण अपने धर्म के सम्बन्ध में भी रखते थे । यह सुप्त स्पष्टरूप से विश्वजनीन महत्त्व को व्यक्त करता है । साथ ही इसे समझाकर 'सवा-चार का जीवन किस प्रकार के किसी भी आस्थासत की अपेक्षा नहीं रखता इसे बहुत अच्छी प्रकार न व्यक्त किया गया है ।

३ पञ्चमसिद्धतापरमुत्त (३.२६)—“मिसुबो डाई सी शिक्षापप (प्रातिमाग नियम) प्रत्यक पन्द्रहवें दिन बाँध जाते हैं और इन्हीं की शिक्षा अती भारी चाहनेवाले कुलपुत्र लभ ह । पर ये सभी इन तीन शिक्षाओं में समाहित हो जाने हैं । कौन से तीन में ? अधिशीस-शिक्षा में, अधिचित्त-शिक्षा में और अधिप्रज्ञा-शिक्षा में ।”

इनके पश्चात् बुद्ध ने इन शिक्षाओं के द्वारा 'सोतापत्ति' आदि फलों की प्राप्ति कैसे होती है' इसका विवरण किया ।

चतुष्कनिपात

इन निपात में चार संख्या को लहर चार आर्षमत्प चार ज्ञान चार धामध्य-कर्म चार समाधि चार योग तथा चार प्रकार के आहार आदि का उल्लेख है । उदाहरणस्वरूप इनके कुछ सुप्त नीचे दिये जा रहे हैं —

१ पठमसंवासरुत्त (४१३)—एक बार भगवान् मधुरा और 'शेरञ्जा' के बीच के रास्ते में जा रहे थे। बहुत से गृहपति तथा गृहपत्नियाँ भी उसी रास्ते से जा रही थीं।

भगवान् मार्ग छोड़कर एक पेड़ के नीचे बैठे। उन गृहपतियों आदि न उन्हें वहाँ बैठ देखा और आदर अभिवादन करके उनके पास बैठ गये। भगवान् ने उनसे कहा—

“गृहपतियो ये चार प्रकार के संवास है। कौन से चार? एक सब के साथ संवास करता है (२) सब बेबी के साथ संवास करता है, (३) देव सब के साथ संवास करता है तथा (४) देव बेबी के साथ संवास करता है।

कैसे गृहपतियो सब सब के साथ संवास करता है? यहाँ गृहपतियों, पति हिंसक और, दुष्टाचारी शूल नष्टावाज दुष्टीत पापकर्मी कर्मही की जित्यगी से लिप्य विलबामा भ्रमण-शास्त्रों को दुर्बचन कहलबाला हो इस प्रकार से वह गृह में वास करता हो और उसकी भार्या भी उसी के समान हिंसक और, दुष्टाचारिणी भ्रमण-शास्त्रों को दुर्बचन कहनेवाली हो तो ऐसी परिस्थिति में सब सब के साथ संवास करता है।

गृहपतियो, पति हिंसक और, दुष्टाचारी भ्रमण-शास्त्रों को को दुर्बचन कहलबाला ही किन्तु उसकी भार्या अहिंसा-रत शोचि-रहित सदाचारिणी सच्ची मर्यादिरत मुशीला बस्यान-धर्म-युक्त मम मास्वर्य-रहित भ्रमण-शास्त्रों को दुर्बचन न कहलबाली हो, तो ऐसी परिस्थिति में सब बेबी के साथ संवास करता है।

गृहपतियो, यदि पति अहिंसक आदि हो और उसकी भार्या हिंसा-रत आदि हो तो ऐसी परिस्थिति में देव सब के साथ संवास करता है।

गृहपतियो, पति अहिंसा-रत शोचि-रहित सदाचारी आदि हो और उसकी भार्या भी ऐसी ही हो तो ऐसी परिस्थिति में देव बेबी के साथ

२ मस्तिष्कासुप्त (४२०७)—रामा प्रसेनवित् की प्रिय रानी 'मस्तिष्का' देवी बुद्ध में बड़ी थड़ा रहती थी जिसका राजा भी मजाब उड़ाता था ।

मगवान् जलवन में बिहार करते थे । उनके पास मस्तिष्का देवी जाती तथा धनिवादन आदि करके मगवान् से उन्हेंन पूछा—“मन्ते क्या बात है जो कोई-कोई स्त्री बुर्बुध् बुर्बुध् दर्शन में बड़ी दरिद्र अल्प-सामर्थ्य अल्प भोग तथा अल्प-सम्पत्ति वाली होती है तथा क्या कारण है जो कोई-कोई इनके विपरीत गुणवासी होती है ?”

बुद्ध ने उत्तर दिया—“मस्तिष्का कोई-कोई स्त्री उपायासबहुल तथा कोपी होती है । सोझा-मा भी करने पर उस बात को मन में बाँध लेती है कोप करती है द्वेष करती है तथा अविद्वान प्रकट करती है । वह धमध तथा ब्राह्मणों को अन्न अस्त्र पान माभा मय आदि देनेवासी नहीं होती और दूसरे के साम-सत्कार मान तथा पूजा में ईर्ष्या करती है और मन को दूषित करती है । यदि वह वहाँ से श्रुत होकर पुन स्त्रीत्व को प्राप्त करती है तो बुर्बुध् बुर्बुध् दर्शन में बड़ी दरिद्र अल्प-सामर्थ्य अल्प-भोग तथा अल्प सम्पत्ति वाली होती है ।

मस्तिष्का कोई-कोई स्त्री कोपी होती है पर पर-साम-सत्कार आदि में ईर्ष्या नहीं करती तथा धमध एवं ब्राह्मणों को अन्नपानादि का दान देने वाली होती है । यदि वह वहाँ से श्रुत होकर स्त्रीत्व को प्राप्त करती है, तो बुर्बुध् तथा बुर्बुध्पति होती हुई, पर महाधनवासी आदि होती है ।

मस्तिष्का कोई-स्त्री कोप-रहित होती है तथा उपायागरहित होती है । बहुत बहन पर भी किसी बात को मन में नहीं बाँधती । न कोप करती है न द्वेष करती है न अविद्वान प्रकट करती है । वह धमध तथा ब्राह्मणों को अन्नपानादि का दान देनेवासी नहीं होती और दूसरे के साम-सत्कार मान तथा पूजा आदि में ईर्ष्या करती है तथा मन को दूषित करती है एवं ईर्ष्या को मन में बाँधती है । यदि वह वहाँ से श्रुत होकर स्त्रीत्व को पुन

१ पठमसंवात्तसुत्त (४६३)—एक बार भगवान् मणुष्य और 'देवता' के बीच के रास्ते में जा रहे थे। बहुत ही गृहपति तथा गृहपत्नियों भी उसी रास्ते से जा रही थीं।

भगवान् मार्ग छोड़कर एक पेड़ के नीचे बैठे। उन गृहपतियों आदि से उन्हें वहाँ बैठ देखा और जाकर अभिवादन करके उनके पास बैठ गए। भगवान् ने उनसे कहा—

“गृहपतियो, य चार प्रकार के संवास हैं। कौन से चार? एक एक के साथ संवास करता है, (२) एक देवी के साथ संवास करता है, (३) देव एक के साथ संवास करता है तथा (४) देव देवी के साथ संवास करता है।

सँभे गृहपतियो एक एक के साथ संवास करता है? यहाँ गृहपतियों पति हिंसक, चोर, दुराचारी, गुण्डा, भ्रष्ट, दुःखी, पापपूर्ण, कर्जुता की विन्दागी से सिद्ध बिलबासा भ्रष्ट-शाहूनों को दुर्बचन कहनेवाला हो। इस प्रकार से वह गृह में वास करता हो और उसकी भार्या भी उसी के समान हिंसक, चोर, दुराचारी, भ्रष्ट-शाहूनों को दुर्बचन कहनेवाली हो तो ऐसी परिस्थिति में एक एक के साथ संवास करता है।

गृहपतियो, पति हिंसक, चोर, दुराचारी भ्रष्ट-शाहूनों को दुर्बचन कहनेवाला हो, किन्तु उसकी भार्या अहिंसक, चोरी-रहित, धराचारी, सच्ची, न्याय-विरत, मुनीता, न्याय-धर्म-युक्त, मन-मात्स्वर्ग-रहित, भ्रष्ट-शाहूनों को दुर्बचन न कहनेवाली हो तो ऐसी परिस्थिति में एक देवी के साथ संवास करता है।

गृहपतियो, यदि पति अहिंसक आदि हो और उसकी भार्या हिंसक आदि हो तो उसी परिस्थिति में देव एक के साथ संवास करता है।

गृहपतियो, पति अहिंसक चोरी-रहित धराचारी आदि हो और उसकी भार्या भी ऐसी ही हो तो ऐसी परिस्थिति में देव देवी के साथ संवास करता है।”

२ मस्तिष्कामुत्त (४२०७)—राजा प्रसेनजित् की प्रिय रानी मस्तिष्का' देवी बुद्ध में बड़ी श्रद्धा रखती थी जिसका राजा भी मजाक उड़ाता था ।

मगवान् जलवन में बिहार करता था । उनका पास मस्तिष्का देवी आयी तथा अभिवादन आदि करके मगवान् से उन्होंने पूछा—“मन्ते क्या बात है जो कोई-काई स्त्री बुर्बर्ष्य दुस्स्य बचन में बड़ी बरिद्ध अल्प-सामर्थ्य अल्प भाग तथा अल्प-सम्पत्ति वाली होती है तथा क्या कारण है जो कोई-कोई इनके विपरीत गुणवासी होती है ?”

बुद्ध ने उत्तर दिया—“मस्तिष्का कोई-कोई स्त्री उपायासबहुत तथा क्रोधी होती है । बोझ-भा भी कहने पर उस बात का मन में बाँध सती है कोप करती है द्वेष करती है तथा अविश्वास प्रकट करती है । वह समन तथा ब्राह्मणों को अन्न बस्त्र पान भासा गन्ध आदि दानवासी नहीं होती और दूसरे के साम-सत्कार मान तथा पूजा में ईर्ष्या करती है और मन को दूषित करती है । यदि वह वहाँ से श्रुत होकर पुनः स्त्रीत्व को प्राप्त करती है तो बुर्बर्ष्य दुस्स्य दसंम में बड़ी बरिद्ध अल्प-सामर्थ्य अल्प-भाग तथा अल्प सम्पत्ति वाली होती है ।

मस्तिष्का कोई-कोई स्त्री क्रोधी होती है पर पर-साम-सत्कार आदि में ईर्ष्या नहीं करती तथा समन एवं ब्राह्मणों को अन्नपानादि वा दान देन-वासी होती है । यदि वह वहाँ से श्रुत होकर स्त्रीत्व का प्राप्त करती है, तो बुर्बर्ष्य तथा दुस्सादि होती हुई, पर महापतनवासी आति होती है ।

मस्तिष्का, कोई-स्त्री क्रोध-रहित होती है तथा उपायासरहित होती है बहुत कहन पर भी किसी बात को मन में नहीं बाँधती न कोप करती है न द्वेष करती है न अविश्वास प्रकट करती है । वह समन तथा ब्राह्मणों को अन्नपानादि वा दान देनवासी नहीं होती और दूसरे के साम-सत्कार, मान तथा पूजा आदि में ईर्ष्या करती है तथा मन को दूषित करती है एवं ईर्ष्या को मन में बाँधती है । यदि वह वहाँ से श्रुत होकर स्त्रीत्व को पुन

प्राप्त करती है तो जहाँ जन्म लेती है दर्शनीय प्रासादिक एवं परम-बर्ष-पीण्ड्य से मुक्त होती है पर वह धरिष्ठ अल्प ऐश्वर्य-युक्त अल्प कोप तथा अल्प जन वाली होती है ।

मस्त्रिका कोई स्त्री श्रेष्ठ-रहित होती है तथा उपामास-बहुम नहीं होती बहुत कहने पर भी किसी बात को मन में नहीं बाँधती न कोप करती है न द्वेष करती है न अविश्वास करती है वह भ्रमण तथा ब्राह्मणों को अन्न पानादि का दान देनेवाली होती है तथा दूसरे के लाभ-सुखार आदि में ईर्ष्या करने वाली नहीं होती मन को दूषित नहीं करती है एवं ईर्ष्या को मन में नहीं बाँधती है । यदि वह वहाँ से श्रुत होकर स्त्रीत्व को पुनः प्राप्त करती है तो जहाँ जन्म लेती है दर्शनीय प्रासादिक एवं परम-बर्ष-पीण्ड्य से मुक्त होती है और वह भनी ऐश्वर्य-युक्त महाकोप-युक्त तथा सम्पत्तिशालिनी होती है ।

मस्त्रिका इन्हीं कारणों से स्त्रियों उपर्युक्त अवस्थाओं को प्राप्त होती है” ।

बुद्ध के ऐसा कहने पर मस्त्रिका ने अपन वर्तमान जीवन से उन्हें अलग कर दिया—“इस जन्म में मैं दुर्बल्य हूँ और इसका कारण भी उपर्युक्त ही रहा होगा और जो मैंने भ्रमण तथा ब्राह्मणों को अन्नपानादि का दान दिया होगा उसी कारणों से मैं सम्पत्तिशालिनी भनी तथा महा ऐश्वर्य वाली हूँ । जो राजा के वहाँ क्षत्रिय ब्राह्मण तथा वैश्य कर्णार्थ हैं सब पर मेरा अधिकार है । अब से भन्ते मैं श्रेष्ठ नहीं करूँगी न ईर्ष्या आदि करूँगी बहुत कुछ कहने पर भी मन में नहीं बाँधूँगी तथा भ्रमण एवं ब्राह्मणों को अन्न पानादि का दान दूँगी पर-लाभ-सुखार तथा भ्रमण आदि में ईर्ष्या नहीं करूँगी । आज से जन्मानु मुझे अश्वत्थिबुद्ध उपासिका समझें” ।

पञ्चकनिपात

इसमें पाँच की संख्या लेकर विवेचन प्रस्तुत है तथा पाँच भक्तियोंवाली समाधि पाँच उपादान स्कन्ध पाँच इन्द्रियाँ पाँच 'निस्तरणीय' वानु, पाँच धर्मस्कन्ध पाँच विमुक्ति और पाँच आपत्तनों आदि का व्याख्यान है ।

१ चुन्दीमुत्त (५२४)—बुद्ध राजगृह के बधुवन के 'कल्पवृक्ष-निवास' में बिहार करते थे । उस समय 'चुन्दी' राजकुमारी पाँच सौ वर्ष में पाँच सौ कुमारियाँ के साथ भगवान् के पास गयी और उन्हें अभिवादनमादि करके बोली—

“धने हनारे प्राया चुन्द’ राजकुमार यह कहत है कि जो स्त्री अथवा पुरुष बुद्ध धर्म तथा सब की वरण गया है हिंसा चारी काम में निष्प्राणार, झूठ बोलना मुरा-मेरुय आदि के पात्र आदि से बिरत है, वह इस गरीर को छाड़ने के बाद मुक्ति का ही प्राप्न होता है बुक्ति को नहीं ।

बुद्ध ने कहा—“चुन्दी जितन प्राणी बिना वैरबास दो वैरबास चार वैरबास बहुत-से वैरबास साकार, निराकार, मज्जो वसंती आदि है उनमें तथागत अर्हन् सम्पक् सम्बुद्ध अथ कह जात है जितन 'मल्ल' अथवा 'असंत' धर्म है उनमें बिछम अथ है जितन संघ अथवा धर्म है उनमें तथागत का आचर-संघ सब से अथ है जितन मील है उनमें आर्यों (धर्या) द्वारा पामित धीय ही अथ है । जो इन अर्थों (अर्थों) में प्रसन्न रहता है उमका अथ बिगाक होता है ।”

छवकनिपात

इस निपात में बुद्ध ने भिक्षु के उन छह गुणों का उल्लेख किया है जिनमें वह पूज्य तथा मान्य प्राप्त करन योग्य हो जाता है । यहाँ पर छह अनुस्मृतिगण, छह आध्यात्मिक भावतनों तथा छह अनिज्जयों आदि भी बचा है । इसके उल्लेखनीय सुत 'पठमप्राहुनस्यमुत्त' 'महाणाममुत्त' 'महा-वज्जानमुत्त' 'निम्बानमुत्त' 'भबमुत्त' तथा 'तथ्यामुत्त' आदि हैं ।

सत्तननिपात

यहाँ पर मात्र बस सात सम्बोधन मात्र अनुभव मात्र सद्धम मात्र संगार्य तथा मात्र मन्तुर्य धर्म आदि बिबक्षित है । उदाहरणस्वरूप—

“निगुमो, य मात्र बहू है । कोन-से मात्र ? अज्ञान-मय ह्यी-बन 'कोणय' बन स्मृति-बन समाधि-बन तथा प्रज्ञा-बन” आदि ।

अट्टकनिपात

इसमें आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग आठ आरम्भ वस्तुओं आठ अभिमायतनों तथा आठ विमोक्षों आदि का वर्णन है। इसमें 'पञ्चापठिपम्बस्वामुत्त' में महाप्रजापति योतभी की प्रत्रय्या का विसङ्गम उन्हीं शब्दों में वर्णन है, वैसे कि विनयपिटक के 'बुल्लवग्ग' में।

अवकनिपात

नव प्रकार के व्यक्तियों नव संज्ञाओं नव तृप्ता मूसक तथा नव सत्वा-वासों आदि का उल्लेख यहाँ पर है। एक स्थान पर यह भी कहा गया है कि 'एग' 'दोस' 'भोह' 'कोब' 'उपनाह' 'मक्ख' तथा 'पसास' का परित्याग करके व्यक्ति ब्रह्मत्व को प्राप्त करता है।

बसकनिपात

इस निपात में तथागत के बस बसों बस आर्यवासों दस सयोजनों आदि का उल्लेख है। बस संज्ञाओं का भी व्याख्यान यही पर विद्यमान है और बस पारिसुद्धियों की भी गणना यही पर की गयी है। इन्हीं के प्रसङ्ग में छाबु तथा अछाबु दोनों का विवेचन भी हुआ है। इसके उल्लेखनीय सुत्तों में 'पठममहापम्हामुत्त' तथा 'सीहनादमुत्त' आदि मुख्य हैं।

एकादसकनिपात

यहाँ पर निर्वाण प्राप्ति के साधनों आदि का उल्लेख है और इन सबमें म्यारह की संख्या को लेकर यह सब कहा गया है। इसके उल्लेखनीय सुत्तों में 'पठमउपनिस्सामुत्त' 'सुल्लम्हामुत्त' 'मज्झिमनिकायमुत्त' 'पठममहाणाममुत्त' तथा 'मुमुत्तिमुत्त' आदि मुख्य हैं।

इस प्रकार से हम देखते हैं कि संख्या ११ प्रश्नोत्तर की प्रणाली जिसका विवरण 'सुद्धपाठ' के 'कुमारपम्हा' में विद्यमान है तथा जो 'दीपनिकाय' के 'दमुत्तर' तथा 'खङ्गीति' सुत्तों में भी है, का आशय ग्रहण करके इस निकाय का संग्रह हुआ है और तथागत द्वारा व्यक्त धर्म के आन्तरिक रहस्यों के स्वरूप को समझाने में अत्यन्त सहायक होने से यह महत्त्वपूर्ण है। बुद्धप्रणीत

मोनह महाजनपदा का भी इस निशाय में बिदाप बणन प्राप्त है जिनका नाम उन-उन प्रेक्षों के निवासियों के आचार पर था । मौगोसिक बणना क साथ ग्राम-निगमों आदि का बणन हान से यह बुद्धवाचीन बानावरण का हृदयकम करन में अत्यन्त महापक है ।



पाँचवाँ अध्याय

५ सुहृदनिकाय

चार विधायों के अतिरिक्त बृहत्सूक्त का जिसमें संग्रह हुआ वह सुहृद निकाय है। अम्मपद सुतनिपाठ-जैसे सबमों का संग्रह होने से छारे सुहृद निकाय का बहुत पीछे की कृति नहीं माना जा सकता। पर इसमें एक नहीं कि कुछ पीछे की ओरें इसमें संगृहीत है। इस निकाय में निम्न ग्रन्थ हैं—

(१) सुहृदपाठ	(९) बेरीयाषा
(२) अम्मपद	(१०) जातक
(३) चशान	(११) निहस
(४) इतिबुक्त	(१२) पटिसम्मिबाम्म
(५) सुतनिपाठ	(१३) अपदान (अपदान तथा पेरीपदान)
(६) विमानवत्सु	(१४) बुद्धमंस
(७) पेटवत्सु	(१५) अरियापिटक
(८) बेरयाषा	

सिंहम परम्परा इन पन्द्रह ग्रन्थ को सुहृदनिकाय का अंग मानती है। 'निहस' को 'सुसनिहस' और 'महानिहस' से मानने पर यह संख्या सोलह हो जायगी। 'अभिबम्म अब तीसरा पिटक नहीं माना जाता या तो उसे भी इसी निकाय के अन्तर्गत मानते हैं। बर्मा में उपर्युक्त पन्द्रह ग्रन्थ के अतिरिक्त चार और अन्य सुहृदनिकाय में मान जाते हैं, जो य हैं—

(१) मिसिन्वपम्ह, (२) सुतसङ्गह, (३) पेटकोपसेस और (४) नेत्तिप्यकरण। इनमें 'मिसिन्वपम्ह' बृहत्सूक्त जैसे हो सकता है, जो यवन राजा गिनान्दर के पुत्र नायधन की कृति है। स्वामी परम्परा (१) विमानवत्सु (२) पेटवत्सु (३) बेरयाषा (४) अरीयाषा (५) जातक

(६) अपगत (७) बुद्धवंश और (८) चरियापिटक आदि ग्रन्थ को भी सुहृदिकाय के अन्तर्गत नहीं स्वीकार करती। इन ग्रन्थों में बस्तुतः धम्मपत्र सुतनिपाठ उदात्त इतिवृत्तक ही प्राचीन मामूम होत है। विस्तार में सुहृदिकाय बाकी चारों निवायों से बड़ा है।

इन निकाय के ग्रन्थों का सामान्य परिचय नीचे प्रस्तुत किया जा रहा है—

१ सुहृदपाठ

यह छाटा-भा ग्रन्थ भिक्षुमा के लिए प्रथम पुस्तक है जिसमें तिस्रण्य दश विधापर कुमात्प्रश्न 'मङ्गलमुत्त' 'रतनमुत्त' आदि पाठ हैं।

कुमार प्रश्न बच्चों के सवाल-जबाब का संग्रह है—

“एक बस्तु क्या है ? सारे प्राणी आहार पर स्थित हैं।

वा ? वा है काम और रूप।

तीन ? तीन वेदनाएँ, (दुःख मुख म-दुःख न-मुत्त)।

पाँच ? पाँच स्वर्ग।

छह ? पत्थर के भीतर के छह आयतन।

सात ? सात बीज्यज्ञ।

आठ ? आठ अष्टाङ्गिक मार्ग।”

इसके 'मङ्गलमुत्त' 'रतनमुत्त' 'मत्तामुत्त'—जैसे मूत्रों में उच्च आशया की सिद्धा है। 'मत्तामुत्त' महा सिंहास के चिह्नों में स्वर के माय पड़ा जाता है—

“दोनों भी कोई एसी चीज नहीं कानी जात्रिए, त्रिमयी त्रिज निन्दा करें।

सारे प्राणी मुन्नी समवान् आर मुग्गमा हारों।

माना जैम अपन अकेल पुत्र की प्राणों के समान रसा करती है

वैये ही सारे प्राणी अतिविगास मन एवें।

सारे सारु में ऊपर-नीच तिरछ अरियाण अतिविगास मन की भावना करें।”

२ धम्मपद

४२३ गाथाओं के इस छोटे-से ग्रन्थ में बुद्ध के उपदेशों का सार आ गया है। हिन्दी में इसके अनेक अनुबाव हैं। मैंने भी संस्कृत छाया के साथ एक अनुबाव किया था जो पहले १९३३ में प्रकाशित हुआ था। इसमें २६ वर्ग हैं जिनके नाम से भी विषय का कुछ-कुछ पता लग सकता है।

१ यमकवग्ग	१४ बुद्धवग्ग
२ अप्पमाववग्ग	१५ सुलवग्ग
३ चित्तवग्ग	१६ पियवग्ग
४ पुप्फवग्ग	१७ कीववग्ग
५ बालवग्ग	१८ मलवग्ग
६ पबिड्ढतवग्ग	१९ धम्मट्टवग्ग
७ अरहुत्तवग्ग	२ मग्गवग्ग
८ सहस्सवग्ग	२१ पकिण्णकवग्ग
९ पापवग्ग	२२ मिरयवग्ग
१० वण्डवग्ग	२३ नायवग्ग
११ अरावग्ग	२४ तक्खावग्ग
१२ अत्तवग्ग	२५ भिक्खुवग्ग
१३ शोकवग्ग	२६ शाह्यवग्ग

मैंने तो सारा ही धम्मपद बुद्ध का सुभाषित-रत्न है। यहाँ उसकी कुछ गाथाएँ दी जाती हैं—

१ पहली ही गाथा है—“सभी जनों में मन अग्रयामी है। मन उनका प्रबाल है वे मनोमय हैं। यदि कोई दुष्ट मन से बोलता है, या काम करता है, तो बुद्ध उसका बैस ही पीछा करता है जैसे बहून करनेवासे बैल के पीर का चक्का।

२ • यदि प्रसन्न मन से बोलता या कार्य करता है, तो बुद्ध उसका पीछा कभी भी साथ न छोड़नेवाली छाया की भाँति करता है।

१. कभी नी बँर से बँर नहीं सान्त होता—सबँर स बँर सान्त होता है यह मनाउत बम है ।

११ जैसे अण्ड प्रसार न छाव पर में बलि नहीं प्रवेश कर सकती जैसे ही मुनायित बित्त का गग नहीं बम डकना ।

१२ यहाँ साक करता है मरत व बाद गोन करता है पापवारी बाना (बासा) में शाक करता है । वह अपन मयिन कर्मों को दमकर गोक करता है पीड़ित हुआ है ।

१६ यहाँ भाद करता है मर कर भाद करता है, पुष्य वरमबासा बाना ही जगह प्रमुदित होता है वह अपन कर्मों को मुक्ति का दमकर मुक्ति तथा प्रमुदित होता है ।

१८ बाहे पितनी ही मंहिताप्रा (वेद) का उचारें, जिनु प्रमायी बम जो उमके अनुसार (भावरण) वरतबासा नहीं जाता वह डूमरे की माया को गितनवान की भाँति धमगपन का मागी नहीं होता ।

२२ जो जिनु प्रमाद स बिरत या प्रमाद से मय गानबासा हुना है, उमरा पनन होना मंभव नहीं वह निर्बाँय क ममीप है ।

४१ जहा ! यह तुच्छ गरीर गौघ ही पनना-गतिन हो निगपक वाठ की भाँति गृष्यो पर पक रहगा ।

४६ जैसे भ्रमर मम के वन और मध को बिना जनि पहेँबाय मम को मकर बम देना है जैसे ही गीब में मृनि विचरण करे ।

४८ पून की मुदण्य हबा में उयटी भाग मही जाती न चल्पन लपर या पमेनी को ही जिनु मग्जना को मुगप हबा से उयटी मार भी जाती है । मन्पुण ममी रिगाधों में मुगण्य बहाते है ।

८१ जैसे ठोप पहाड़ हबा से बम्पायमान नहीं होता एम ही पीडित निन्दा और प्रशंसा न विचयित नहीं होत ।

८६ उरगात्त और यकार्य मान डारा मुक्त उम महेनु पुरण का मन सान्त होता है, बापी और बर्म सान्त होने हैं ।

१२७ न आकाश में न समुद्र के मध्य में न पर्वतों के बिबर में प्रवेश कर—संसार में कोई स्थान नहीं है जहाँ रहकर पापकर्मों के फल से प्राणी बच सके ।

१४६ शरत्काल की अपव्य मीठी की भाँति (बाहर फेंक दी गयी) या क्यूतारों की सी (सफ़र) हो मयी हृदियों को देखकर क्या (इस शरीर में) प्रेम होगा ।

१५० हृदियों का (एक) नगर बनाया क्या है जो मांस और रक्त से सजा गया है जिसमें अणु और मूषु, धमिमान और बाह सिप हुए हैं ।

१६३ अपना किया पाप अपन को ही भसित किया करता है अपन पाप न करे तो अपने ही सुख खाता है । बुद्धि-अबुद्धि मत्प्रात्म है । दूसरा (बादमी) दूसरे को सुख नहीं कर सकता ।

१७२ जो पहले भूम करके पीछे भूम नहीं करता वह मन से उन्मुक्त बनना की भाँति इस लोक को प्रकाशित करता है ।

२०४ आरोप्य परम नाम है सन्तोष परम धन है बिदबास सबसे बड़ा बन्धु है और निर्बाण परम सुख है ।

२१३ प्रेम से शोक होता है, प्रेम से भय उत्पन्न होता है प्रेम से जो मुक्त है उसको शान्त नहीं फिर मन कहाँ से होगा ?

२१६ चिर प्रवासी स्वजन पुरुष को स्वस्ति के साथ दूर से आत्मा देखकर कृदुम्ब के सोय मित्र और मृदुद् अभिनन्दन करते हैं ।

२६४ माता (—तृष्णा) पिता (—बहुंकार) दो क्षत्रिय राजाओं [—(१) आत्मा भाँति की नित्यता का सिद्धान्त (२) मरनाश जीवन मानने का सिद्धान्त] अनुचर (—राय) सहित राष्ट्र (—स्व विज्ञान भाँति संसार के उपादान) को मारकर बाह्य (—ज्ञानी) निष्पाप होता है ।

३८४ जब बाह्य (—ज्ञानी) दो धर्मों (चित्तसंयम और मावना) में पारङ्गत हो जाता है, तब उभे जानकार के समी गयीजन (बन्धन) समाप्त हो जाते हैं ।

३६३ न जन्तु से न गोत्र से न बन्ध से कोई ब्राह्मण होता है जिसमें सत्य और धर्म है, वही मुनि है और वही ब्राह्मण है ।

४०७ आरे के ऊपर (रुपे हुए) सरसों की भाँति जिसके सग द्वेप मान बाह फेंक लिय गये हैं उन में ब्राह्मण कहता हूँ ।

४२२ जो (अष्ट) प्रवर, वीर, महापि विजिता अकाण्य स्वासक बुद्ध है उन में ब्राह्मण कहता हूँ ।

धम्मपद का संसार की सारी सम्य भाषाओं में मापान्तर है ।

२ उद्दान

आठ वर्षों और ८० मूर्तों का यह सधु ग्रन्थ भी बड़ा शारंगान्वित है । इसका पहल चार मूर्तों में उरवेसा में बोधि के समय बोधिवृक्ष के पास ध्यान-आवना में भगवान् क निर कंस स्थीत हुए इसका उम्पक है । पहल बोधिसुत्त में है—

१ पठमबोधिसुत्त (११)—भगवान् उन बेसा में 'नेरुम्परा' (निरंजना) नदी के तीर बोधिवृक्ष के नीचे बाधि प्राप्त करन के बाद ही बिहरन स । उन समय भगवान् मुक्तिमूत्र का अनुभव करन एक वासुत स मप्तात्र भर बैठ रह । सत्ताह के बाद समाधि से उठकर रात्रि के प्रथम पाद में प्रतीर-अनुभाद का अनुभवे प्रतिनेने दिधि स इहने दण्ठी तरह मनन किया—'एसा हौन पर यह होता है जैसा कि अविद्या के प्रथम स संस्कार, संस्कार से विज्ञान विज्ञान से नामरूप नामरूप से शोक प्राप्त विज्ञा काय मन आदि पञ्चापन्न पञ्चापन्न स स्पर्म (विषय-अपेस) स्पर्म से बेन्ना (अनुभव) बेरना से तृप्ता तृप्ता स उगादान (विषय-अहन) उगादान से भव (संसार) भव से जाति (जन्म) जाति से जयामरण-शोक-परिदेवन (कर्म) बुद्ध-दीर्घमन्य-उगापास (ईशानी) आदि हाते है । इस प्रकार इस सम्पूर्ण दुल-राधि को उन्पति हात्री है ।

२ सुम्बरीसुत्त (४८) —पौत्रम बुद्ध का जो मत्तार मम्मन उस समय ही रहा वा उसमे दूयरे मठ के साधुओं को दीर्घा होने लगी । भगवान्

उस समय सत्त्वत गुह्यत तथा मानित-पूजित थे । ब चीवर, पिण्डपात (मौजना) शयनासन रोगिण्यभ्य भेषज्य आदि परिष्कारों से पालनाम थे । दूसरे मठ के साधु उसे पाने में अशक्त थे । उसे सहन न कर परिष्कारक अत्यन्त सुन्दरी 'सुन्दरी' नामक परिष्कारिका से बोले—“मगिनी इन बन्धुओं की सहायता करण का काम कर सकती हो ?

“क्या काम ? मैं क्या कर सकती हूँ ? बन्धुओं की बर्झाई के लिए मैं अपना प्राण भी दे सकती हूँ ।”

“तो बहुत सीय ही जेठवन बना ।

‘अच्छा आर्यो’ कहकर सुन्दरी ने जेठवन के लिए प्रस्थान किया ।

उन साधुओं ने रास्ते में बीजना बनाकर उसे बाल से मारकर जेठवन की बरिष्ठा के कुर्छे में पाड़कर राजा प्रसेनजित् के पास जाकर ‘सुन्दरी’ के गायक होने की बात कही । और जेठवन के लोगों पर सन्देह प्रकट किया । राजा की आज्ञा से उसे डुड़कर, माकर आशम्भी के भीराहे पर कर्त्तने लगे—“देखो आर्यो पाल्यपुत्रीय यमनों का काम ! कैसे आशम्भी पुरुष-वृत्त करने के बाद स्त्री को मार देया ?”

उस समय भोग भिक्षाओं को देखकर भिक्कारों ने । उन्होंने इसे मयबान् से कहा । मयबान् ने कहा—“मिधुमो, इस प्रकार का राज्य हैर तक नहीं रहेगा केवल सप्ताह भर रहकर उसके बाद बन्ध हो जायेगा । जब नाम भिक्कारों, तो तुम उन्हें इस भाषा से उत्तर दो—

‘मिप्याबादी नरक में जाता है, और (बहु भी) जो कि करके करते हैं कि हमन नहीं किया । मृत्यु के बाद परलोक में जाकर दोनों नीच कर्म करनेवालों की गति समान होती है ।

बहु अन्य हैर तक नहीं रहा । केवल सप्ताह भर ही रहा फिर बन्ध हो गया ।

३ सोचमुत्त (५.६)—बुद्ध के चतुर्थ प्रधान शिष्य महाकात्यायन ‘अवन्ती’ (मातव) हैर के ‘कुररपर’ नामक पर्वत पर बिहते थे । ‘सोच

हुत्तिकप्प' नामक एक धनी सेठ का पुत्र उनकी सभा करता था। उसने मन म
 भाषा—“इस धन को घर में रखते पूरा नहीं किया जा सकता”। तीन बार
 प्रापना करने पर महाकात्यायन ने उसे प्रवचन—उत्तम्यथा धी। कुछ समय
 बाद सोच म साधा—“मैंने भगवान् को मुना भर है क्या नहीं है” और उन्हें
 दत्तन का इच्छा जपन उपाध्याय से प्रकट की। महाकात्यायन ने कहा—
 “आओ दत्तन कर भगवान् के चरणों की श्रद्धा करना और कुशल-सम
 पूष्टकर कहना—‘मन्ते मरे उपाध्याय महाकात्यायन भगवान् के चरणों
 का पार मे प्रसन्न करत हूँ।’”

‘मोच’ भावस्ती पहुँचा और भगवान् के दर्शन कर उपाध्याय की ओर
 म उनका अभिवादन किया और स्वाम्य के विषय में पूछा। भगवान्
 न मी ‘मान’ से रास के कष्ट आदि के बारे में पूछा। उसने कहा—“मैं ठीक
 से भावा उभर म भोजन आदि का कष्ट नहीं हुआ”।

भगवान् ने आनन्द से कहा—“इस भिक्षु के आसनादि का प्रवचन करा।”
 आनन्द न साधा—“जिसके लिए भगवान् एसा कहते हैं कि इसके ठहरन
 का प्रवचन करो उसके बारे में हम म चाहते हैं कि उसे उन्हीं के विहार में
 ठहराया जाए।” अतः उन्होंने वसा ही प्रवचन किया।

अत्यन्त प्रातःकाल उठकर भगवान् म पूछा—“भिक्षु, तूने धर्म को
 कैसे समझा है?” तब ‘मोच’ न मारे ‘अट्टकवम्म’ (मुत्तनिपाठ) को
 स्वर के साथ मुना दिया। भगवान् ने गाबाछी देने हुए कहा—“साम्
 साम् भिक्षु तुम्हारी आपु क्या है।

‘एव वर्य (भिक्षु) हुए हुआ।’

“भिक्षु तुमने इतनी देर क्यों की?”

“मन्ते बहुत देर के बाद मैं मासार्थिक कामगुणों के शोध को समझ सका।
 मृत्यु-जीवन संशयों से भरा है कामजान मे छुटी नहीं मिलती यह तरह
 तरह की शराबों से भरा पड़ा है।”

इसे जानकर उस समय भगवान् के मुह से उबान के ये शब्द निकल
 पड़े—

“संसार के दोषों को देख और परम निर्वाणपद को जान
आर्य जन पाप में नहीं रमते बूढ़ जन पाप में नहीं रमते ।

विनयपिटक द्वारा ज्ञात होता है कि ‘सोम’ को भिक्षु बनाने के लिए इस
भिक्षुओं का मन और से मिला । इसलिए महाकात्थामन ने मन्त्रदेश के
बाहर चार भिक्षुओं के संब को भिक्षु बनाने का अधिकार भोगा था और
मगवान् ने उसे स्वीकार किया था ।

४ इतिवृत्तक

इस ग्रन्थ के हरेक मुत्त में ‘इतिवृत्त मगवता’ (ऐसा मगवान् ने कहा)
यह पद बारबार आता है । अतएव इसका नाम ही ‘इतिवृत्तक’ पड़ गया ।
इसमें चार निपाठ तथा एक ही बारह मुत्त हैं । नीचे इसके कुछ मुख्य
मुत्तों का परिचय दिया जा रहा है—

१ नीममुत्त (११) — यह पहला मुत्त है । इसका अर्थ इस प्रकार से
है—मगवान् ने यह कहा अर्हत् ने यह कहा यह मैंने सुना — “भिक्षुओ
एक बात को छोड़ दो और तब मैं तुम्हारे ‘अनात्मी’ होने की जिम्मेदारी
लेता हूँ । कौन है एक बात ? भिक्षुओ यह सोच है ।

मगवान् न ऐसा कहा । इसलिए यह कहा जाता है—

‘जिस सोम से लुब्ध होकर प्राणी बुद्धि को प्राप्त होते हैं

उन सोम को विपश्यना करलेबामे सम्यक रूप से जानकर छोड़ देते हैं
और उसे छोड़ कर फिर इस लोक में कमी नहीं आते ।

इस अर्थ को भी मगवान् ने कहा ऐसा मैंने सुना है ।

२ पुत्तमुत्त (१२५) — मगवान् ने यह कहा अर्हत् ने यह कहा
ऐसा मैंने सुना—

‘भिक्षुओ इस लोक में तीन प्रकार के पुत्र होते हैं—अतिजात यत्तु
जात और अजजात ।

अतिजात पुत्र कौन है ? जिस पुत्र के माता-पिता बूढ़ बर्भ तथा
संब के सरणागत नहीं होते हिंसा औरी अविचार तथा मद्यपानादि

से विरत नहीं होते बुद्धीस तथा पाप धर्मवासो होते हैं पर उनका पुत्र उनके विपरीत स्वभाववाला होता है वह पुत्र अतिजात होता है ।

अनुजात पुत्र कौन है ? माता-पिता बुद्ध धर्म तथा संन के शरणागत होते हैं हिंसा जोरी व्यभिचार तथा मद्यपानादि से विरत होते हैं सुधीस तथा कस्याण धम्म वास होने हे और उनका पुत्र भी वैसा ही होता है । इस पुत्र की अनुजात समा होती है ।

अवजात कौन है ? माता-पिता में तो उपर्युक्त गुण हों पर उनका पुत्र बुद्धीस तथा पापधर्मवासो हा तो वह अवजात कहा जाता है ।”

५. सुत्तनिपात

बुद्धवचनों में काम की दृष्टि में सुत्तनिपात का अत्यधिक महत्त्व है । बुद्ध के समय में ही इसके अट्टकवग्ग तथा 'पारायणवग्ग' प्रसिद्ध हो चुके थे और ऊपर 'उदान' के बचन में कहा जा चुका है कि 'सोण कूटिकण्ण' में सम्पूर्ण अट्टकवग्ग का पाठ मगवान् बुद्ध के समय किया था । इन सबसे इसकी प्राचीनता निश्च ही है साथ ही अष्टाकन भाङ्गक विकाससक्त में जिन बुद्ध गुत्ता का हवासा दिया है उसमें से तीस—'मुनिगाथा' उपतिष्यग्रहम तथा मुनिमुत्त इसी ग्रन्थ में पाये जाते हैं । यह भी इसके विरोध महत्त्व को प्रतिपादित करता है ।

इस ग्रन्थ की भाषा पर छान्दस (वदिक) भाषा का प्रभाव है और भाषा की दृष्टि से भी यह अति प्राचीन निश्च होता है ।

मुत्तनिपात पाँच 'वग्ग' और अनेक 'मुत्ता' में विभक्त है—

(१) उरगवग्ग

- | | |
|-----------------|-------------|
| १ उरगमुत्त | ७ वमन० |
| २ वनिय० | ८ मेत्त० |
| ३ गगाविसाण० | ९ हेमवत्त० |
| ४ कथिमारुत्ताज० | १० मात्तवक० |

- ५ बुन्द०
६ परामब

- ११ विजय०
१२ मुनि०

(२) ब्रूसवग

- १ रतन०
२ ग्रामग्रन्थ०
३ हिरि
४ मङ्गल०
५ मूषिलोम०
६ धम्मचरिय०
७ शाह्यधम्मिक०

- ८ नाथा०
९ किसीन
१० उद्दाम०
११ राहुम०
१२ बङ्गीस०
१३ सम्मापरिव्वाजमिय०
१४ धम्मिक

(३) महावगा

- १ पध्वज्या०
२ पभाज०
३ सुभासित०
४ सुम्बरिकमारडाज०
५ माण०
६ धमिय०

७. संल०
८ संस्त०
९ बासेदु
१० कोकाभिक०
११ नातक०
१२ इयतानुपस्सना०

(४) अट्टकवगा

- १ काम०
२ गुहट्टक०
३ इउट्टक
४ गुउट्टक०
५ परमट्टक०
६ जरा०
७ विस्समेत्तेय्य०
८ पमूर०

- ९ मायम्बिय०
१० पुरामेद०
११ कलहविवाद०
१२ ब्रुतविमूह०
१३ महाविमूह०
१४ गुबटक
१५ वतवण्ड०
१६ सारिपुत्त०

(५) पारायणवग्ग

१	वात्पुगाथा	१०	सोदेय्यमाणव०
२	अजितमाणवपुच्छा०	११	कप्पमाणव०
३	तिस्ममेतयमाणव०	१२	अतुकण्णिमाणव०
४	पुष्णकमाणव०	१३	मद्दाधुधमाणव०
५	मेलानुमाणव०	१४	उदयमाणव०
६	धोतकमाणव०	१५	पोसासमाणव०
७	उपसीबमाणव०	१६	मोपराजमाणव०
८	मन्दमाणव०	१७	पिङ्गियमाणव०
९	हेमकमाणव०	१८	पारायनत्पुतिगाथा
		१९	पयपनानुमीतिमाथा

इसका संक्षिप्त परिचय नीचे प्रस्तुत किया जाता है—

(१) धनियसुत्त—इस सुत्त में मुग्घर काव्य की शमक मिसती है। यहाँ गण्डक के किनारे बिहार के छपरा या मुअफ्फरपुर जिले में अपनी गौत्रों को बराते धनिय गोप तथा बुद्ध का सवाद बर्णित है। अपने उपकरणों से तथा सामाजिक सुखों से सन्तुष्ट होकर धनिय गोप प्रीति के शब्द का कह रहा है और वहीं पर खुस आकाश में निवास करते बुद्ध भी निर्वाण की प्रीति से मुक्त हो उदान वाक्य कह रहे हैं—

धनिय—भाज मेरा पत्र बुका बुध बुद्ध दिया 'महीं' (गण्डक) नदी के तीर पर स्वप्नों के साथ बात करता हूँ कुटी छा नी है भाज मुसगा नी है। अब हे देव। चाहो तो लूब बरसो।

बुद्ध—मैं गोप और राग से रहित हूँ एक रात के लिए 'महीं' नदी के तीर पर ठहरा हूँ मेरी कुटी लुमी है (आशाग के नीचे रहा हूँ) और (मुग्घरकी) भाज बुध बुकी है। अब०।

धनिय—मसरी और मध्वर यहाँ पर नहीं है कछार में उगी घाम की गौत्रें बरती हैं, पानी भी पड़े तो उमे के सहू में। अब०।

बुद्ध—मैंने एक अच्छी तरकीब बना ली है । भवसागर को छेद कर पार बना जाया । अब तरकीब की आवश्यकता नहीं । अब० ।

शनिय—मेरी ग्वाभिन आमाकारिणी और असोला है वह चिरकाल की मित्रसंघिनी है । उसके विषय में कोई पाप भी नहीं सुनता । अब० ।

बुद्ध—मेरा मन बड़ीमूठ और विमुक्त है, चिरकाल से परिभाषित और शान्त है । मुझ में कोई पाप नहीं । अब० ।

शनिय—मैं अपनी मजदूरी खाप ही करछा हूँ । मेरी सन्तान अमुकूम और मीरोग है । उनके विषय में कोई पाप नहीं सुनता । अब० ।

बुद्ध—मैं किसी का चाकर नहीं स्वस्त्व सारे संसार में विचरण करता हूँ । मुझ चाकरी से मतलब नहीं । अब० ।

शनिय—मेरे ठरुम बैल हैं और बछड़े हैं, गामिन पायें हैं और कसोर भी है और सबके बीच बृषभराज भी है । अब० ।

बुद्ध—मेरे न ठरुम बैल हैं न बछड़े न गामिन पाये हैं न कसोर पायें और सबके बीच बृषभराज भी नहीं । अब० ।

शनिय—बूटे सबकूत मड़े हैं, मूँज के पनहे नये और अच्छी तरह बटे हैं बैल भी उन्हें नहीं तोड़ सकते । अब० ।

बुद्ध—बृषभ-बीसे बन्धनों को तोड़ हाथी-बीसे पूतिमता को सिद्ध विज्ञान-विभ्र कर मैं फिर जन्म ग्रहण नहीं करूँगा । अब० ।

उसी समय अँधी-औंधी भूमि को भरती हुई ओरों की बारिश हुई । बारलों के बर्जन को सुनकर शनिय न कह— 'हमाय बड़ा ताम हुआ कि हम भलवान् के वर्जन को पाये । हे बभ्रुमान्, हम आपकी धरम भाते हैं महामुनि आप हमारे गुरु हैं ।'

(२) बारापञ्चवर्ण—पंचाव में आपों का प्रसार ई० पू० बारहवीं सदी में हुआ और इसके छह सौ वर्षों के परचात् अबत्ति ९० ई० पू० में जार्ज डब्लिड् डेस में बहमशाही घोषावरी लखी के डिमारे तक फैल गये थे । अयोध के समय ई० पू० तीसरी सदी के पहले ही वे चीन देश

में पहुँचे थे। कोसल देश के निवासी 'बाबरी' ब्राह्मण मोषाबरी के तिनारे बस ही नहीं गये थे बल्कि बहु वहाँ के प्रतिष्ठित आचार्य थे। उनके पास अनेक माणवक (छात्र) पढ़ते थे। उन्होंने सुना कि उत्तर में शाक्यमुनि मीठम पैदा हुए हैं जो बुद्ध मान जाते हैं। बुद्धपन के कारण स्वयं न जा सने अपन सोसह शिष्यों को कोसल देश भजा पर बुद्ध वहाँ नहीं थे। वे समय में 'नासन्धा' के पास बुद्ध का दर्शन और संभाषण करने में सफल हुए। प्रत्येक माणवकम प्रश्न पूछ, जिसका उत्तर बुद्ध न दिया। इन 'बधा' में इसी का ध्यास्मान है जो संक्षिप्त रूप से नीचे उपस्थित किया जा रहा है—

(क) अत्रित माणवक न पूछा— 'संसार किससे आन्धावित है? किससे वह अप्रकाशित है? इसका मम मुझे बतावें कि किससे यह मममुक्त हाथा है) तथा इसका महामय क्या है?"

बुद्ध ने कहा— "संसार अविद्या से आन्धावित है। मोम तथा प्रमा के कारण वह अप्रकाशित है। तुष्णा को मैं मम बताता हूँ तथा दुःख इसका महामय है।"

अत्रित— "सर्वत्र तुष्णा की धाराएँ बहती हैं। इन धाराओं का क्या निवारण है? इन धाराओं के आवरण को बतावें तथा इनको कैसे बन्द किया जा सकता है?"

बुद्ध— 'संसार में त्रितनी धाराएँ हैं स्मृति उनका निवारण है (इस में) धाराओं का आवरण बताता हूँ। प्रमा सं ध बन्द की जाती है।

(घ) पुत्रक माणवक ने पूछा— "तुष्णारहित (वाप क) मूम को बलने नामे आपक पास प्रदन करन आया हूँ। किस कारण आपिया मनुष्यों शशियों और ब्राह्मणों न देवताओं के नाम इन संसार में बहुत यज्ञ क्रिये थे? भगवान् आप से यह पूछता हूँ आप इसे बतावें।

बुद्ध ने कहा— "पुण्यन जरा को प्राप्त होन पर जीवन की कामता करते हुए इन संसार में आपिया मनुष्यों शशिया ब्राह्मणों में देवताओं के नाम बटन-मे यज्ञ क्रिये थे।

(म) योतक भागवतक तथा कृष्य भागवतक न बुद्ध से निर्वाण के बारे में प्रश्न किया और इसी प्रकार से और भागवतका ने भी बुद्ध से प्रश्न किये और उन्होंने उनका उत्तर दिया ।

६ विमानवत्सु

प्रायः १२०९ मायाओं के इस ग्रन्थ में देवताओं के विमान (बसते मरों) के बर्णन का बर्णन प्रस्तुत है । इतना निश्चित-सा ही प्रतीत होता होता है कि यह बुद्ध भाषित नहीं है और सम्भवतः भारत में यह अशोक के समय के आसपास लिखा गया होगा । 'विमानवत्सु' में दो भाग हैं— 'इत्थिबिमान' तथा 'पुरिसबिमान' । स्त्री की देवभूमियों का बर्णन इत्थि-बिमान में और पुरुष की देवभूमियों का बर्णन पुरिसबिमान में है । सम्पूर्ण ग्रन्थ में सीधी एक ही प्रकार की है । एक ऋषिशास्त्री भिक्षा वमुक देव मा देवी से प्रश्न करता है कि तुम्हें यह मुख और गौरव कैसे प्राप्त हुआ । उत्तर में वह उत्सुक करता है कि उसने अमुक पुण्य कर्म किये थे जिनके फल-स्वरूप उसे यह प्राप्त हुआ । उदाहरणस्वरूप बुद्ध का उल्लेख इस प्रकार से है—

१ पठमपीठविमानवत्सु (११)—उद्य विमान पीठ सुवर्णमय है और मन की गति की तरह यह मतावाधित स्थान पर बसा बना है । तू अज्ञाना माताधारिणी एवं सुवस्त्रा है और सेवसिस्तर पर विद्यत की भाँति बसकती है ।

किस कारण से तुम्हें एसा रूप प्राप्त हुआ है तथा ऐसे भोग तुम्हारे लिए उत्पन्न हुये हैं जो मन को सुन्दर रागने वाले हैं ?

हे महाशुभावे तुमसे मैं यह प्रश्न करता हूँ कि तुमने मनुष्य होकर क्या पुण्य किया था ? किसके कारण इतने देवीप्यमान प्रभाववाला तेरा यह रूप है जो सभी विमानों में प्रकाशमान ही रहा है ?

ऐसा 'मोष्यस्नान' द्वारा प्रश्न किया जाने पर वह देवी बोली— "मैंने भवुष्य योगि में जन्म लेकर मनुष्यों में अम्यागतों को आनन दिया अनि वादन किया शान किया और उसी से मेरा ऐसा बर्णन है ।"

२ केशकारीविमानवत्पु (११७)—“यह विमान रश्मि और प्रभास्वर तथा हीरों के लम्बों के समान मृत्निमित्त है चारों ओर मुबर्क के बूझ उभ हुए हैं। भरा स्थान कर्मविपाक-सम्भव है।

वहाँ उत्पन्न सौ या सहस्र अप्सराओं में अग्रमध्य यह तुम सबको प्रभावित करती हुई यगत्स्वामी होकर स्थित हो।

ह अनुपमदर्शन वहाँ से तू मेरे इस भवन में उत्पन्न हुई ।

तब गुरु, जो तब मुझमें यह पुरुष हो कि वहाँ से श्रुत था वर म यहाँ आयी हूँ तो पूर्व में बाणी (जनपद) का बाराणसी नामक नगर है। वहाँ में कर्मचारिका थी।

म बुद्ध धर्म तथा संन में प्रमत्त मनबामी अस्मिन् विद्यापद तथा मन्त्राचारवासी फल प्राप्त तथा सम्बाधि-धर्म म नियत तथा अनामया थी।”

तब न यह मुनिकर अभिमन्वन करते हुए उमका स्वागत किया।

७ पेतवत्पु

प्राय ८१६ गायामों की यह पुम्बिका लकड़ के दुष्का का वजन प्रमृत्त करती है। समें ३१ वस्तु (बया) है तथा यह चार वर्गों में विभक्त है। इस गण्डपुराण का प्रारम्भिक संस्करण समिति। उदाहरणस्वरूप कुछ ‘बम्पुर्ण’ शीघ्र ही जाती है।

१ सुकरमपपेतवत्पु (२)—“तुम्हारा मम्पुष शरीर स्वयं वर्ण का है और सभी दिशाएँ उमम प्रभावित हा रही है। पर तुम्हारा मुन गुरु क समान है। तुमन क्या कम पहल किया था ?

“यै शरीर म ता संयत्त की परवाणी म नही इमीति एसा हुआ है।”

२ सत्तपुत्तआपपेतवत्पु (७)—

“नयी दुर्बल रूप की हो तथा अवधिच दुर्गन्ध फैला रही हा।

“मरिचिया भिनभिना रही हैं तू कौन यहाँ गयी हो ?”

म भइमं यमत्ताववासी दुगति प्राप्त प्रती हैं

पाप कम करके प्रनमोक्त में यहाँ आयी हैं

कामरूप से पाँच पुत्र तथा और दूसरे पुत्रा को उत्पन्न करके
 उन्ह मैन खाया तो भी वे पर्याप्त नहीं हुए ।
 मेरा हृदय बुधा सं जलता और भूमित होता है
 मुझ कही भी शक्ति नहीं मिलती ।”
 “काया बापी या मन से क्या दुष्कर्म किया
 जिस कर्म-विपाक के कारण तम पुत्र-मांस खाती हो ?
 मेरी मौल्य यमिणी थी उसका मैंने बुरा सोचा ।
 सो दुष्ट मन से मैंने उसका दो-तीन मास का यमपात कर दिया ।
 उससे भोग्य बहा उसकी माँ ने कृपित हो मेरी जातिबाना
 को बुसाया ।

मुझ क्षपण कराया मत्स्य कहमा दिया ।
 सो मैं भोर क्षपण कर झूठ बोसी

मैन क्षपण किया था जब पुत्र-मांस खाती हूँ ।
 उस कर्म-विपाक का झूठ, बोलन का यह फल है
 पुत्र-मांस खाती हूँ पीठ और जूम पर मक्खियाँ भिनभिना रही हैं ।
 पाप कर्मों के दुष्परिणाम की बात 'पैठबत्सु' में इसी प्रकार भी हुई है ।

८ घेरगाथा

इस ग्रन्थ में बड़ सी के करीब बुद्धकासीन स्वचिरो की गाथाएँ
 सुरक्षित हैं । प्राचीनता ही नहीं प्रस्तुत इनमें से जितनी ही कविता की
 शक्ति से भी सुन्दर है । ई पू छठी सदी के आसपास इतम सुन्दर रूप
 में कविता करने का प्रयास हुआ था यह इन गाथाओं से सात होता है ।

इस ग्रन्थ में गाथाओं की संख्या के अनुसार निपाठा का विभाजन है ।
 इसमें २१ निपाठ हैं—१ ० १ ४ २, ६ ७ ८ ९ ११ १२
 १३ १४ १५ १६ २ ३ ४० ५० तथा ६० के क्रम से । बीस
 गाथा बानी रचनाएँ 'बीसठिक' निपाठ में संक्षिप्त हैं । इसमें २५५ निधुमाँ
 के उद्गारों का सङ्ग्रह है । संक्षिप्त रूप से नमून के तौर पर, कुछ मीथ
 प्रस्तुत बिचे जाते हैं—

बरगाथा' के प्रारम्भ में ही कहा गया है—

“गिरगस्तुर में दृष्टाकृतवासे सिद्धा की भावनावाक स्वबिरो की गाथाओं का मुनो” बाबि ।

१ बलबल्लस्यैरगाथा (११३)—नीम बाइम क रंगवाक पीतल मुनि अर पाएण करनवाक बीरबहुटियां स वैके परंत मूम रयात है ।

२ सम्पदरबेरगाथा (४११)—“अब दुषिस्वेण वंशवासी बना काए, काम मय क भय स इरी शरणास्वान नृकनी भागनी हं नब मूम अजरणी लही रमय कराती है । अब बभाकाए भातय दखपी वषा डूटेती है तब अजरणी० मरी मुहा न पीए मही क लर पर वान और सय जापुन वृण गोभायमान हृण विरुको नहीं पमए जात ।

मन्-मद बहनी मरी माद कर रही । वाक एमी गिरि-नदी छाड़ प्रवाण करन का समय महा अजरणी लमयकन गिब मुरम्य है ।”

३ महाककवातस्यैरगाथा (८१)—वहन कम न कराय उघम म विमी को न रोके जो मुग सातवाक परमार्थ को छाड़ लेता है वह उन्मुक तथा गम लायी है ।

न कार् हुमने के बहन स बार और न हुमर क बहन स मुनि हाता है । बाइमी स्वयं अपन का जैसा जानता है वैसा देवना ली लहा जात मजने ।

हुमने अम ली मयमने कि हम यही न जानवाम है । जो हम जानत है उनके बिचार घास्त हो जात है ।

प्रमावान् बिल के मल हा जात पर भी बीना ही है । प्रमा न मियन न बिलवान् भी (टीर न) मही जो मकता ।

रात के सब मुतना है भात न सब दलना है । पर धीर मभी देव-मुक्त को छोड़ मकना है ।”

४ कामुबाचित्यैरगाथा (१०१)—बगठ क भात पर कुठ को अममूमि (बदिलबन्धु) न जाने की प्ररथा देते पुराणि-मुध कामुबाधी न कहा—

“वसंत में इस समय हुम फूलों से लाल है । फल क इच्छुक, पत्ते छोड़ कर मोमाल से प्रभासित है । ह महावीर, आङ्गीरसों क प्रस्थान का यही समय है ।

द्रम फूला से मनीरम है । चारों ओर सारी विचार्य प्रवाहित हो रही है । पत्र को छोड़ बूझ फल चाहते है । यह यहाँ से प्रस्थान करण का समय है ।

(समय) न अति सीतल है न अति उष्ण शत्रु मुक्तमय है, (समय) याया योग्य है । आपका मसा हूँ । आपको पच्छिम मुख राहिमी पार करते हुए, शाक्यगण और कोसियगण ब्रह्म ।

३. लालकुटुम्बेरगाथा (१६१)—राजमुह के मूलपूर्व मटाजार्म कहते है—

कब मैं पर्वत-कन्दराजी से अकेला अङ्गीय सारे सधार की अनित्य देखत विह्वलैगा । बहु समय मेरे लिए कब होना ।

कब मैं फटे वस्त्रवाला बापायभायी ममता-तृणारहित इच्छारहित मणि हो जाऊँगा ? राग-हृष मोह को मारकर मन में जा सुली हाऊँगा । बहु० ।

कब अनित्य बंधुरोग के तीव्र मृषु-जरा-वीरित इस बापा को देखते निर्भय हो सकेता वन म बिकेगा । बहु० ।

कब मैं भयजननी दुस्मानहा बहुत प्रकार से पीछा कालवासी तृष्णा-सता की प्रज्ञामय तीरण जङ्ग से काट कर बसूँगा । बहु० ।

कब वर्षा के मेघ अपि द्वाग प्रपाठ माय पर वन म चाते मनीन जल पीवत पहन मुझ पर बरसावेंगे । बहु बहु० ।

कब विरियाहुर में सिक्काभायी मोर पक्षी के स्वर को गुनकर अमृत की प्राप्ति के लिए चिन्तन करेगा । बहु कब० ।”

६ घेरीगाथा

इसमें ३२२ भाषार्थ है, जो १६ निपातों में विभक्त है । निपात ‘बरगाण’ के समान आधारों पर ही है । इसमें मिथुनिकों के उद्गार, जो उनके अन्तर्मन की पुकार-स्वरूप हैं संगृहीत हैं । उदाहरणस्वरूप—

१ बन्धिका (३४) — जिन के बिहार के लिए, गृध्रकूट पर्वत पर मन नाथ (हाथी) का समागम में उतरता देखा ।

एक आत्मी अक्षुण्ण लकर पैर धो' ब्रह्म प्रायना करता था । नाग ने पैर पमार दिया पुण्य नाम पर बढ़ गया ।

वसन बरन में कठिन दमित (गज) मनुष्या के दण में हो गया तबसे मे चित्त का समाहित करता हूँ । जमी के लिए दन में गर्वी ।”

२ विमला पुराणगणिका (५२) — बग रूप नौमास्य भोग तथा स मै मन्त्रवाची थी और सोवन में गर्वभी दूमरी निवृत्त न अपन का म अममान मानती थी ।

मूर्खों का सोमनवासी म विविध काया का भूयिष्ठकर कस्या-ज्ञान पर पक्षियों के लिए मित्रान के पाथ की म त्रि खड़ी होती थी ।

वही आज में मुड़िता मपाटी पतिन विद्वान् करले बुन के नीच रीटी प्रवितक यक्षस्यावामी समाधि का पानवागी हूँ ।

दिव्य या मानुषिक माने बचन उच्यते हा म्य । माग चित्तमम का सोपचर म पीतम निर्वाण प्राप्त हूँ ।

३ पुष्पा (१२१) — म बहारिल की ठह म मश पानी में उतरती थी स्वामियों (आपों) के दंड के मय में मज्जित थी । तू ब्राह्मण विमक मय में पापने भारी पीत भोजन पानी में उतरता है ।”

“तुम पूर्णिका जानती हो ता पुन्यराम बरन पाप का गवन ममम क्यों पूछती हो ?”

“जो बड़ा या छोटा पापम करता है, वह भी जन्म-जान से उम पाप मय में छूट जाता है ।”

“तु जान विम अत्राली न तुममें यह कहा—‘उदक स्नान से पापम छूटा है’ । तब ता जन्म मारे मंडक बज्य, स्वर्ग को जन्म जायेग । माग और सोम भी और जो दूमर जमचर भी ।

भेड़ मारनेवाले घुंकर मारनेवाले मछुने और मृगवधिक, चोर और दूसरे पाप कर्मों भी बल-स्नान से पाप कम से छूट जायेंगे ।

यदि य मदिवा पहले के तेरे क्रिय पाप को बोयेंगी तो पुण्य को भी वहा ले जायेंगी । इसलिए बाहर आयो ।

ब्राह्मण जिससे डरकर सदा पानी में उतरता है, उसे ही बहुत मत कर शीत तरे बमड़ का हनन य कर दे ।”

‘उदक-सेवन कृमार्ग में मयं मुझे कार्य-मार्ग पर सामी जत मचती मैं तुसे यह शाटक (बोली) देता हूँ ।”

तेरा शाटक रहे य शाटक नहीं जाहती यदि बुद्ध से डरता है यदि बुद्ध तुम अत्रिय है तो प्रकट या गुप्त पापकर्म जत कर ।

यदि पाप कर्म करता है या करेगा तो भागकर जी बुद्ध से नहीं छूटगा ।”

४ मन्वपत्नी (१११) — वैद्यामी की प्रसिद्ध वैद्या न बुझाये मं य गापाए कही थी—

काल भ्रमरवर्ष समान मेरे य केस क्षीर पर कुचित वे तब मैं बचान थी वे (केस) अब जरा से सन के छिनके-से है । सत्यवादी बुद्ध का बचन बन्धना नहीं हो सकता ।

मुर्धा य के इन्ध से तथा पुण्यराशि म वासित मेरे केस य वे जरा के कारण वरपोरा के बास के समान दुर्पणित है । सत्यवादी० ।

बन मुरोपित कानन की भाँति केस मूहयो स विभिन्न तथा अक्षयोमित वे य जरा से जहाँ-तहाँ विरल है । सत्यवादी० ।

स्निग्ध मुगन्धित मन्थित मुवर्ष स अर्जवृत्त मेरा सर या अब यह जरा से गंजा हो गया है । सत्यवादी० ।

चिक्कार हाथ मुमन्थित और अक्षित-सी तब येरी यहाँ सोहती थी वे अब जरा से मुरियों से सटकी हूँ । सत्यवादी० ।

मेरे मत्र भास्वर, मुरचिर मणि-जैस नीले और जामठ य वे अब जरा से जाहल हो नहीं छोड़ते ।

१० जातक

बुद्धकाल में प्रचलित मारे पाँच सौ सैतानों (२४७) सोकरुबाओं का यह संग्रह है। अपने उपदेशों में बुद्ध जैसी उपमाएँ देकर उन्हें चित्रित तथा पृथक् बताते थे वैसे ही सोकरुबाओं को भी बैसे थे। 'महायोगिन्ध' आदि छान-छाट जातक सुत्तों में भी आये हैं। जातकों की गाथाएँ पुरानी हैं जिनमें से कुछ मोक्ष-वाक्य भी हो सकती हैं। कुछ जातक तो अतिमुन्दर मोक्ष-वाक्य हैं। 'विम्वस्तर जातक' को पढ़ते समय उसी तरह आँसुओं का वेग और कठोररोध होता है जैसे मूमे पावाजी का पंचादा (राजम्पानी) मुक्त-पक्षी समय हुआ था। विश्व-नाश-साहित्य की जातक अद्भुत निधि हैं। ये बौद्ध दर्शों में तो बहुत प्रचलित हैं ही अब तो पाप-विश्व की कोई ही साहित्यिक भाषा हो जिसमें कुछ भा सारे जातक अनूदित न हुए हों। हिन्दी में उनका अनुवाद भरत धानल कौमल्यायन ने कुछ जिलों में कर हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन द्वारा प्रकाशित कराया है।

जातक में जहाँ प्राचीन भारत के व्यापार-मय भी विघात सामग्री है वहाँ उस समय के चित्त व्यक्तमाय और मनुष्य-जीवन के बंधों पर भी बहुत प्रकाश पड़ता है। विश्वार्थों और मूर्च्छाओं के लिए ये उत्तम सामग्री प्रदान करते हैं। जितनी ही वाक्य अन्य भाग से बाहर जातकों का लक्षण बने हैं। मूलरूप में पावा भाषा ही जातक ज्ञाना जाता है पर बजाओं के बिना जातक का कोई महत्त्व नहीं है अतः गाथाओं का उनके भाषा ही मना चाहिए।

जातक में सर्वप्रथम 'निदानकथा' है जो हमकी भूमिवास्वरूप है। हमारे चार पञ्चुप्यप्रवत्सु' अतीतवत्सु' अश्वत्थाना' और 'समापान' में चार बार्ते प्रत्येक जातक में आती हैं। पञ्चुप्यप्रवत्सु में वर्तमान संदर्भ दिया रहता है जिसमें उस जातक-विषय का उल्लेख हुआ रहता है अतीत-वत्सु प्राचीन कथा है अश्वत्थाना उसमें आये हुए गाथा-भाग की टीका है तथा बुद्ध स्वयं ज्ञान से उठा अन्य छिप्पों में जातक का जो दोष बताते हैं,

वही समोधान है। यहाँ पर केवल 'वेस्सन्तर जातक' उदाहरण के रूप में संक्षेप में प्रस्तुत किया जाता है।

१ वेस्सन्तरजातक (३४७)—इसमें सिद्धि ब्रह्म के राजा 'वेस्सन्तर' के व्यापक जीवन का वर्णन है। मांस्वामी तुमसीदास ने भी 'सिद्धि ब्रह्मिणि हरिकण्ठ नरेणु' चौपाई में सिद्धिराज का उल्लेख किया है। वे यही वेस्सन्तर है। यद्यपि उनके समय यह कथा बौद्ध धर्म के लुप्त होन के साथ लुप्त हो चुकी थी पर बनदा के अक्षरचतुर्ण में पढ़ी हुई थी।

वेस्सन्तर की दान की उदारता से सारी बनदा विभङ्ग जाती है और पिता को अपना प्रिय पुत्र को निर्वासित करना पड़ता है।

यह सुन (बेबी) वेस्सन्तर-माली मात्री कापिती हुई बाली—“पहल बिसकी सेना ध्वजाय के साथ अनुमनन करती थी सो आज अकेला ही बन में आवेगा।

वीरकृतियों के रगबाले लालगान्धार के पुत्रात्त बिसके कि पीछे जाते। जो पहल हार्पी से सिद्धिका से या रूप से जाता वा वह वेस्सन्तर राजा आज कैसे पैदा आवेगा।

क्यों कापाय बस्त्र और मूमछाना—नहीं सोम जाते वह अरण्य में प्रवेश करते और को क्यों नहीं बाँधते ?

कैसे मात्री कुण्ड का नीर पड़गयी ?

काठिक बस्त्र मलमल और कोटुम्बर धारण करलबाली मात्री कुण्डनीर को कैसे धारण करेगी ?

वेस्सन्तर राजा सिद्धियो की बाध के लिए स्वयं राज से बेराज हुआ है।”

वेस्सन्तर की माता ने करण स्वर से कहा—

‘पुत्र तुझे अनुमति देती हूँ तेरी प्रसन्न्या सफल हो पर कस्याची मात्री पुत्रों (बेट-बेटों) के साथ यहीं रहे बन में जाकर क्या करेगी ?’

वेस्सन्तर ने कहा—“न चाहने बाली वाली को भी मैं बन में नहीं ल जाता बरि मात्री चाहती है सो आज नहीं चाहती सो (यही) रहे।”

“हृत्पुत्रा मून मीड़ की बिड़िया-नी मैं दुबधी पीमो होऊँगी
एसे मरे बिनाप करत निसेप राजपुत्र को यद्य से बन मत्र दिया जानी म
पौवन छोड़ूगी।”

राज माता को अल्पन करते मुन कर बल्ल-पुर को बहुरें, मिबिकन्याएं
बाहू पकड़कर रोने लगी।

तब महाराज न बहू का मताना चाहा—

“बैबर बग्नबापी (मेरी बहू) बूम मत धारे, मत कृमापीर धारे ।
बरभ्रबाय दुग्य है मुन्नी तू मत जा।”

सर्दीम-गोमता राजपुत्री मात्री ने तब कहा—

“मैं उत मुन को नहीं चाहती जो बस्मन्तर के बिना मुस दिन । जो
बन न मय धापन बतमाय है रयपम मैं आकर उन सब का मद्र पूँगी ।
मदूत मेहनत स कृमायी पति को पायी है ।

ममान में बीषम्य कड़ा है रबयन मुस जाना ही होमा । बिना
जान की मरी नहीं है बिना राजा के राट्ट नगा है बिषबा स्त्री नहीं
है बाहू उनके हय भी मारी हा । संगर तक बहु बिलभारिपी माना रनों
म मरी बली को भी बस्मन्तर फ बिना नहीं पूँगी ।

कैम उन स्त्रिया का हृदय मुन मानता है जो पति को दुग्य में लेष अपना
मुग्य चाहती है गिबियो के राट्टबधन महाराज के निकमन पर म उनक
पीड़नीछ जाऊँगी । बहु मरी सब कामनाका क वाला है ।”

उमस महाराज न बहा—“सत्रोगयामने मात्री में ठरे दोसा बच्च
बापी और हृष्णाजिना छोट है ।”

मात्री न बहा—“देव जाली और हृष्णाजिना दोनों बच्चे मुसे त्रिय
है । म बरभ्र में हम दुगी जीवतबागों को मुन रेंग ।”

गिबियां क राट्टबधन महाराज ने उमस बहा—“दादि के नाम
और मुचि मांस के ठमन को गान के मादी जगमी पौसों क कनों का माने
हुए बच्च बिना दुग्य पायेंगे ।”

तब बेस्तन्तर राजा न माता-पिता दोनों की बन्धना करके प्रस्थित
की ।

जयम में रहते कुछ समय बाद एक ब्राह्मण आया । मायी म्रिय
गयी थी । ब्राह्मण न दोनों बच्चे मांग । बेस्तन्तर ने दे दिया ।

जानी पीपल के पत्त की भाँति काँपता पिता के घरों में बन्धना करते
हुए योग—

माता म्रिय गयी है और तात तुम हमको दे रहे हो । अम्मा को
भी हम देख स तब हमें दे देना ।

हम तब तक मत दो तात ! जब तक हमारी अम्मा नहीं आ जाती
तब चाहे ब्राह्मण हमें जब दे जा मार दे ।

तात को हम नहीं देख पामेये इसी का बहुत दुःख है । हमें न पा
बचारी अम्मा फिरकात तक रोती रहेंगी ।”

काक्यर्षण कुम्पकुमारी को न देखकर बेचारे (तात) नी बकर
बहुत समय तक रोते रह्ये बेचारी अम्मा !”

जाते समय जाती छोटी बहन से कहता है—

ये आमुन तथा सेंदुवार आदि के पेड़ हैं माना प्रकार के बूय, उन्हें
आज हम छोड़ रहे हैं ।

अस्वगन्ध कटहल बरगद तथा कैय इन विविध प्रकार के बूयों को
आज हम छोड़ रहे हैं ।

जिनसे पहल हम लेता करते थे उन्हें आज छोड़ रहे हैं

यहाँ ऊपर पर्वत पर विविध प्रकार के फूल हैं जिनमें हम चारते थे ।
उन्हें० ।

ये हमारे जिनमिने हाथी और अश्व हैं ये हमारे घर हैं जिन के साथ
पहले हम जाता करते थे । उन्हें० ।”

न पाय जाते बच्चों ने पिता को कहा—“अम्मा को आरोप्य कहना
तुम थी तात मुझी रहो ।”

य हमार हापी-बोड़े हैं य हमार बेल है इन्हें अम्ना को देता । वह हमने अपना शोक दूर करेगी ।”

तब क्षत्रिय बेम्सन्तर राजागान देकर सालामें घुस करण दहन करत समा—
“भूख प्यासे बच्चे आज किमके पास हूठ करेयें । घाम को ब्यासू कं के समय कौन उन्हें भोजन देगा ? बिना बूने के पैरुन कैसे जायेंगे ? लीये पर जान उन्हें कौन हाथ पकड़ायगा ।

मायी न सँध्या का सौंठ समय दूर स सोचना गुरू किया— ‘उनके लिए वह भोजन स जा रही हूँ । वह इस भोजन का लायेंगे । वह क्षत्रिय निषासस्वान में जकर भकेला होगा । मुझे न आपी देन बच्चों के बाइस बाँटना होगा । मुझ अमागिनी वषारी के बच्च जकर पापी पीके पत्र हय । मेरे पत भरे हुए हैं, छाडी फर रही हैं ।

घाम आकर उमन कहा—“पर मैं तथा जामी वृष्णात्रिना बना बच्चा का नहीं दन रही हूँ । घाम क समय घूम में निपट भरे बच्च मेरी गाथ में लगे य उन बच्चों का मैं नहीं देख रही हूँ । क्यों यह प्राथम नि घम्स मा वील रहा है ? पत्नी भी नहीं बहपहा रहे हैं जकर बच्च मर गय” ।

वह बेसन्तर से बोली—

“क्यों भरा मन पहरा रहा है आयपुत्र भरे बच्चा को भड़िय ता नहीं या मय ? न तो उनक दम दीलने हैं न हाथ-पैर ही । मैं जामी और वृष्णात्रिना का नहीं देन रही हूँ और आर्यपुत्र तुम नहीं बोम रह हो” ।

अन्त में बेम्सन्तर न उन दान की सारी कथा बतला दी ।

११ निहृस

बुधनिर्हम और महानिर्हम इनके ही भाग है । यह कंठ्य्य रत्न के समय की व्याख्या है । महानिर्हम में सुतनिर्वाण के अट्टवषण (जिस सोय न बड को अत्रबन में स्वर-मलिन सुताया या) को व्याख्या है । महानिर्हम में बटुन-स देनों तथा बंन्मादों का उम्नय है जिसके माथ भारत का वागिन्स सम्बन्ध या ।

१२ पटिसम्भिदात्म्य

इसमें अर्हत् के प्रतिस्विकृति की व्याख्या है। इसमें वस परिच्छेद है। इसकी वीथी अमिषम की है।

१३ अपादान

अपादान (अवदान) शक्ति को कहते हैं। अपदान के दो मार्गों से एक का नाम बेरापदान है दूसरे का बगी-अपदान। इसे बेरलाप बेरीगाथा का पूरक ग्रन्थ कह सकते हैं क्योंकि इसमें छद्मी बेर-बेरियों का शक्ति है। इनमें ३२८६ गाथाएं स्वबिरा से सम्बन्ध रखती हैं, जो १२६७ शक्तियों से। पहला अपदान बुद्धापदान है। फिर उसके बाद बुद्धशिष्य माम्भस्मान महाकाश्यप अनुराध पूर्णनेत्रायणीपुत्र अपाति अज्ञात कौशिक्य पिडोसमारुद्रान कदिरवनीय रेवत आदि से सम्बन्धित है। इसी तरह बेरी-अपदान में महाप्रजापति वीथमी आदि से सम्बन्धित शक्ति कहे गये हैं। बर्ग-विभाजन की दृष्टि से वरापदान में २५ बर्ग हैं और प्रत्येक बर्ग में १० अपदान हैं। पटी-अपदान में ४ बर्ग हैं और इनमें भी प्रत्येक में १० अपदान हैं।

बेर-बेरियों की जीवनी इसी ग्रन्थ से सम्बन्धित नहीं है बल्कि वे मोन जटील में क्या ये इसका भी स्थान-स्थान पर उल्लेख है।

माया कहने का मत स्वयं य स्वबिरा है। वे अपने मुँह से इन अपदानों को बोलते हैं। इतना ही नहीं बानी मर्म-स्पर्शी भी है और एसा अविश्व स्थलों में है।

१४ बुद्धवस

यह पञ्चतमक ग्रन्थ २८ परिच्छेदों का है और इसमें बीपसुर से लेकर धाक्यमुनि गौतम बुद्ध तक के २४ बुद्धों का वर्णन है। गौतम बुद्ध की जीवनी के अतिरिक्त सेष वर्णन पौराणिक पद्धति पर आधारित है। एक बौद्ध परम्परा इसे स्वष्ट रूप से बुद्धवचन नहीं मानती।

१५ चरियापिटक

यह भी ग्रन्थ 'बुद्धस' की ही भाँति का है और सर्व-प्रमाणित नहीं है। यह छह परिच्छदा में है जिनमें २२ जीवनचर्याओं का उल्लेख है। इसमें भगवान् बुद्ध के पूर्व जन्म का वर्णन करते हुए यह प्रदर्शित किया गया है कि उन्होंने बान् धीस मीच्छम्य अधिष्ठान मरण मंत्री और उपेक्षा आदि सात पारमिताओं की उत-उत जन्मा में पूर्ण कस की। इन पारमिताओं का वर्णन व्यक्ति के चरित्त के रूप में किया गया है। सगता है पारमिताओं को आदर्श बनाकर लोग न उच्च जीवन को समझान के लिए ही इन ग्रन्थ को रच आया।

इसके प्रत्येक चर्या का वर्णन आतक की ही भाँति है और यह पद्य रूप में प्रस्तुत है।

छठा अध्याय

विनयपिटक

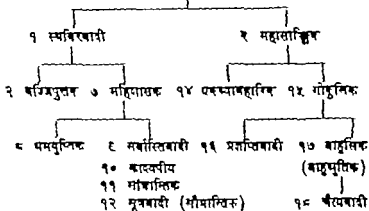
यह दूसरा पिटक है, जिसे मिश्र-मिश्रियों का आचार-शास्त्र बखूब समझ है। इसमें पाँच ग्रन्थ हैं—

१ पाराजिक	१०९०	ग्रन्थ-संख्या
२ पाचिसिय	१९८	
३ महावग्ग	७७०	"
४ खुस्मवग्ग	८३८०	
५ परिवार	७८२	

विनयपिटक के सम्पूर्ण विभाजन से इसका मुक्त-विमङ्ग और कान्धक विभाजन अधिक सुविशुद्ध है। वस्तुतः पाराजिक पाचिसिय प्रातिमोक्ष की ही व्याख्या हैं। प्रातिमोक्ष का प्रातिमोक्षमूत्र भी बहते हैं। विमङ्ग व्याख्या का भी नाम है। प्रातिमोक्षमूत्र का इस तरह विमङ्ग होने से पाराजिक पाचिसिय का नाम विमङ्ग पड़ा। सर्वास्तिवाद के मूल और विनयपिटक से पाणिपिटक की बहुत समानता है। मात्रि सर्वास्तिवाद स्वकिरबाद की ही ग्राह्य थी। तृतीय दर्शन (अशोक) के समय तक बौद्ध धर्म के १८ विभाग (शाखाएँ) हो गये थे। 'कपावत्सु' की अट्ठक्या में इन विभागों का भी उल्लेख है।

अठारहविंशत्य—अशोक के समय तक बौद्ध धर्म में अठारह विभाग हो गये थे—

बुद्ध-धर्म



बुद्ध न आशुस्यतिकाय क एक सूत्र में दार्ढ्य से विज्ञापनों (प्राविमोक्षों) की बात बड़ी है। विज्ञापनों की संख्या चीनी और तिब्बती ग्रन्थ में २५० और २३८ है।

गुणना करें—

बिज्ञापपिटक (पाणि)	टिबुर्गिस्सु (जापानी)	मूलसर्वा० (तिब्बती)
पापजिह	४	४
संपादिसम	११	११
अनियमधम्म	२	२
निम्नगिय पाचितिय १०	१०	१०
पाचितिय	९२	९२
पाटिहेमनीय	४	४
सेगिय	७५	१०६
अधिकरधम्ममय	७	७
<u>२२७</u>	<u>२२०</u>	<u>२३८</u>

बीच इन नियमों का उल्लंघन करने हुए उनके सम्बन्ध में कहा जा रहा है...

(१) पारारजिक (२) पाषितिय

(१) पारारजिक—ऐस कोप को कहते हैं जिसके बरने पर भिक्षु सदा के लिए संघ से निकाल दिया जाता है उसका कोई प्रायश्चित्त नहीं।

पारारजिकाएं चार हैं—(१) मैथुन (२) बोरी (३) मनुष्य-रूपा (४) नाम छत्वार के लिए सिद्धि का दावा करना तथा प्रदर्शन करना।

(२) सघाहितेस—इनके बंड-स्वरूप अपराध के लिए कुछ समय तक संघ से अलग बनेला रहना पड़ता है। ये तैरह प्रकार के हैं—

(१) जान बूझकर बर्नपतन करना (२) कामवासना से स्त्री-स्पर्श करना (३) कामवासना से स्त्री से बर्तालाप करना (४) अपनी प्रशंसा द्वारा उसे बुरे उद्देश्य से आकर्षित करना (५) विवाह करवाना, या प्रेमियों को मिलाना (६) संघ की अनुमति बिना अपने लिए बिहार बनवाना (७) बिना अनुमति बड़े नाप के बिहार बनाना जिसके बारे और सुती बगह भी न हो (८) कोप से अकारण भिक्षु पर पारारजिक-दोष लगाना (९) पारारजिक समान-अपराध लगाना (१०) बेताबनी देने पर भी संघ में फूट डालने का प्रयत्न करना (११) फूट डालनेवाले को हिमायत करना (१२) गृहस्थ की अनुमति के बिना उसके घर में घुसना (१३) बेताबनी देने पर भी संघ या छापी भिक्षुमा के आदेश को न सुनना।

(३) अनियतसम्म—ऐसे अपराध हैं, जिनका स्वरूप निश्चित नहीं है और छाक्ष्य मिलने पर भी जिन्हें किसी विशेष दोषी के अपराधों में गिना जा सकता है। य दो प्रकार के हैं—

(१) यदि कोई भिक्षु किसी एकान्त स्थान में बैठा हुआ स्त्री से बात कर रहा है और कोई अज्ञातकी उपस्थित आकर उसे पारारजिक सघाहितेस या पाषितिय अपराध का बोरी ठहराती है और बहु उसे स्वीकार कर लेता है तो वह उसी अपराध के अनुसार बन्ध का भागी है। (२) यदि वह एकान्त स्थान में न बैठकर किसी सुती हुई बगह में ही स्त्री से सम्भाषण

कर रहा है किन्तु उसका पम्पा में कुछ अजीबियत है और कोई यथावनी उपायिका उसी प्रकार आकर उस उन्मुक्त अणुओं का दासी टहलती है और उस वह स्वीकार कर लेता है तां वह उसी अपराध के अनुसार वह का मापी है ।

(४) निस्संगियपाश्चित्तिय—इसका अन्तर उन अपराधा की गणना की गयी है जिनमें स्वीकरण व माय-माय प्रायश्चित्त भी करता पड़ता है माय ही जिस बस्तु व सम्बन्ध में अपराध किया जाता है वह बस्तु भी मिट्टी व छोन सी जाती है । इस प्रकार क अपराधा में प्राय सभी वस्त्र सम्बन्धी और कवल दो मिश्रा-वाच सम्बन्धी है । उदाहरणार्थ—कोई निम्न अतिरिक्त चीजर मना चाहता है गृहस्थ व एम समय पर वस्त्र मांगता है या अर्द्ध वस्त्र (रेषम वा मुसायम वस्त्र) मांगता है आदि । इसी प्रकार के उन्मय स मिश्रावाच बदमम में भी यही शाय लगता है । मन्त्र की दी गयी बस्तु पर जब मिट्टी स्पर्शित अविचार करता है तब भी वह इसका भागी होता है ।

(५) पाश्चित्तिय—य एमे अपराध है जिन्हें करत पर प्रायश्चित्त करत क बाद अपराध-मुक्त कर दिया जाता है । उदाहरणार्थ—भूठ बोसना गामो रना भुगभो करता मतीर्वा जोरों वा प्रयाग करता आदि अपराध यदि हा जायें ता उनका प्रायश्चित्त करत क पदचान् भाग के लिए बैना व करत के लिए इतर्गन्त्य जाना पड़ता पा ।

(६) पाटिहैतमीय—उन वस्तुओं व यह सम्बन्धित है जिनके लिए दामा-याचना आवश्यक है ।

(७) सेन्धिय—य के उन्मय धम है जिनका सम्बन्ध बाहरी तिष्ठ-चार वस्त्र पानन व एम तथा भाजन आदि करने व नियमा से है । इनमें व अधिराज तर्कानीय तिष्ठार को ही उन्मय पाननवार है ।

(८) अधिहरणसमय—उन नियमा पर संघ में बिबाह होन पर उसकी पालि के उन्मय व एम में माग प्रकार क नियमा वा बिधान किया गया है ।

बन्धों के रूप में 'पारायिक' में चार पारायिक तरह संघादिसंघ वा अनियत तथा दस निस्तमियपाचिचित्त विमङ्ग के साथ संगृहीत हैं और बागवे पाचिचित्त चार पाटिदेसमीय पचहत्त संखिय और दस अवि करवसमय 'पाचिचित्त' में । इसके अतिरिक्त पाचिचित्त में ही सम्पूर्ण मिशुनी-विमङ्ग भी है । अतएव इन्हें पारायिक पाचिचित्त विमङ्ग न कहकर उसे मिशु-विमङ्ग मिशुनी-विमङ्ग कहना चाहिए । मिशुनी विमङ्ग छोटा है । जैसे मिशु-विमङ्ग में मिशुज के प्रातिमोक्ष नियमों की व्याख्या है, वैसे ही मिशुनी-विमङ्ग में मिशुजियों के नियमों की व्याख्या है ।

अपम द्रव्य शिन्धी विजयपिटक में (महाबोधि सभा सारनाथ) सैन विमङ्ग की व्याख्या और नियमों का इतिहास समस्त इसे छोड़कर प्रातिमोक्ष वा अनुवाद किया है । छारे 'अन्वक' का अनुवाद किया पर परिवार को पीछे का प्रकरण अन्व सप्त छोड़ दिया । प्रातिमोक्ष प्रति मिशु को बोध के मोक्ष (मुक्ति) पाने का व्याख्यान करता है, इसलिए इसका यह नाम पड़ा ।

अन्वक के दो भाग हैं—महावग्ग बुद्धवग्ग । महावग्ग के अन्व (वर्ण) बड़े-बड़े हैं इसलिए उसका यह नामकरण हुआ ।

(३) महावग्ग

महावग्ग के नागरी संस्करण में ३२१ पृष्ठ हैं अर्थात् इसमें ३३०० श्लोक हैं । बुद्धवग्ग में भी प्रायः उसी क्रम से गणन कर ८५८० श्लोक होय । इनके अध्यायों को अन्वक (खण्ड) कहा गया । उनके नामों से उनके विषय भी जानूँ सकते हैं । महावग्ग की मूल सर्वास्तिकाची 'महावग्गु' कहते हैं । वग्ग का अर्थ कथा वा बात है । यह अर्थ मूल वाक्या में नहीं पा । पालि विजयपिटक के अन्वक की तुलना सर्वास्तिका से विजय प्रकार है—

महावग्ग—

धेरवाद

सर्वास्तिका

१ महावग्ग

१ अन्वक

२ उपोसथ०	२ उपोसथ०
३ बस्मूपनायिका०	३ बर्षा०
४ पवारणा०	४ प्रवारणा०
५ चम्म	५ चर्म०
६ भयञ्ज०	६ भैषज्य०
७ कठिन	७ पीवर०
८ पीवर०	८ कठिन०
९ चाम्पेयवत्यु०	९ कौशम्बक०
१० द्यौगवट	१० कम्म०

शुद्धसंज्ञा—

१ कम्म०	११ पारिवासिक०
२ पारिवासिक०	१२ पुत्रुगल०
३ समुच्चय०	१३ रामय०
४ सयव०	१४ प्रातिमोक्षस्वापन०
५ कुहकबरपु०	१५ मयनामन०
६ मयनासन०	१६ अदिहरण०
७ मद्यमद	१७ संबभेद०
८ वन०	
९ प्रातिमोक्षप्रश्न०	

प्रातिमोक्ष भिन्नु और विहसुभी प्रातिमोक्ष के दो भाग में विभक्त है ।
वेरबाद और मर्वास्मिबाद में उनके नियमों की संख्या विभिन्न प्रकार देगी
जाती है—

भिन्नु-नियम	स्वविरबाद	सर्वास्मिबाद
पारवाजिन	४	४
संपादिगम	१३	१३
अदियन	२	२
विस्मयिन्वराचितिय	३०	३०

पाचित्तिय	१२	१०
पाटिद्वेषनिय	४	४
सेत्तिय	७५	११२
अधिकरणसमय	७	७
	<u>२२७</u>	<u>२६२</u>
मिद्धुञ्जी-नियम	स्वधिरवाह	सर्वास्तिवाह
पाराजिक	८	८
संपादित्तिय	१७	२०
निस्सम्मियपाचित्तिय	१०	३१
पाचित्तिय	१६६	१८
पाटिद्वेषनिय	८	११
सेत्तिय	७५	११०
अधिकरणसमय	७	७
	<u>३११</u>	<u>३७१</u>

बुद्धवर्ग के अंतिम तीन स्कन्धक को छोड़ बाकी सारे सर्वास्तिवाह में आ गये हैं। बुद्धवर्ग के अवशिष्ट स्कन्धक गुरुक वस्तु में आ जाते हैं। इनके अतिरिक्त वहाँ और भी कितनी ही बातें हैं जो पामि-पिटक में नहीं हैं।

महावग्ग के भिन्न-भिन्न स्कन्ध में निम्न बातें हैं—

(१) महास्कन्धक—भ्राह्मण में बढ़ा होना से इसका यह नाम पड़ा। सर्वास्तिवादी इसे प्रश्न्यावस्तु कहते हैं जो कि अधिक उपयुक्त नाम है। इसमें बुद्ध के बोधि प्राप्त करने के साथ बोधगया में रहना और बुद्ध की प्रथम यात्रा का वर्णन है। वे ब्राह्मणी ऋषियज्ञ मृगशाल (मारताप) में जाकर पञ्चवर्गिय भिक्षुओं को शिक्षा देते हैं। इसी क्रम में प्रश्न्या उपगम्यदा धर्मचक्र-प्रवर्तन भी आय है। प्रश्न्या-उपगम्यदा की विधि तथा शिष्य और उपाध्याय के कर्तव्य आदि का उनके परचात् व्याख्यान है, फिर बुद्ध गया और 'गवामीस' (ब्रह्मवीनि) पर्वत पर पहुँचते हैं और

‘आशीष्-पर्याय’ का उपस्था लेन है। इस मूत्र में लज्जितका क मिश्रण की व्याख्या की गयी है और सबका जमाने वाली भाग का बुजान कर विषय निरूपित किया गया है।

बुद्ध गया म चलकर राजगृह पहुँचकर, वहाँ गया विविधान को उपामक बनाने है। वही बुद्ध क अग्रभाकर ‘माग्गिपुत्त’ और ‘माग्गस्वान भाकर मिश्रु बनने है। पञ्चवर्गीया में में एक आचरित् का देन प्रमत्त हा माग्गिपुत्त न पूछा—“तुम किस घम का मानन हा” ? आचरित् का उत्तर था— ‘य धम्मा हनुप्पनवा०’ बानी गाया, जो बुद्ध क मिश्रान्त की निषाङ है, और जो बौद्ध रणा में पण्य या मिट्टी पर उन्कीण अणम्य प्राप्त हुई है। उसका अर्थ है—“हनु म उत्पन्न ज्ञान वाली जिननी बन्नाए है उनको उपागत मानने है उन का जो निरोध (विनाश) है उस भी। यही महाभ्रमण का बाद है”। माग्गिपुत्त और माग्गमान पहल ‘मञ्जय’ क प्रश्नान मिय्य म अब बुद्ध क हो मय।

उस वक्त जिन तरह पर छाड़कर कोय बुद्ध क पाम प्रश्नित हा रहे म उस रणकर जाणा न गाया व्यस्त की थी— मञ्जय क मनी येना का हा न मिया। अब (दैन) किन्का मनवासा है” ?

प्रश्नया माधाय्य रूप में मुख्य्याग कर पीन चीकर पहिनन का कर्णे है जिन एक मिश्र (गुह) भी न बनता है। प्रश्नित का धामनर बहन है। उपममश एव मिश्र मही है मबना वह मेष ज्ञान मण्य्य हाती है। दोनों में माना-रिणा की भाणा मनी जानी है। दोनों क मिय्य व्यक्ति जिन प्रकार का हाता चातिग भाहि बाने भी म्मी म्प्याय में भाणा है।

(२) उद्योतपत्तकपक—द्विार त्तिने में उस मदन के मयो माधु भवन पर्ये म अनुमाग परान्तुजाल बनन म। बौद्ध-निगुथा क मिय्य भी यह भाग्यनक हो गया—उत्तायक का द्विवात उरामवापार का निर्वात अनुमागा अभावम्या पञ्चम्या पूर्णिमा—दा त्तिन उरामय का निरुचय बनना। उत्तामय में मारे उराम्यप्र (मिधुभ्र) का एरचित हो प्राति

मौलसूत्र (सिद्धापदा) को बाँचना (पाठयण) पढ़ता तथा वेदों का प्रतीकार करना होता। अभावस्था एक पूर्णिमा की आतंकारों के लिए काम और अंक को विद्या (ज्योतिष और गणित) जानना आवश्यक है और इसका भी विधान है।

(३) वर्षोपनायिकास्मृत्यक—इसमें निम्न बातें बतसायी गयी हैं—“वर्षा में यात्रा करने पर दूसरे तिथि कहते हैं—शाकम्पुत्रीय धमण तो तुणों को मरने वर्षा में भी विचरण करते हैं।” इसलिए भगवान् न कहा—“बनुमति देता है वर्षा में वर्षावास करने की।” ऋतुओं के जानन के लिए राजकीय अधिकारियों को मान लिया। उद्यम कर भूमन काम भूमतुओं के साथ वर्षावास करने पर उनके साथ भूमा करते थे।

(४) प्रवारणास्मृत्यक—वर्षा जिस तिथि से शुरू होती है, उसे वर्षोपनायिका कहते हैं और जिस दिन वर्षावास खतम होता उस आश्विन पूर्णिमा को प्रवारणा। प्रवारणा के दिन गृहस्थ लोग भीमासा नाटक कर अपने यहाँ से आनखान मिसुमो को जो नाना वस्तुएं भेंट करते थे—इसी को प्रवारणा कहते थे। संभ भी उस दिन प्रवारणाकर्म करता।

(५) धर्मस्मृत्यक—इसमें धर्म की वस्तुओं, विलय कर जूतों के उपयोग के नियम कहिये हैं। इसी में एक बहुत बनी छेठ के पुत्र—भीम करोड़ का स्वामी होने से जिसका नाम ही सोनफोटिबीस पड़ गया था—को भगवान् न बहुत बड़ा अभ्यास करने पर भीजा के तार का बृष्टान्त देते धोप बतसाया। न अरयन्त हीसे न अरयन्त कड़े भीजा के तार उसको स्वरवासी तथा कामनामक नहीं बनाते। यही अर्हत् का धर्मन है कि निष्कामता से मुक्त विवेकमुक्त चित्तवान् उपारानदायकाम तुष्ठा के ध्य से मुक्त आदि पुरप का चित्त आयतनों की उत्पत्ति को देखकर मुक्त होता है यह परार्थ अनित्य है और वे अर्हत् को कपित नहीं करते। भिक्षुओं को एकदत्त का जूता (चप्पम) पहनना चाहिए। पुराता हो तो कई ठम्मे का भी पहना जा सकता है। मुद के नंगा पैर होने पर जूता

मही पहूना चाहिए । चारपाइ चौकी क भी नियम इसी स्वरूपक में है साप ही मबारी आदि का भी नियम किया गया है । मध्य-देश के बाहर कुछ मुबिबाएँ, बुरगपर (मानवा) में निवास करनेवाले सोमकुटिहण को प्रार्थना पर दी गयी है । यही मध्यम जलपद का मीमा बनायी गयी है— पूर्व में कर्बमस (कंठवाप नपास परगना) म पश्चिम म बृण (पातमर) नामक ब्राह्मण ग्राम तर उत्तर में उपीरुष्वर (हिमामय का काई पर्वत) में मकर दक्षिन में इक्ष्वाकुर्षि निगम तक । मध्यमजल म बाहर पाँच मिगमों का गज (कीरम) उलसम्पना कर सकता है ।

(६) भवउपसक षड—प्रधान भैपय्य का पत्न्यास म बुड का भैपय्य-गर् कहा गया । दवाण्या म थी—बर्षों का मूल की कपाय की पत्त की फल की गार की मवण क पून की मास और कष्य सुन की । ब्रंजन मीग म गूल निरामता मयहम-वृष्टी सर्वे भिरिन्मा त्रिप-चिक्किमा पाण्डगम-चिक्किमा का भी विधान यहाँ विद्यमान है । इसी स्वरूपक में आराम में बीडा को ठीर में रखन तथा मक्क म्गम भादि का भी विधान किया गया है । इसी में उन मासा को नियुक्त कर दिया गया है जा उन समय मास के गिण समाप्त में कहा गाय जाये म या त्रिमका गान देन लोग मुकतापीमी जयवा सामाजिक वायराट करन थ । अमय मास इन जग्मुओं क थ—मौष मित्र म्पाय मकडवषा पीना नामु भादि का । यहाँ पर भगवान् का उम समय पाण्डिग्राम (पटना) में जाना मिना है, जब मगधमहाभाय्य मुनीष और बर्षकार गंगा क तिनार कपर बसा रह थ । पाण्डिग्राम म बीगापी ज्ञान पर मित्र-मनापति म भेंट और उमरा तिनारल-जगयण हाना भी यहीं पर बजिन है ।

(७) कठिनस्कायक—शवाग्ना (आग्नि-वर्जिमा) क दिन एक गिण पीकर दवर तिमि एक मिशु का उगासक सम्मानित करन थ । उगी पीकर को 'कठिन' कहन थ उमी के नियम यहाँ है । इसी में इस मकरक का यह नाम पड़ा ।

(८) श्रीबरस्वाम्यक—यहाँ श्रीबर की बातें हैं। पहले बीच जीवक का संक्षिप्त चरित दिया हुआ है। जीवक के पास एक धीम (यकणी की छास का) मुल्त वान काशिराज ने मन्ना था। उसी को जीवक ने भगवान् को देना चाहा। भाये श्रीबर के बाटन मुखान उनकी संस्था जादि तथा विछील की जावर भाषि का उल्लेख है। इसी अध्याय में पास्तान-वेदाह मं मन गेगी मिशु को बुद्ध ने अपन हाथ से महसा कर मिशुओं से कहा— मिशुओ न तुम्हारे माता है न पिता है, वो कि तुम्हारी सेवा करेंगे। यदि तुम एक दूसरे की सेवा नहीं करोगे तो कौन करेगा? मिशुओ जा मरी सेवा करना चाह, बहु रोगी की सेवा करे।” यहाँ पर यह भी विधान है कि मृत मिशु की जीवों का मासिक भ्रमणों का सब है।

(९) अम्येयस्वाम्यक—अध्या में बहु वय इस स्वयं में वो बोप और उनके प्रतिजारा की बात है। निर्दोष का हटाना ठीक नहीं। अकर्म (विधि विरुद्ध बात) न कर्म सब मं एक साथ मिसकर फैलना करना चाहिए। कर्म (कोरय) पूरा करने का उपाय तथा तर्कनीय एवं प्रजासनीय भाषि नियमा का भी यहाँ पर उल्लेख है।

(१०) कौप्रम्वकस्वाम्यक—यहाँ पर कौपिण्य की बातें हैं। एक मिशु दीव के लिए बच बस को पात्र में ही छोड़ आया जबकि उसको उसे फेंक देना चाहिए था। इसी को लेकर विवाद बढ़ा। दोनों पक्षा क समर्पण पैदा हो गये और सारे कौपिण्य में वैमनस्य फैल गया। वे बुद्ध के समझाने पर भी नहीं मान और बुद्ध सबको छोड़कर अकेले चले गए। इसी प्रसंग में यही राजा श्रीचित्ति (कोमलराज) और ब्रह्मदत्त (काशिराज) की कथा आयी है।

ब्रह्मदत्त ने कोमलराज को जीत लिया था। बालापर में कोमलराज के पुत्र श्रीर्षायु कुमार ने ब्रह्मदत्त को जीता। श्रीर्षायु कुमार ने कहा— “तुमन हुमाठी सेना दग कोप और कोप्टागार को दीन लिया था तुमने

मेरे माता-पिता का मार डाला यही समय है कि मैं अपने पुराने बैर का बदला लू ।”

इस पर कागिराज ब्रह्मरक्ष वीर्यासि व पीरा में पत्थर डाला—‘नाग वीर्यासि मुम मुम जीवन-दान वा’ ।

“देव का जीवन-दान दे सकता हूँ देव भी मुझ जीवन दान लें” ।

डाला न एक दूमेरे का जीवन दान दिया । एक न दूमेरे का श्राय पकड़ कर छोड़ न करण की पापपत्नी ।

बधा गुनन पर नी भगइनवास भिगुआ न कहा—“मन्त्र भगवान् धर्मम्बामी गृह्य द परबाह न करे आप मुय स विहार करे हम भगइ का दय सेग ।”

मनाबन्ना का यह मलय है ।

(४) सुल्लवग

इसमें ४३१ पृष्ठ अर्थात् प्राय ८५०० श्लोक प्राय है । यह भी बाण्डकपा में विभाजित है विमना संशय इस प्रकार है—

(१) कम्मसकक—इसमें प्रतिमाग्गीय तर्कमीय उत्तपणीय प्रशासनीय (हटान) भाति बमों की बातें हैं ।

(२) पारिपासित्तकक—परिवाम मम स प्रतिपर्यग मात्तव आह्वान आदि दंडों की बात इस अंगपर में है । इसी व प्रमग में कहा गया है कि पारिषामित भिगुआ को दूमेरे भिगु का अभिषासन नहीं स्वीकार करना चाहिए ।

(३) समुत्थयसकक—मयें वृद्ध बडा (बमों) क सम्बन्ध में उच्यते है । बमों का समुत्थय ज्ञान न उन स्कथक का यह नाम पडा ।

(४) शमयसकक—अतिरगण (मुरम्म) में कथना का समय बतल है । आ इस प्रकार क होत है—(१) भूमिबिनय (याद बग्ग व पाप का मानना), (२) समूल विनय (बिना होत में दाय मानना), (३) प्रतिपात्तवग्ग (स्वीकार करना) (४) मूर्धविम्भारर (भगइ पर नितरा या हाँक देना) ।

(५) श्वाकवस्तुस्नान्यक—वस्तु शय्य का प्रयोग यह बतसाता है कि सर्वांशितवारियों का विनय-वस्तु माम सार्थक है। इस स्नान्यक में स्नान आभूषण तप नाच-तमासा पात्र तथा बिहार-निर्माण सम्बन्धी बातों का उल्लेख है। यही पर बुद्धबचन को छान्दस (वैदिक भाषा) में आरोपित करने की मनाही की गयी है। यह इस प्रकार है—

उस समय यमेल यमेलैकुल नामक ब्राह्मण जाति के सुन्दर (कल्याण) बचन सोसने वाला हो मार्ये थे। वे भिक्षु जहाँ भगवान् से बर्हा गये और जाकर अभिवादनार्थ करके उनसे बोले—“भन्ते इस समय माता नाम गोत्र जाति कुम के पुत्र्य प्रवर्धित होते हैं। वे अपनी भाषा में बुद्धबचन को कहकर उस दूषित करत है। मन्त्रा हो भन्ते हम बुद्धबचन को छत्र में बना दें।”

भगवान् ने उन्हें फटकारा और बार्मिक कथा कह भिक्षुओं को सवाधित किया—‘भिक्षुओ बुद्धबचन को छत्र में नहीं करना चाहिए, जो करे उसे ‘बुधकट’ का दोष होया। भिक्षुओ मैं अनुमति देता हूँ अपनी भाषा में बुद्ध बचन की बार्चन-सीसने की।

आराम के पेसानखाना पासना अर्धन चारपाई, तथा बुधारागेपक आदि के नियम भी यही दिये गये हैं।

(६) अयनासनस्नान्यक—इसमें बिहार के भीतर के सामान-सम्बन्धी नियम हैं। यहाँ पर कई तरह की चारपाइयों औरियाँ बिहार की रंगई, माता प्रकार के (घर) आलिव ओसाण उपस्थानशासत पानी घर, परिवेष (आंगन) आदि का विधान है। तबकर्म (नया मकान बनवाना) आदि का भी उल्लेख यहीं पर है।

मम्मानार्थ अर्धपिंड बेधे की बात करते हुए भगवान् ने तित्तिर आठन की कथा सुनायी—हिमाशय के पास एक बड़ा बरखर था जिसके आभय तित्तिर, आनर तथा हाथी से तीन मित्र रहत थे। तीनों में बिजामा इर्दि-हममें कौन जेठ है, जिससे हम उसका तबनुकप सत्कार करें। उनमें से

और ही बरपाद से पीछे पैदा हुए थे । इस सम्बन्ध में तित्तिर ने यह कहा कि उसने किसी का फल साकर बिछा कर दिया था त्रिमके बीच से वह बरपाद पैदा हुआ था । इस प्रकार से मायूम हुआ कि वही सबम जटा है । यह कह कर बुद्ध ने कहा—“मिथुजो बुद्धपन के अनुसार अभिवादन प्रत्युत्थान हाव-जोड़ना कृमान प्रसन्न प्रथम आमन प्रथम जस तथा प्रथम भोजन ठीक है ।”

इसी सम्बन्ध में उत्तर के स्वीकार करने की बात तथा बिहार की सीमा की बातें हैं । पाँच सीमें अभिभाग्य बताया गया है । बाँटने पर न के अभिभाग ही रहती है—

(१) आराम या आराम-बन्धु, (२) बिहार या बिहार-बन्धु, (३) मंच पीड़ा गरी तरिया (४) मीठुंन मीठुमागक मीठु बड़ाही समूचा फाड़ना बुधान (५) रम्मी बन्नी बाँध मूख रूप मिट्टी भरुनी का बजल मिट्टी का बर्तन । इसमें मच के बयबागियों—भोजन प्रविष्टागै मयतामन प्रमातर भदारी बीबर प्रविष्टाहृष बीबर भावक ययानु भावक फन-भावक, ल्याप-भावक आदि के जूनन की बात है ।

(७) तयबेबकसकपक—इसमें एक माप प्रव्रिष्ठ हुए अनुसूच जादि नावयुजा स्वस्त और उरानि इत्राय की कथा है । पीछे मान सरदार के लिए देवस्त की महत्त्वानागाएँ बड़ी । बुद्ध न माय नहीं गिदा ता देवस्त बिरानी हो गया और पण्य मार कर उसने बुद्ध के पैर में चोट पहुँचायी नापागिरि मापक मय्य हायी छुड़वाना मंच में पूर कामन की कोणित की । देवस्त मच के अनप हो गया और उसका पनन हुआ । इसमें भावे बन कर देवस्त के पनन का कारण तथा मंच भद की व्याख्या आदि प्रस्तुत है ।

(८) वतसकपक—इसमें स बन (कनय) बनभाव मय है—आयन्तु (अतिथि) आवाजिक (निवासी) गमिक (आनवान) मिथु वन टिर, भावन-सम्बन्धी नियम मितावारी और आरम्भ क व्रत

आसन, स्नान-गृह तथा पाकाने के नियम शिष्य उपाध्याय अग्नेवासी आचार्य के कर्तव्य ।

(९) प्रातिमोक्षस्वयनस्कार्यक—इसमें यह उल्लेख है कि किसका नियमानुसार प्रातिमोक्ष के स्वयन पर विचार किया गया है ।

(१०) त्रिभुजोत्कल्पक—त्रिभुजी की प्रबन्धा-उपसम्पदा तथा उन्हें त्रिभुजों का अभिवाहन आदि करना चाहिए, इन सबका उल्लेख यहाँ पर है । त्रिभुजी उपसम्पदा कौंसे शुरू हुई तथा इसके लिए महा-प्रजापती गौतमी न क्या किया यह भी यहीं पर बर्णित है । आठ मुद धर्मों को प्रजापती न स्वीकार किया तब उनकी उपसम्पदा हुई । त्रिभुजियों के संघर्षमें तथा अधिकरण-यामक और दूसरी कुछ विशेष बातें भी यहाँ बतलायी गयी हैं उवाहरचार्य मुक्त-सप जून आदि । त्रिभुजियों को उपसम्पदा पहल त्रिभुजी-संघ में फिर त्रिभुज-संघ में लेनी पड़ती है । आज बेरबाबी देश में त्रिभुजी-संघ में फिर त्रिभुजी-संघ में लेनी पड़ती है । आज बन सकती । बीच में सिंहल की त्रिभुजी केबसारा ने पाँचवीं सरी में जाकर त्रिभुजी-संघ को स्थापित किया था जो अब भी है । दोड़ी-सी उदार व्याख्या करके वहाँ से त्रिभुजी-संघ अब भी सिंहल में सामा जा सकता है । अरण्यावास त्रिभुजियों के लिए निषिद्ध है । उनके निवास-निर्माण पत्तिली प्रव्रजिता की संज्ञान का पालन आदि के सम्बन्ध में भी यहाँ पर व्याख्यान विद्यमान है ।

(११) पञ्चव्रतिकात्कल्पक—बुद्ध-निर्वाण ४५७ ई० पू० की ईशात पूर्वमा को हुआ । उसी के आपाङ्ग में पाँच ही त्रिभुजों ने महाकास्य की अध्यक्षता में राजगृह में बना हो बुद्धवचनों का संपादन किया । इसी को प्रथम संघीति कहते हैं और उसी का यहाँ बर्णन है । बुद्ध के निर्वाण पर त्रिभुजों ने सोक प्रकट करना शुरू किया । संपादन के लिए पहले आनन्द को मही चुना गया क्योंकि वे अर्हत् नहीं थे पर फिर बहु भी अर्हत् पर प्राप्त करने पर सम्मिश्रित किये गये क्योंकि आनन्द ने भयवान् के

पास से बहुत धर्म (सूत्र) और बिनय मुन बने। अभिबन्धन का यहाँ कोई उल्लेख नहीं है।

आनन्द से महाकाश्यप न धर्म (सूत्र) की प्रामाणिकता के बारे में पूछा और उपासि से बिनय के बारे में। उनके सम्बन्धित बचनों की सम्पूर्ण पाँच सौ के सपन संयोजन किया। इसमें जो पाठ संघीत हुआ वह मौखिक ही रहा।

आयुष्मान् पुराण संघीति व बरुण दक्षिणागिरि (राजगृह के दक्षिण के पहाड़ों) में था। व नहीं आय। और उन्होंने संघीति के पाठ से अपने पाठ को नहीं बदला। भिक्षुओं के बहान पर उन्होंने कहा—“आयुम स्वविरा म धर्म और बिनय का सुन्दर रूप से संयोजन किया है तो भी मैं भी मगवान् के मुह से मुना है मुझ से ग्रहण किया है। ईसा ही धारण करेगा।”

यहाँ पर कौण्डिन्य के राजा उपासक के रतिवास की रानियों का आनन्द को बहुत-से बस्त्र-दान देने की बात को उपासक के सम्बन्धित दक्ष को ब्रह्मदण्ड देने का उपासक है।

(१२) सप्तप्रतिकास्कायक—बुद्ध निर्वाण के सौ वर्ष बाद ३८० ई० पूर्व में यह संघीति बैंगामी में हुई थी जिसमें सात सौ स्वविरा शामिल हुए थे। इनमें एक नाम सप्तप्रतिका पड़ा। आयुष्मान् यदा ने बैंगामी के भिक्षुओं को ईसा सन का काम करते देखा जो बिनय-विद्वत् थे। लेकिन वहाँ पर बहुमत से वह दृष्टि किया गया। इन पर यदा बौद्ध भिक्षु-जगत् की सहायता के लिए निराम। बैंगामी के भिक्षुओं में भी इस सम्बन्ध में प्रचलन किया। आनन्द ने गिण्य स्वर्णकामी सबसे बुद्धे व। वे यदा के पक्ष में हुए। बैंगामी में ही यह संघीति हुई। बुद्ध संघ में हस्ता-मुस्ता होने से उदाहरण (प्रवर समिति) बुनी मयी त्रिगुणके सामने पहले वे हमों मवान् पूछ गये त्रिगुणके बारे में कहा गया। जब उगन वह दिया—“निषिद्ध है” तब वही बातें बुद्ध संघ के सामने रखी गयी।

ये बातें थी—

१ सींग में ममक इस अभिप्राय से रखता कि जब ममक कम होता तो भोजन में कमी आवेगा ।

२ मध्याह्न की खाना के दो अंगुल बढ़ जाने पर भी भोजन करना ।

३ ग्रामांतर में बसमय प्रवेश ।

४ आवासकल्प०

५ अनुमतिकल्प

६ आशीर्षकल्प

७ अमणितकल्प०

८ बल्लोमीपानकल्प

९ बिना पाइ का विहीना

१० सोन-बाँधी सेना ।

सब के बीच में ये बातें आयुष्मान् देवत ने आयुष्मान् सर्वकामी से पूछा तो सर्वकामी ने नहीं में जवाब दिया । इस विनय-संगीति में न कम न बेसी सात ही मिक्षु से इसलिए बड़े विनय-संगीति उपपत्तिका कही जाती है ।

इस तरह विनय की सारी बातें पारमिक्, पाचिस्सिय महाबला और बुद्धवग्ग में आ गयी है । इन्हीं की बातें विनयपिटक के पाँचवें ग्रन्थ 'परिवार' में भी हैं, जो कि सिहल की कृति है ।

(५) परिवार

३२१ पृष्ठ तथा ७१२ श्लोकों के प्रमाण का यह ग्रन्थ सिहल में रचा गया था । इस ग्रन्थ में स्पष्ट उल्लेख है—

"पुञ्जाचरियमम्यञ्च पुञ्जित्वा वा ठहिं ठहिं ।

धीप काम महापञ्चो मुत्तवरो विचकल्लो ॥

इत्थं वित्थारत्तंसेपं उञ्जापममणेन मज्झिम ।

चिन्तमित्वा मिञ्जापेसि त्तिस्सकलं मुञ्जावहं ॥

इससे तो साफ ही जाहिर है कि 'धीप' नामक बुतवर ने इन्हीं सिहल में लिखाया ।

भिक्षु जगदीश नाथप ने नागरी संस्करण की अपनी मूमिका में लिखा है—

इसमें छान-बड़े कुल इक्कीस परिच्छेद हैं। विषय-विभाजन की दृष्टि से न तो इसमें कोई क्रम है, और न कोई एकरूपता। किसी विनय तारत्वम्प की दृष्टि से इसका संरूप हुआ हो सो भी बात नहीं की जाती। प्रथम परिच्छेद अपन में पूरा है जो विषय के किसी एक पहलू पर विचार करता है।”

इसमें परिच्छेद य हैं—(१) भिक्षुविमङ्ग (२) भिक्षुनी विमङ्ग (३) समुद्दानसीसमङ्गप (४) अन्तरप्यास (५) समपमव (६) तन्मरुपुच्छावाट, (७) एहुत्तगिज्जव (८) उपोसपान्निपुच्छा विस्सञ्जना (९) अत्पवमपरम (१०) गायासङ्गणिक (११) अपिकरमव (१२) अवरगायामङ्गणिक (१३) ओदनाकम्भ (१४) बुद्धगङ्गाम (१५) महासङ्गाम (१६) कल्लिमव, (१७) उपामिपञ्चक, (१८) अन्त्यागतिसमुद्दान (१९) इत्थिमयायासङ्गणिक, (२०) मेद मोपनगाया (२१) पञ्चवमा।

इसकी शीर्षी प्रश्नोत्तर की है, जैसे—ममवान् न इम निस्तापव का उपदेश कहां किसको और किस प्रकार में दिया? क्या इसमें ‘प्रज्ञप्ति’ ‘अनु-प्रज्ञप्ति’ और ‘बन्धुपप्रज्ञप्ति’ है यात्रि ?

इसी प्रकार में विनय की मुह-सरम्पत्त बतनायी गयी है (१) उपासि (२) दाया (३) सोणक, (४) सिम्मव, (५) मोमसिपुत्त ये पाँच जम्बुद्वीप के भ्रष्ट और लव (६) महिण्ड (७) इत्थिम (८) उत्थिम (९) शम्भव तथा अन्ननामक पंडित —य महाप्राज्ञ जम्बुद्वीप में यहाँ (लंबा) आय। उन्होंने ताभरणी (लंबा) में विनय और निटव का पाठ कराया तथा पाँचों निवार्यों का पाठ करना और मात अविघम्प के प्रकरणों का भी। उसके बाद (१०) अरिदु (११) वात्रमुमन (१२) दीर्घनामक पर (१३) बुद्धरस्मिन्त (१४) तिसुपट, (१५) देवदेर

आदि—इस प्रकार से इन महाप्रज्ञ तथा विनय के मार्गकोविदा ने विनय-पिटक को ताम्रपत्री द्वीप में प्रकाशित किया ।

पूर्व क्रम से प्रश्न-उत्तर के रूप में विनयनामे बहुत-से प्रश्नों को उठाकर परिष्कार में सत्तर दिया गया है ।



सातवाँ अध्याय अभिधम्मपिटक

प्रथम तथा द्वितीय दोनों समीतियों के बचन में 'धम्म' तथा 'विनय' के ही संगणन की बर्षा है। इसमें यह स्पष्टतया ज्ञात होता है कि पहले दो ही पिटक थे और अभिधम्मपिटक पीछे का है। इसके मूल को पहले 'मातिका' कहा जाता था। सर्वास्तिवाद स्पबिरवाद का ही एक सम्प्रदाय था और स्पबिरवाद के पातिपिटक को ही बहुत बौद्ध-मे मर के प्राय उन्हीं नामों से संस्कृत में करके उस सर्वास्तिवापिटक नाम दे दिया गया है। मुत्तपिटक के सम्पूर्ण निकायों (भागों) के दीर्घायम आदि नाम ही नहीं बल्कि उनके मूत्रों के भी वही नाम सर्वास्तिवापिटक में मिलते हैं। विनयपिटक के सम्बन्ध में भी वही स्थिति है। पर अभिधम्मपिटक के द्वय दोनों में निम्न-निम्न है और यह भी यही सिद्ध करता है कि तृतीय संगीन के समय तक दो ही पिटक थे तृतीय पिटक (अभिधम्मपिटक) उसके बाद अस्तित्व में आया। डाक्टर लाहा ने अभिधम्मपिटक के द्वयों को निम्न क्रम में रखा है—

- १ पुमात्तपञ्जाति
- २ विमङ्ग
- ३ धम्ममणषि
- ४ धानुदधा
- ५ यमक
- ६ पट्टान
- ७ कपावत्तु

सर्वास्तिवादी अभिधम्म के अन्तर्गत निम्नलिखित सात द्वयों की गणना करते हैं, जिनमें 'ज्ञानरस्यान' मुख्य है—

ग्रन्थ	कर्ता
१ ज्ञानप्रस्थानशास्त्र	आर्य कात्यायन
२ प्रकरणपाठ	स्वधिर बसुमित्र
३ विज्ञानकायपाठ	स्वधिर देवशर्मा
४ धर्मसूत्रपाठ	आर्य शारिपुत्र
५ प्रसप्तिशास्त्रपाठ	आर्य मौद्गल्यायन
६ सातुकायपाठ	पूर्व या (बसुमित्र)
७ संगीतिपर्यायपाठ	महाकौशिल्य (या शारिपुत्र)

अभिधम्म धर्मो (सूत्रों) का ऐतिहासिक रूप है। सर्वत्र ही बर्धन-निर्माण का प्राथमिक प्रयत्न शब्द और माया के अस्पष्टिकरण होने के कारण रूपा ही होता है। इसके सम्बन्ध में हम उपनिषद् को ले सकते हैं। यहाँ पर तो कथोपकथन के रूप में उन्हें कुछ घरस बनाने का प्रयास किया है, पर इनकी तुलना में 'अभिधम्म' तो पारी रेगिस्तान-सा जगह होता है। इसे सुगम बनाने का प्रयत्न चौबीसवीं सदी में आचार्य बसुबन्धु ने सर्वान्तिवार के लिए किया। 'वेरवाद' (स्वधिरवाद) के लिए बही कार्य 'अभिधम्म-वतार' तथा 'अभिधम्मत्वसंह' आदि ग्रन्थों ने उसी समय के आसपास किया। अभिधम्मपिटक स्वयं में अतिविशाल है और उसे अत्यन्त संक्षिप्त करके देना कठिन है। अतएव अब तक लिखे गये पाणि साहित्य के इतिहास ग्रन्थों के आधार पर संक्षिप्त करके उसे नीचे प्रस्तुत किया जा रहा है—

१ धम्मसंगणि

इस ग्रन्थ को 'अभिधम्म' का मूल माना जा सकता है। पुरानी परम्परा में सुत्तपर, विमयपर तथा मातिकापर आदि का जो उल्लेख आता है, वह मातिका इस ग्रन्थ में समूहित मातिका ही थी। इसमें नाम (मन या मानसिक) तथा रूप रूपत् की व्याख्या प्रस्तुत की गयी है और यह व्याख्या कर्मों के कृष्णत अकृष्णत तथा अप्याकृत कर्मों तथा उनके विपाकी आदि को ध्यान में रखकर की गयी है। यह व्याख्या नैतिक है और दूसरे शब्दों में इसे हम बौद्ध नीतिशास्त्र की मनोवैज्ञानिक व्याख्या कह सकते हैं, क्योंकि

इसमें चित्त तथा चैतनिक धर्मों का कुणम अकुणम तथा अभ्याहृत रूप में विभक्त्यपण प्रस्तुत किया गया है।

मातिवाकों का १२२ वर्गीकरण यहाँ पर है जिसमें स २० तो तीन तीन के दीर्घकों में विभक्त करके दी गयी है और शेष १०० दा-बो के दीर्घकों में। यही क्रम 'तिट्' तथा 'दुक्' कहलाता है। इन्हीं तिकों तथा दुकों के द्वारा धर्मों का सम्पूर्ण विभक्त्यपण सम्मसंगणि में किया गया है। यह प्रनामी अभिधम्मपिटक के अन्य धर्मों में भी अपनायी गयी है। नीचे २२ तिकों का विवरण दिया जाता है—

(१) तिक

- १ (अ) जो धम्म कुणम है।
- (आ) जो धम्म अकुणम है।
- (इ) जो धम्म अभ्याहृत है।
- २ (अ) जो धम्म सुग की बहना स युक्त है।
- (आ) जो धम्म दुग की बहना स युक्त है।
- (इ) जो धम्म न सुग न दुग की बहना स युक्त है।
- ३ (अ) जो धम्म चित्त की कुणम या अकुणम अवस्थाना के स्वयं परिणाम है।
- (आ) जो धम्म स्वयं चित्त की कुणम या अकुणम अभ्याहृतों की पैदा करनेवाला है।
- (इ) जो धम्म न चित्त के स्वयं परिणाम है और न परिणाम पैदा करनेवाला है।
- ४ (अ) जो धम्म पूब कर्म के परिणाम-स्वरूप प्राप्त विद्य गय है और जो स्वयं भविष्य में ऐसे ही धर्मों का पैदा करनेवाला है।
- (आ) जो धम्म पूब कर्म के परिणाम-स्वरूप नहीं विद्य पय किन्तु जो भविष्य में धर्मों को पैदा करनेवाला है।
- (इ) जो धम्म न तो पूब कर्म के परिणाम-स्वरूप प्राप्त ही विद्य पये है और न जो भविष्य में धर्मों को पैदा करनेवाला है।

५. (अ) जो बम्म स्वयं अपवित्र है और अपवित्रता के आसम्बन्ध भी बनते हैं ।
 (आ) जो बम्म स्वयं अपवित्र नहीं है किन्तु अपवित्रता के आसम्बन्ध बनते हैं ।
 (इ) जो बम्म न स्वयं अपवित्र है और न अपवित्रता के आसम्बन्ध ही बनते हैं ।
६. (अ) जो बम्म वितर्क और विचार से मुक्त है ।
 (आ) जो बम्म वितर्क से तो नहीं किन्तु विचार से मुक्त है ।
 (इ) जो बम्म न तो वितर्क और न विचार से ही मुक्त है ।
७. (अ) जो बम्म प्रीति की भावना से मुक्त है ।
 (आ) जो बम्म मूल की भावना से मुक्त है ।
 (इ) जो बम्म उपेक्षा की भावना से मुक्त है ।
८. (अ) वे बम्म जिनका वर्णन के द्वारा नाश किया जा सकता है ।
 (आ) वे बम्म जिनका अम्वास के द्वारा नाश किया जा सकता है ।
 (इ) वे बम्म जो न वर्णन और न अम्वास से ही नाश किये जा सकते हैं ।
९. (अ) वे बम्म जिनके हेतु का विनाश वर्णन से किया जा सकता है ।
 (आ) वे बम्म जिनके हेतु का विनाश अम्वास से किया जा सकता है ।
 (इ) वे बम्म जिनके हेतु का विनाश न वर्णन से और न अम्वास से ही किया जा सकता है ।
१०. (अ) वे बम्म जो कर्म-संचय के कारण होते हैं ।
 (आ) वे बम्म जो कर्म-संचय के विनाश के कारण बनते हैं ।
 (इ) वे बम्म जो न कर्म-संचय और न उसके विनाश के कारण बनते हैं ।
११. (अ) वे बम्म जो सौरय-सम्बन्धी हैं ।
 (आ) वे बम्म जो दौश्य-सम्बन्धी नहीं हैं ।
 (इ) वे बम्म जो उपर्युक्त दोनों प्रकार से विविध हैं ।

- १२ (अ) वे धम्म जो अल्प आकारवाले हैं ।
 (आ) वे धम्म जो महा आकारवाले हैं ।
 (इ) वे धम्म जो अपरिमय आकारवाले हैं ।
- १३ (अ) वे धम्म जिनका आत्मन्वन अल्प आकारवाला है ।
 (आ) वे धम्म जिनका आत्मन्वन महा आकारवाला है ।
 (इ) वे धम्म जिनका आत्मन्वन अपरिमय आकारवाला है ।
- १४ (अ) वे धम्म जो हीन हैं ।
 (आ) वे धम्म जो मध्यम हैं ।
 (इ) वे धम्म जो उत्तम हैं ।
- १५ (अ) वे धम्म जो निश्चयपूर्वक बुरे हैं ।
 (आ) वे धम्म जो निश्चयपूर्वक अच्छे हैं ।
 (इ) वे धम्म जिनका स्वरूप अनिर्दिष्ट है ।
- १६ (अ) वे धम्म जिनका आत्मन्वन मार्ग है ।
 (आ) वे धम्म जिनका हेतु मार्ग है ।
 (इ) वे धम्म जिनका मुख्य उद्देश्य ही मार्ग है ।
- १७ (अ) वे धम्म जो उत्पन्न हो चुके हैं ।
 (आ) वे धम्म जो अभी उत्पन्न नहीं हुए हैं ।
 (इ) वे धम्म जो अविव्य में पैदा होनवाले हैं ।
- १८ (अ) वे धम्म जो अतीत हैं ।
 (आ) वे धम्म जो अनागत हैं ।
 (इ) वे धम्म जो प्रत्युत्पन्न हैं ।
- १९ (अ) वे धम्म जिनका आत्मन्वन अतीत है ।
 (आ) वे धम्म जिनका आत्मन्वन अनागत है ।
 (इ) वे धम्म जिनका आत्मन्वन प्रत्युत्पन्न है ।
- २० (अ) वे धम्म जो किसी व्यक्ति के अन्दर अवस्थित हैं ।
 (आ) वे धम्म जो किसी व्यक्ति के बाहर अवस्थित हैं ।

- (६) वे धम्म जो किसी व्यक्ति के अन्दर और बाहर दोनों बंधव अवस्थित हैं ।
- २१ (अ) वे धम्म जिनका आत्ममन कोई आन्तरिक वस्तु है ।
 (आ) वे धम्म जिनका आत्ममन कोई बाह्य वस्तु है ।
 (इ) वे धम्म जिनका आत्ममन आन्तरिक और बाह्य दोनों वस्तुएँ हैं ।
- २२ (अ) वे धम्म जो बुद्ध्य हैं और इन्द्रिय तथा उसके विषय के सम्बन्ध से उत्पन्न होनेवाले हैं ।
 (आ) वे धम्म जो बुद्ध्य नहीं हैं, किन्तु इन्द्रिय तथा उसके विषय के सम्बन्ध से उत्पन्न होनेवाले हैं ।
 (इ) वे धम्म जो न तो बुद्ध्य हैं और न इन्द्रिय तथा उसके विषय के सम्बन्ध से उत्पन्न होनेवाले हैं ।

(१) बुद्ध—इसी प्रकार छ १ बुद्धों के द्वारा भी धम्मों का विस्तारण यहाँ पर प्रस्तुत है जिनमें हेतु, आसन्न संयोजन धम्म बोध नीवरण पचमर्ष उपादान क्लेश आदि बर्णों में इनका विस्तारण किया गया है । धम्मों के १२२ प्रकार से वर्गीकरण इसी उपर्युक्त रूप में है ।

इन वर्गीकरणों में प्रथम तिक द्वारा कुशल अकुशल तथा अस्माद्धृत रूप में विद्यमान वर्गीकरण अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है क्योंकि यहाँ पर कर्मों का आधार पूर्णतया नैतिक दृष्टि ही है । छय वर्गीकरण तो इसी के पूरक स्वल्प है ।

२ विमञ्ज

यह इस पिटक का दूसरा धम्म है । आरम्भ में विमञ्ज ध्यात्या की कहते व धम्म प्रातिमोक्ष की व्याख्या विमञ्ज कही जाती थी । इसमें स्कन्धों का विवरण दिया गया है । बौद्ध मान्यता के अनुसार आत्मा वस्तुतः कोई चीज नहीं है रूप (बहामूठ) वेदना संज्ञा संस्कार तथा विज्ञान इन पाँच स्कन्धों के अतिरिक्त आत्मा नामक किसी पदार्थ की स्थिति नहीं है । इन्हीं पञ्च स्कन्धों की यहाँ पर व्याख्या भी कयी है ।

विमङ्ग के निम्न १८ प्रकरणों से उत्पन्न विषय स्पष्ट है—

१ स्वप्न	१० बोधङ्ग
२ आयतन	११ मार्ग
३ वातु	१२ ध्यान
४ धरत	१३ अपरिमाण
५ इन्द्रिय	१४ शिक्षापद
६ श्रययाकार	१५ प्रतिमंबिष्
७ स्मृतिप्रस्थान	१६ ज्ञान
८ सम्यकप्रधान	१७ धुक्कवस्तु
९ आदिपाय	१८ धमहृदय

य उपर्युक्त १८ विमङ्ग नामे इन तीन जङ्गी में विभक्त है—(१) सुतन्त्र-वाक्यीय (२) अभिधम्म-भाषणीय (३) पञ्च (प्रश्न)-मुष्पक । इनमें से पहले में मुक्ता के अनुसार, दूसरे में अभिधम्म की मातिकाओं के अनुसार तथा तीसरे में एक तिह भागि रूप में प्रस्तावर करत हुए व्याख्या प्रस्तुत की गयी है । धम्मसंगणि में तो धम्मा का विस्तारण मात्र उपस्थित किया गया है पर विमङ्ग में जहाँ धम्मा का स्वल्प आयतन तथा वातु रूप में संक्षिप्त वर्णन किया गया है । यही भी धम्मसंगणि के अनुसृत तथा व्याख्यात इन सभी को ग्रहण करके ही यह प्रस्तुत किया गया है । इस तरह विमङ्ग धम्मसंगणि पर ही अवलम्बित है ;

३ धातुकथा

स्वल्प आयतन और वातु यही तीनों धातुकथा के विषय है । इस प्रकार विमङ्ग के १८ विमङ्गों में से स्वल्प आयतन तथा वातु इन तीन विमङ्गों को ग्रहण करके उनका विस्तारण यहाँ पर किया गया है । इस प्रकार से इस ग्रन्थ का तीर्थिक विषय-वस्तु की दृष्टि में वातुकथा न होकर स्वल्प आयतन-धातुकथा होना चाहिए था । इस ग्रन्थ में इन तीनों का सम्बन्ध यमों के साथ किन्तु प्रकार से है इन सम्यक रूप में प्रस्तुत किया गया है । किन्तु-विना स्वल्प आयतन तथा वातु विमङ्ग में कौन-कौन से धम संगृहीत

इसी प्रकार से सभी अध्यायों में इन वर्गीकरणों के मापार पर ही ही व्यक्तियों का वर्णन उपस्थित किया गया है। कहीं-कहीं यहाँ पर बड़ी-बड़ी ही सुन्दर उपमाएँ भी मिली हैं।

३. कथावस्तु

इसके रचयिता अशोक के गुरु 'मोग्गलिपुत्त तिस्स' माने जाते हैं, पर वैसे कि ऊपर कहा जा चुका है, बहु सिमसिमा बाद में भी जारी रहा और इस ग्रन्थ में अभिवृद्धि होती रही।

इसके २३ अध्यायों में स्वविराज के अतिरिक्त १७ निकायों (सम्प्रदायों) के २१६ सिद्धान्तों को प्रश्न के रूप में पूर्वपक्ष रखकर बाद में में उनका उत्तर तथा समाधान उपस्थित करके हुए स्वविराजी दृष्टिकोण की ही स्थापना की गयी है। अशोक के समय में बौद्ध धर्म जनक सम्प्रदायों में विभक्त हो गया था और य सोप-अपग अनुसार बौद्ध मन्थियों की व्याख्या भी करने लगे। उस समय यह समझना कठिन-सा हो गया कि बुद्ध का वास्तविक मन्थ्य क्या था। इसी उद्देश्य को सामन रख कर 'मोग्गलिपुत्त तिस्स' ने इसकी रचना की और इसन इस उद्देश्य की पूर्ति की तथा बाद में इसी कारणवश इसे त्रिपिटक के एक ग्रन्थ होना का मीलन प्राप्त हुआ। इस ग्रन्थ में केवल दार्शनिक सिद्धान्तों का ही खंडन किया हुआ है और ये सिद्धान्त किन सम्प्रदायों के थे इसका उल्लेख कहीं पर नहीं है। इस कमी को पूर्ति इसकी अट्टकथा ने की है। इन सिद्धान्तों तथा मतपरत्यों में कुछ तो एतद् हैं जिनका अस्तित्व अशोक के बाद हुआ। उदाहरणार्थ—
अन्धक अक्षरहीनीय पूर्वहीनीय राजगिरिक, सिद्धार्थक वैपुस्य उत्तप-पन्नक और हेतुवारी। यह इस ओर संकेत करता है कि इसके कई अंश ईसा की पहली सताय्यी तक इसमें जोड़े गए हैं।

इसमें के कुछ सिद्धान्त त्रिमया खंडन उपस्थित किया गया है नीचे दिये जा रहे हैं—

खंडन प्रक्रिया

(१) क्या जीव सत्य या आत्मा की परमावैत सत्ता है? कश्चि

पूतक और सम्मिथिय मिलु इमे मानते थ । स्वबिरबाद के दृष्टिकोण मे इनका लण्डन किया गया है (अध्याय-१) ।

(१६) क्या सब बुद्ध है ? सर्वास्तिवादिया का बिस्वास था कि भूत ब्रह्मान और भविष्यत् क सभी भौतिक और मानसिक धर्मों की सत्ता है । स्वबिरबादियों क मतानुसार अतीत समाप्त हो चुका भविष्यत् अभी उत्पन्न नहीं हुआ केवल वर्तमान ही सत् हा सक्ता है (अध्याय-१) ।

(१६) क्या गृहस्थ भी अर्हत् हो सकता है ? उत्तरापथका का एसा बिस्वास था । स्वबिरबादी मान्यता यह है कि अर्हत् होन पर मनुष्य गृहस्थ नहीं रह सकता (अध्याय-४) ।

(१७) क्या यहाँ लिया हुआ दान अन्यत्र (दित्तों द्वारा) उपभोग लिया जा सक्ता है ? राजगृहिक और मित्रासंक मित्रुओं का एसा मत था । स्वबिरबादियों क अनुसार भोजन का मात्तान उपभोग तो उनके लिए सम्भव नहीं है चिन्तु यहाँ दिय हुए दान क कारण प्रत्तों क मन पर प्रच्छा प्रभाव अवश्य पड़ता है और वह उनक कल्याण के लिए होता है (अध्याय-७) ।

(१२५) क्या व्यक्ति का भाग्य उमरे लिए पहल मे ही निश्चित (नियत) है ? पूर्वदीप्तियों और अवरदीप्तिया का एसा ही मत था (अध्याय-१३) ।

(१६७) क्या यह कहना गलत है कि संप दान प्रहम करता है ? यह मत वैशुल्यक (वैशुल्यक) नामक महा-गुन्यातावादियों का था (अध्याय-१७) ।

(१६९) क्या देवताओं के पगु भी हस्त है ? ज्ञातकों क अनुसार होन ये (अध्याय-२०) ।

६ यमक

इन प्रकरण में प्रस्त जोड़े के रूप में एक यमक है । यमक का धार्मिक अर्थ है बड़बो । यहाँ पर प्रस्ता क अनुकूल और उनक विरुद्ध व्यक्तियों क

बोड़े बना रखे गये हैं और इसी प्रणाली का भाषि से वस्तु तक अनुकरण किया गया है। इसी से इसका यह नामकरण हुआ है जैसे—

- (१) क्या सभी कुशास-धर्म कुशास-मूल है ?
क्या सभी कुशास-मूल कुशास-धर्म है ?
- (२) क्या सभी रूप रूप-स्कन्ध है ?
क्या सभी रूप-स्कन्ध रूप है ?
- (३) क्या सभी अरूप अरूप-स्कन्ध है ?
क्या सभी अरूप-स्कन्ध अरूप है ?

इस प्रश्न में १ अध्याय है और बजित विषय जगज्ज अध्यायों के नामों से ही स्पष्ट है—

(१) मूलधर्मक—कुशास अकुशास और अध्यास्त य तीन 'मूल' धर्म या पदार्थ

- (२) धर्मधर्मक—५७ धर्म स्कन्ध
- (३) आमततयधर्मक—१८ आमतत
- (४) भातुयधर्मक—१८ भातुयै
- (५) सत्त्वधर्मक—४ सत्त्व
- (६) संस्कारधर्मक—कामिक भाषिक तथा मानसिक संस्कार
- (७) अनुसयधर्मक—७ अनुसय (चित्त में स्थित सुपुष्ट बुधइयाँ)
- (८) चित्तधर्मक—चित्त-सम्बन्धी प्रश्नोत्तर
- (९) धम्मधर्मक—धर्म-सम्बन्धी प्रश्नोत्तर
- (१०) इन्द्रियधर्मक—२२ इन्द्रियाँ ।

यहाँ तक विषय-प्रतिपादन की शैली का प्रश्न है, वह प्राक्-प्रत्यक्ष अध्याय में समान ही है। यह एक विद्यालय ग्रन्थ है।

७ पट्टान (प्रस्थान)

यह शैली की दृष्टि से अत्यन्त सुन्दर ग्रन्थ है, साथ ही भाषा में भी बहुत बढ़ा है। स्वामी संस्कारण में यह १ त्रिस्तोत्रों में समाप्त हुआ है और यही

हालत देवनागरी संस्करण की भी है। इसमें भी अन्तिम तीन भाग संक्षिप्त कर बन पर ही ऐसा हुआ है। यदि यह विवरण संक्षिप्त न किया जाय तो अनुमानतः यह ग्रन्थ १४००० पृष्ठों में समाप्त होगा। यह चार भागों में विभक्त है—

- (१) अनुसोमपट्टान—इसमें धम्मा के पारस्परिक प्रत्यय-सम्बन्धों का विधानात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।
- (२) पञ्चनियपट्टान—इसमें धम्मा के पारस्परिक प्रत्यय-सम्बन्धों का निषघातमक अध्ययन प्रस्तुत है।
- (३) अनुसोमपञ्चनियपट्टान—इसमें धम्मा के पारस्परिक प्रत्यय सम्बन्धों का विधानात्मक और निषघातमक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।
- (४) पञ्चनियअनुसोमपट्टान—इसमें धम्मा के पारस्परिक प्रत्यय सम्बन्धों का निषघातमक और विधानात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

अन्धारम्भ में 'पञ्चनियसुत्त' नामक भूमिका है। इसमें २४ प्रत्ययों का उन्मूल और गणिप्त विवरण प्रस्तुत किया गया है और इन्हीं के आधार पर धम्मा का उच्चारण तथा व्यय इस ग्रन्थ में प्रदर्शित है। ये २४ प्रत्यय निम्न सिंगित हैं—

- | | |
|------------------|-------------------|
| (१) हेतु प्रत्यय | (१०) पुरुंजात |
| (२) आत्मन्वन० | (११) पञ्चत्तुजान० |
| (३) अधिपति० | (१२) जानवन० |
| (४) अनन्तर० | (१३) वम० |
| (५) समन्तर० | (१४) विपाक० |
| (६) सहजात० | (१५) आहार० |
| (७) अन्यस्य० | (१६) इन्द्रिय० |
| (८) निषय० | (१७) ध्यान० |
| (९) उदनिष्प० | (१८) मार्ग० |

- (१९) सम्ममुक्त०
(२०) विप्रमुक्त०
(२१) अस्ति०

- (२२) नास्ति०
(२३) विगत०
(२४) अवियत्त०

किसी एक वम्म खबवा वमों की उत्पत्ति तथा निरोध दूसरे वम्म खबवा वमों की उत्पत्ति तथा निरोध पर आचारित होते हैं और इसी आचार-सम्बन्ध को प्रत्यय कहते हैं। इन प्रत्ययों में से कुछ का सक्षिप्त परिचय इस प्रकार है—

(१) हेतुप्रत्यय—हेतु मूल कारण खबवा आचार को कहते हैं। ये छह होते हैं—सोम इय मोह तथा उनके विपत्ती असोम अइय और वमोह। ये ही मूल कारण हैं। जिससे वम्म उत्पन्न होते हैं, वे हेतु या मूल कारण बने जाते हैं और जिस प्रत्यय से उन वमों की उत्पत्ति होती है, उन्हें हेतु-प्रत्यय कहते हैं।

(२) आसम्बन्धप्रत्यय—आसम्बन्ध या 'आरम्भन' (इन्द्रिय) विषय को कहते हैं। जिस वस्तु के आचार से कोई दूसरी वस्तु पैदा होती है तो उस दूसरी वस्तु के प्रति पहली वस्तु का सम्बन्ध आसम्बन्ध-प्रत्यय का होता है, जैसे वस्तु-विज्ञान का आसम्बन्ध है ज्ञप्पायतन। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि ज्ञप्पायतन आसम्बन्ध प्रत्यय के रूप में वस्तु-विज्ञान और उसमें संयुक्त वमों का प्रत्यय है। इसी प्रकार हम धम्मयतन पन्थायतन रसायतन आदि को भी तत्त्वविज्ञानात्तु आसम्बन्ध-प्रत्यय के रूप में से कह सकते हैं।



इस अध्याय विरोध के लिए प्रस्ताव्य—पालि साहित्य का इतिहास,
भारतविह उपाध्याय, पृ० ३३४-४६४।

आठवाँ अध्याय

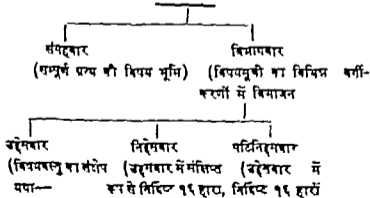
पिटक बाह्य पालि ग्रन्थ

३ अथ भारत विषयपर इतिहास प्रदेश तो ईसा की १४ वीं सदी तक घेरबासी रहा । वहाँ पालि में ग्रन्थ लिख जाते थे । पर उत्तर भारत में पालि सम्प्रदाय पाँचवीं-छठी सदी के बाद गही रहा जब कि वहाँ महायान का प्रभुत्व जम गया । वहाँ पर मालम्बा विक्रमगिरी तथा बोन्तपुरी आदि महायान के दुर्ग बन गये । उत्तर भारत की अंतिम हजियाँ हैं 'मत्ति-प्यठरण' 'पटकापदस' तथा 'मिमिन्दवप्पु' । अर्थात् परम्परा के अनुसार ये ग्रन्थ भी पिटक में सम्मिलित किये जाते हैं और इनका स्थान सुद्धक निम्न के अन्तर्गत है । नीचे इनका विवरण प्रस्तुत किया जाता है—

१ मत्तिप्यकरण

मत्ति का अर्थ है मत्ता या मार्ग प्रदर्शक । इस छोटे-से ग्रन्थ में बौद्ध धर्म को समझाने के लक्ष्यदर्शन का काम किया गया है । इसके विषय का विभाजन विद्वानों के निम्न प्रकार से किया है—

मत्तिप्यकरण



- १ १६ हार,
२ ५ नव
३ १८ मूमपह)

५ नवों तथा १८ मूमपहों ५ नवों तथा १८ मूमपहों की विस्तृत व्याख्याएं जो इन चार नवों में विमल्य हैं—

- १ हारविमल्ल
२ हारसम्पात
३ नमसमुद्दान
४ सासनपट्टान ।

नतिप्यकरण को महाकात्यायन की रचना बतलाया गया है । पर यह ठीक नहीं ज्ञात होता । वास्तव में इसका कर्ता कौल या यह ज्ञात ही है । यह बुद्धकालीन कृति नहीं हो सकती तथा इसकी रचना ईसवी सन् ५ प्रारम्भ के आस-पास की है, यही अभी तक विद्वानों की मान्य है । प्राकृत काव्यों में भी परिच्छदों के स्थान पर हार का प्रयोग होता रहा ।

९ पेटकोपवेश

परम्परा के अनुसार इन ग्रन्थ के रचयिता भी महाकात्यायन ही प्रथम ग्रन्थ हैं । नतिप्यकरण की नियमवस्तु ही यहाँ पर एक दूसरे तरह से विवक्षित है और बुद्धशामन के मूल उपादान चार आर्य-सत्यो की दृष्टि से ही नियम-वस्तु का व्याख्यान इन ग्रन्थ में है ।

३ मिलिन्धपच्छ

पंजाब से लेकर यमुना तक यचना (धीको) में ईसा पूर्व त्रितीय शताब्दी में रचय किया था । विमिति (१८६-१९० ई पू) भीर्य नाम्नाम्न्य के के नष्ट होन पर भारत-विजय के प्रयास में निकला था और पतञ्जलि के महामाष्य में हन स्पष्ट रूप से यह उल्लेख पाते हैं कि यकतो न साकेत की घर लिया था—जस्सद् यवन साकेतम् । विमिति का एक सेनापति मिता डर था । बाकिरया पर मघोतीतामिया के यवनराज अभिया के सनासति

उत्तरदि के आक्रमण की बात सुनकर विमिन्त्रि को बहूँ चौटना पड़ा पर वह अपने साम्राज्य तथा सेनापति मिनाम्बर को पंजाब में छोड़ गया । मिनाम्बर ने पंजाब में रहकर राज्य करना शुरू किया । उसने 'सागम' (स्यासकोट) को अपनी राजधानी बनाया । यही मिनाम्बर 'मिमिन्द' के नाम से प्रसिद्ध है । मिन्नु नागसेन का इस मिमिन्द से जो संघाप हुआ था वही इस मिमिन्द पम्ह' (मिमिन्दप्रस्त) नामक ग्रन्थ में संगृहीत है । मौखिक साहित्य के रूप में ग्रन्थों में पटना-बढ़ना सगा ही रहता है और यह ग्रन्थ भी इस प्रक्रिया में अछूता कैसे रह सकता था । पर इस ग्रन्थ का मूल उसी समय का है जब कि नागसेन था । साहित्य तथा दर्शन इन दोनों दृष्टियों से यह ग्रन्थ स्वबिरत्वात् बौद्धधर्म का एक बहुत ही गौरवपूर्ण ग्रन्थ है ।

मिनाम्बर स्वयं विद्या-म्यसनी पुरुष था । मिन्नु नागसेन की विद्वत्ता को सुनकर एक दिन उनके दर्शन के हेतु वह चला पड़ा । सागम नगर का क्या ही सुन्दर बभन इस ग्रन्थ में विद्यमान है—

सागम नगर का वर्णन

यशनों का माना पुत्रभद्र (वागिज्य-प्रबगाय का केन्द्र) सागम (स्यासकोट) नामक नगर है । यह नगर नदी और पर्वतों में घाबिन समशीय भूमिमागवामा आराम-उद्यान-उपवा-तडाग-मुष्करिणी में सम्पन्न नदी-पर्वत-वन में अत्यन्त समशीय दश बारीगर्ग द्वारा निर्मित धानु तथा अमिता ग रहित पीड़ा-रहित अन्न प्रदाय के विभिन्न वृक्ष अगरी तथा कानों में उन्नत अष्ट योगुग तथा तीरधों वाला गहरी पगिया और पीस धारा से पारे भीतरी फल वाला उन्नत आंगन और चौकह सभी में सम्पन्न रूप में विभवत अक्षी प्रसार में मनी हुई तथा वट्टमस्य सीमा में अक्षी हुई अक्षी बुजानावा विविध अष्ट दानघालाभा से गुणाभित द्विमानम पर्वत की ओटिया की तरफ मीबद्ध और श्यारा जैसे जैसे भवन वाला टापी छोड़ रूप और दर्शन अना में समागत मुन्दर नर-नारी-गर्गों का विश्वरूप-मपन मनुष्याकील धात्रिय आरुप वर्य गूत्र धमक प्रादय तथा गजाबायो में आक्षीय बड़-बड़ विद्वाना का केन्द्र वाली एवं काटम्बर

के बरतों की बुकानों से आच्छादित बहुविध पुष्पवर्ग की बन्धा से सुगन्धित बहुत से प्रसंसीय रत्नों से परिपूर्ण कार्पास्य रजत स्वर्ण कास्य तथा बहुमूल्य पत्थरों से परिपूर्ण बहुमूल्य रत्नों के बमकले बजाने की मूर्ति सभी प्रकार के बन-बान्य-उपकरण मन्थार से परिपूर्ण अनेक प्रकार के चाप भोज्य तथा पय पद्याओं से युक्त उत्तरकुक्ष के समान उपजाऊ तथा 'आच्छकन्त्या' देवपुर के समान सोमासम्पन्न वा ।

मिथिल्य की नागसेन से भेंट

तब राजा मिथिल्य पाँच सौ यक्षगो के साथ अण्डे रज पर उबार हो बड़ी मारौ सेना के साथ 'संश्लेष्य' परिवेण में जा बहाँ आयुष्मान् नागसेन से बहाँ गया । उस समय आयुष्मान् नागसेन बस्ती हजार मिथुओं के साथ सम्भोगमूह में बैठे थे । राजा मिथिल्य न आयुष्मान् नागसेन की परिपद् को देखा । दूर ही से देस देवमन्त्री से कहा—“देवमन्त्री इतनी बड़ी यह परिपद् किसकी है ?”

महाराज आयुष्मान् नागसेन की यह परिपद् है ।”

तब आयुष्मान् नागसेन की परिपद् को दूर ही से देस राजा मिथिल्य को मय होल मया उसके पात्र स्तम्भित हो मय और रोमाञ्च हो आया ।

नैडो से बिरे हाबी की तरह मकड़ा से बिरे साँप की तरह, बजगर से बिरे स्यार की तरह महिपो से बिरे भाजू की तरह साँप से पीछा किम पसे मकड़ की तरह सिंह स पीछा किम मय हरिण की तरह सपिरे के हाथों में आय साँप की तरह बिसली से जल खिलाने वाले हुए बूहे की तरह बोसा न बाँध गय मूठ की तरह राहु से प्रसिद्ध चन्द्रमा की तरह, पेटी में बन्द किम गय साँप की तरह, पित्रङ्ग में बन्द पत्नी की तरह, आम में पड़ी मसनी की तरह हिसक पनुओं से भरे अंगल में मटके मनुष्य की तरह ईशवस के प्रति अपराध किम मस की तरह तथा आयु समान्य हुए देवता की तरह राजा मिथिल्य मकड़ा बट, बिनित उदाव तथा तिर हो गया । मुसे यह कहीं ह्य न दे देसा घण्टि हो उसने देवमन्त्री से कहा—

“देवमन्त्री आप मुझे मत्त बतावें कि आयुष्मान् नागसेन कौन हैं । बिना बताये ही मैं उन्हें जान नूँचा ।”

नागसेन तथा मिलिन्ध के संभाषण का नमूना

“मन्ते नागसेन यदि कोई पुण्य मही है तो कौन आप को नीबर, भिक्षा दायनासन तथा स्नानप्रत्यय देता है ? कौन उसका उपभोग करता है ? कौन शील की रक्षा करता है ? कौन ध्यान-भावना का अभ्यास करता है ? कौन आर्य-मार्ग के फल निर्वाण का साक्षात्कार करता है ? कौन प्राचातिपात करता है ? कौन थोरी करता है यदि ऐसी बात है तो न पाप है और न पुण्य न पाप और पुण्य कर्मों का कोई कर्ता है न कोई करानेवाला है न कोई फल है । मन्ते नागसेन यदि कोई आप को मार भी डाल तो किन्ही का मारना मही हुमा । तब आपक कोई आचार्य मी मही हुए, कोई उपाध्याय मी मही हुए, आप को उपसम्पदा मी मही हुई ।

आप कहते हैं कि आपसे सब्झाचारी आप को नागसेन के नाम से पुकारते हैं तो यह ‘नागसेन’ क्या है ? मन्ते क्या य वेदा नागसेन है ?”

“महीं महाराज ।”

य रोयें नागसेन है ?”

महीं महाराज ।

“ये नम्य बात चमड़ा मांस स्नायु, हड्डी मज्जा बकर’ हृदय यङ्गु, बनोमक, निल्सी पृङ्कुम भाँत पतमी भाँत पट, पान्थाना रिक्त बक पीर माहू पसीना मेरु भाँनु, चर्बी मार नग सविदा विभाग भाँदि नागसेन है ?”

“महीं महाराज ।”

“तो क्या आपसे कन बन्ना संभा संस्कार तथा विज्ञान में मे कोई नागसेन है ?”

“महीं महाराज ।”

“मन्ते वा क्या कन वेदना संज्ञा संस्कार तथा विज्ञान सभी एक साथ नागसेन है ?”

“नहीं महाराज ।”

“तो भले क्या इन कथादि से भिन्न कोई नामसेन है ?”

“नहीं महाराज ।”

“भले मैं आप से पूछने-पूछने बंद गया किन्तु नामसेन क्या है, इसका पता नहीं लगता । तो नामसेन क्या केषम सम्मान है । आखिर नामसेन है कौन ? भले आप झूठ बोलते हैं कि नामसेन कोई नहीं है ।”

बामुष्मन् नामसेन न उद्यते एक-सम्बन्धी प्रश्न पूछकर ही उद्यकी इस सदा का समाधान किया—

“महाराज आप वैदिक बतकर यहाँ आप का किमी सचारी पर ?”

“भले मैं वैदिक नहीं प्रकृत रथ पर नहीं जाता ।”

‘महाराज यदि आप रथ पर जाय तो मुझ बगल कि जायका रथ है ? क्या बण्ड रथ है ?”

नहीं भले ।

‘ता क्या बण्ड बण्डक रथपर, रथ की रथिकाँ समाप्त बाबुठ आदि से से कोई एक रथ है ?”

“नहीं भले ।

“ता क्या य सब भिन्नपर रथ है ?”

“नहीं भले ।”

‘तो रथ क्या इन सबस परे है ?”

“नहीं भले ।”

महाराज मैं आप से पूछने-पूछने बंद गया किन्तु यह पता नहीं गया कि रथ कौन है ? क्या रथ केषम एक सम्मान है ? आखिर वह रथ क्या है ? महाराज आप झूठ बोलते हैं कि रथ है नहीं । महाराज सम्बन्धीय क आप उद्यते बण्ड रथ है तो भला विद्यते रथपर आप झूठ बोलते हैं ?

“भले नामसेन, मैं अवश्य नहीं बोलता । ईया इत्यादि रथ के अक्षरों का आधार पर केषम अक्षरों के लिए ‘रथ’ एका नाम कहा जाता है ।”

“महाशय बहुत ठीक आपने जान लिया कि रथ क्या है। इसी प्रकार मेरे केश आदि के आधार पर केवल व्यवहार के लिए ‘नागसेन’ ऐसा नाम कहा जाता है किन्तु परमार्थ में ‘नागसेन’ ऐसा कोई एक पुरुष विद्यमान नहीं है। मिथुनी बच्चा ने भगवान् के सामने कहा था—

“सबसे अक्षयों के आधार पर ‘रथ’ यह संज्ञा होती है उसी तरह स्वरूपों के हीन से एक ‘सत्त्व’ (=जीव) समझा जाता है।”

मदन्त नामसन द्वारा प्रस्तुत की गयी अनारमबा को यह व्याख्या बेजोड़ है।

बालु के अस्तित्व के सिमसित की व्यक्त करते हुए नागसेन ने कहा कि जो उत्पन्न होता है वह न वही होता है और न अन्य। इस उन्होंने उदाहरण देकर समझाया कि पुरुष जब बच्चा होता है और जब क्रमशः वह तदण तथा युवा हो जाता है तब इन सब अवस्थाओं में क्या वह एक ही होता है। यदि वह अग्र होगा तो उसके माता पिता आदि नहीं होंगे और यदि वही होगा तो उसके माता पिता आदि तथा व्यवहार आदि पर विलसितनेवाले बन्ध की ही मूर्ति होना चाहिए। अतः अपनी स्थायता—वह न वही न दूसरा है की व्याख्या उन्होंने शीघ्र के अग्रतः शक्ति की उपाय को उपस्थित करके किया।

भाग्य में रचित पाणि ग्रन्थ और भी हो सकते हैं, पर उत्तरी भारत का उपसर्ग अन्तिम ग्रन्थ ‘मिमिक्षु’ ही है। यह बड़ा ही महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है और अग्र में नागसेन के साथ हुए मिमिक्षु के अग्रतः मतार्थ का उद्घाटन है।

इस ग्रन्थ में पूर्वपाप मरण-ग्रन्थ विमिक्षु-ग्रन्थ मंगल-ग्रन्थ अनुमान ग्रन्थ तथा उपमा-ग्रन्थ आदि रत्न परिष्कार है।

द्वितीय खंड
सिंहल में पालि

पहला अध्याय

१ बुद्धघोष युग

बौद्ध धर्म की बुद्धता तथा मुरसा के लिए दूसरी संगीति के सवा सी वर्ष बाद तीसरी संगीति अगाध के समय में पटना में हुई । इसी के निर्णयानुसार अगाध के पुत्र स्वबिर महेंद्र ई० पू० तीसरी सदी में सिन्धु घाट और यह देश वापायपारी सिन्धुओं से आलोचित हो गया । पर पिटक की परम्परा अभी भी मौखिक ही थी और यह सूत्रधारों बिनयपरत तथा मातृकाधारों के हृदय में निहित था । ऐसी विनास सामग्री का हृदय जैसे कामल भंगुर पात्र में सुरक्षित रखना अत्यन्त कठिन है अतएव सिंहमराठ घट्टगामधि के समय (ई० पू० प्रथम शताब्दी) में त्रिपिटक को लिखित करने का निर्णय किया गया और इसके अनुसार 'आलोचन-विहार' में त्रिपिटक साक्षरता पर लिखा गया । उक्त समय उत्तर भारत में भी सामयिक पर मध्य निम्न आगे व पर बड़ी इस कार्य में सहाय्य की मध्यनी तथा म्याही का प्रयाग किया जाता था । दक्षिण भारत की प्रणामी इनमें कुछ भिन्न थी । वहाँ पर शासक के पद को मोहने की शक्ति से कुछकर उक्त पर म्याही को बुकनी शासक को जाती थी । सिंहम न इसी दक्षिणी देश को स्वीकार किया और आलोचन-विहार में भी यही प्रणामी अपनायी गयी जो हाम तक बनी चमती रही ।

गुरु बिनय तथा अभिवम की पढ़ाने समय आषाय परम्परा के अनुसार जो व्याख्या करत व वही लिखी अट्टकामों के रूप में प्रस्तुत हुई और इन्हें भी लिखित किया गया था । इसी सरी के प्रारम्भ हात ही सिंहम भरबाद का मद्र हो गया । वहाँ पर लिखित किये गये पिटक-ग्रन्थ बाहर भी प्रेष जाते थे पर लिखित-अट्टकपाए सिंहम श्रावण भाषा में थीं और भाषा ही उनमें से कुछ दक्षिण या उत्तर भारत में पहुँची हैं । उनकी भाषा

सिंहल-भाइत की वो तीसरी-चौथी सदी के सिंहल चितासकों में मिलती है। प्राइठ होने से यह बहुत कठिन नहीं थी। समयानुसार पीछे यह मीन होन लगी कि इन्हें यदि मागधी (पालि) में कर दिया जाय तो बड़ा लाभ हो क्योंकि इससे इनके प्रयोग का क्षेत्र विस्तृत हो जाता। इसी आशयकता की पूर्ति बुद्धबोध बुद्धदत्त तथा धर्मपाल आदि आचार्यों ने की। बुद्धबोध इसी सिंहली अट्टकपाओं का पालि स्वान्तर करन के लिए ही सिंहल गये थे। इस प्रकार से इन आचार्यों द्वारा रचित अट्टकपाओं के आचार-स्रोत में सिंहल-अट्टकपाएँ ही हैं। आचार्य बुद्धबोध ने अपनी विभिन्न अट्टकपाओं में इनका विवेचन भी किया है।

बुद्धबोध से पहले 'बीपबस' नामक सिंहल का इतिहास ग्रन्थ लिखा जा चुका था। 'सुद्धसिक्खा' तथा 'महासिक्खा' नामक ग्रन्थों के भी मिल जान की बात नहीं जाती है। इन दोनों का उल्लेख 'पीमत्रस्व' व 'मलविहार' के अभिलेख में प्राप्त होता है। 'सुद्धसिक्खा' के सङ्कट 'वम्मसिरी' नामक पर्वी (सिंहल) शब्द रहे गये हैं पर वास्तविक रूप में पालि साहित्य का पुनरात्मन आचार्य बुद्धबोध ही करत है। इनके सामकालिक अन्य अट्टक-पाकारो (बुद्धदत्त तथा धर्मपाल) आदि के सम्बन्ध में इसी शब्द के अन्तिम अक्षय में विचार प्रस्तुत किया जायगा। नीचे बुद्धबोध के सम्बन्ध में लिखा जा रहा है—

(१) बुद्धबोध - महाबोधि (बोधिवृक्ष) के समीप ही 'मोरड-सेटव' के ब्राह्मण कुल में इनका जन्म हुआ था। प्रारम्भ में य ब्राह्मण विन्य तथा पीला बर्ण में पारंगत हुए और रैबत स्वधिर के सम्पर्क में आकर उनके सिद्ध शिष्य हो गये। यह बात प्रसिद्ध बौद्ध चार्त्तिक ग्रन्थ तथा वसुधन्वु का था। मालन्दा अशोक के समय में सर्वास्तिवाधियों का स्थान था और महायान का अनुगामी होने हुए भी अन्तिम समय तक (तीरह्वी सदी) वहाँ पर सर्वास्तिवाधी विनय ही मान्य था अर्थात् यह अथा सर्वास्तिवाधी था। इस प्रकार संभवतः बुद्धबोध के समय में मगध में सर्वास्तिवाध का प्रचार था। परन्तु रैबत स्वधिर-वैसे बौध्वाधी भी वहाँ थे। उनके सम्पर्क

में आकर इन्होंने त्रिपिटक का अध्ययन किया तथा सर्वप्रथम 'आधोदय' नामक ग्रन्थ की रचना की। त्रिपिटक के अध्ययन की तीव्र जिज्ञासा का प्रमाण-स्वरूप ग्रन्थ 'अध्मसंघणि' पर इनके द्वारा रचित 'अट्टकसिनी' नामक अट्टक्या है। बाद में सम्पूर्ण त्रिपिटक पर इन्होंने एक संक्षिप्त अट्टक्या प्रस्तुत करने का विचार किया। पर इसके बारे में इनके गुह्य न यह कहा— "गुम्हारा यह प्रयास अपूरा ही है। यदि लिखना है तो सिहल जाओ। वहाँ के महाबिहार-निकाय में त्रिपिटक पर सिहली भाषा में अट्टक्याएँ हैं। उनको मागधी (पालि) में करो।" बुद्धभाष इसी उद्देश्य से सिहल पहुँचे। एसी प्रसिद्धि है कि समुद्र में जात समय नाव पर ही बुद्धदा से उनकी मुलाकात हुई। बुद्धबोध ने जब अपना उद्देश्य उन्हें बतलाया तो उन्होंने कानुकार देह हुए कहा— "मैं तो इसे पूर्ण करने की बबस्ता में नहीं हूँ पर अपनी इतियों को तुम मेरे पास भजना मैं उनका सरोप निखूँगा।" कहते हैं कि बिनय-अट्टक्या को लेकर इन्होंने 'बिनयविनिच्छय' नामक ग्रन्थ लिखा।

पर बुद्धबोध उत्तर भारत से सीधे सिहल नहीं आये। काशी आदि के बिहारी में उन्होंने वर्षावास किया था जिसका उन्मत्त अपनी अट्टक्याओं में उन्होंने किया है। ऐसा सम्भव है कि इबिड़ प्रदेग जैसे देरबाय के गढ़ में उन्हें जब अट्टक्या-सम्बन्धी पूरी सामग्री न मिली हो तभी इन्होंने सिहल का रास्ता लिया।

महा-महेन्द्र के समय से ही अनुराधपुर का 'महाबिहार' प्रख्यात था। वहाँ पहुँचन पर महाबिहारक भिक्षु जैसे-तैस के सामने अपने पुस्तकालय का द्वार पीड़ ही खोल सजते थे। अतः प्रारम्भ में इन्होंने बुद्धबोध की धारणा की परीक्षा करने के लिए निम्नलिखित प्रसिद्ध गाथा ध्यास्या के लिए प्रस्तुत की—

"अतो जटा बहि जटा जटाय जटिता पत्ता ।

तं तं गोतम पुच्छामि को इमं बिजटय जटं ॥

शील पतिव्रतय नरो सपञ्जी चित्तं पञ्चमञ्च भाषय ।

आशापी निपको मिक्कु सो इमं विवदये वटं ॥” ति ।

बुद्धबोध ने उत्तर-स्वरूप इस पर 'विमुद्दिमल' जैसे गम्भीर एवं विद्याल प्रथ की मिलाकर प्रस्तुत किया जिसमें बौद्ध-दर्शन के आधारभूत सिद्धान्त शील समाधि तथा प्रज्ञा की विस्तृत विवचना है ।

सिंहल बट्टकथाओं की जाया सिंहली की जो आज की सिंहली और हिन्दी जितना अन्तर नहीं रखती थी । यह एक प्राकृत की और सम्भवतः इण्डो प्रदेस में रहते हुए बुद्धबोध उससे परिचित हो चुक थे । अस्तु उस पाणि में अनुचित करना उतना ही सरल था जितना कि पाणि का संस्कृत में अनुवाद करना । इन प्राचीन सिंहल बट्टकथाओं का उल्लेख प्राप्त होता है । इनमें से मुत्तपिटक की बट्टकथा 'महाजट्टकथा' सारे निकायों पर थी और 'कुम्भी' एवं 'महापञ्चरि' कथा विनय तथा अग्निबम्मपिटक की बट्टकथाएँ थी । बुद्धबोध ने इनके अतिरिक्त 'कम्बजबट्टकथा' और 'सलेपबट्टकथा' से भी सहायता ली थी । बुद्धबोध का साहित्य विद्याल है—

(१) आशौरय

(२) विमुद्दिमल

(३) विनय-बट्टकथा — समन्तपासाधिका

(४) पाठिमोक्षण „ — कसाविठरणी

(५) दीवणिकाय „ — मुमञ्जकवितासिनी

(६) मञ्जिमनिकाय — पपञ्चसुदनी

(७) सयुत्तनिकाय „ — सात्थपकासिनी

(८) भट्टयुत्तनिकाय — मनोरथपुरणी

(९) लुरकनिकाय के

'बुद्धकथा' तथा

'मुत्तनिपाठ' की

बट्टकथा — परमत्त्वप्रतिष्ठा

(१०) जाणक-बट्टकथा — जाणकबट्टकथा (परमत्त्वप्रतिष्ठा)

- (११) बम्मसंगणि " - अट्टमासिमी
 (१२) विमङ्ग " - मम्मोहविनोदनी
 (१३) 'बम्मसंगणि तथा
 'विमङ्ग' को छोड़कर

सम्पूर्ण अमिषम्म की अट्टकथा - पञ्चप्यकरणट्टकथा

(१४) बम्मपद अट्टकथा - बम्मपदअट्टकथा

इसमें से 'आचोदय' अब प्राप्य नहीं है। अट्टकथाएं कई देशों से कई सिधियों में प्रकाशित हैं। वल्ले भागत में यह कार्य अब हाता है। 'विमुत्ति मम्म' का हिल्ली में अनुवाद भी हो चुका है। अट्टकथाएं अभी अनुविष्ट नहीं हैं केवल आतवअट्टकथा मात्र का अनुवाद ही पाया है।

'विमुत्तिमम्म' में अन्तो जटा बहि जटा' वाली भाषा का उत्तर प्रारम्भ में ही देकर वाप को उसकी ब्याख्या स्वरूप उपस्थित किया गया है। 'समस्त पामासिका' सम्मबत उनकी प्रथम रचना है। इस उन्होंने बुद्धधी स्पष्टिरी की प्रार्थना पर लिखा था। 'सुमङ्गमविसामिनी' संघ-स्पष्टिरी 'ठाठानाग' की प्रार्थना पर लिखी गयी थी।

(२) दीपवत्त (ग्रन्थ) — इसके सत्यक का नाम अज्ञात है। संघ के इतिहास मिलन का वापक यह पहला प्रयास है। आदिवान (विजय क आयमम) में राजा महामन (३२५-३५२ ई०) तक का इसमें सिहस का इतिहास है। इसमें यह ज्ञात होता है कि यह ग्रन्थ विनी के द्वारा चौपी गयी क मध्य में लिखा गया था। इसमें सभी प्राचीन परम्परारों सिहस अट्टकथामा से सी गयी है। 'दीपवत्त' की भाषा उगरी-मंजी नहीं है जितनी कि 'महावत्त' की। 'महावत्त' में सिधुणिया का उल्लेख नहीं है पर 'दीपवत्त' में उन्हें विगत महत्त्व दिया गया है। चौपी या पाँचवी मदी में ही सिहस की सिधुणी 'देवमार' न चीन में जाकर सिधुणी-मध स्थापित किया, या वहाँ अब भी अर्चित है पर सिहस में दमवी मदी में वह उच्छिन्न हो गया। 'दीपवत्त' की वर्णन-सीसी इन प्रकार है—

(संका) द्वीप में कुछ उनकी शरीर बालुएँ तथा मोचि एवं संघ और बाचार्यवार के सहित शासन (बीड धर्म) का आपमन तथा मोन्त्र (विजय) के आपमन आदि की परम्परा का मैं वर्णन करूँगा मुझे—

प्रीति तथा प्रमोदोत्पादक मनोरम तथा अनेक आकार से सम्पन्न इस बुत्तान्त को दत्तचित्त होकर सोने मुने ।

—परिच्छेद १

दूरदर्शी 'मोमनिपुता' ने दिग्ब दृष्टि से सीमास्त देशों में भविष्य में बीड धर्म की प्रतिष्ठा देखकर 'मग्गन्तिम' आदि स्वधिरा को चार दिग्ब साधियों के साथ पड़ोसी देशों में शासन की प्रतिष्ठा तथा मानवों को आशोकित करण के लिए भेजा ।

—परिच्छेद, ८

मोन्त्र की प्रार्थना पर महापत्नी महन्त्र स्वधिर न उपयुक्त उद्यान महाभेषजन में प्रवेश किया । सोने के बड़े-बड़े को लेकर महीपति न यह कहकर हुए उध उद्यान को संघ को दान कर दिया—मैं महाभेषजन नामक इस उद्यान का चारों दिशाओं के लक्ष को दान में देता हूँ ।

—परिच्छेद, ११

संका द्वीप का परिचय

दत्तिल बोधन संका और अद्वारह योजन चौड़ा तथा छौ योजन की पश्चिम भागा (यह संका द्वीप) सागर से बिरा है ।

यह एक संका द्वीप नर्वच रत्नों की लाग है तथा नदी सर, पर्वत और वनों से युक्त है ।

—परिच्छेद १७

संका में भिक्षुधियाँ

यसस्वी नरसेव जनय की प्रार्थना पर प्रख्यात अनुपचपुर में भिक्षुधियों ने विजय का पाठ किया । तथा पाँच निकाय एवं सात अविधर्म के प्रकरणों का भी पाठ किया ।”

—परिच्छेद १८

त्रिपिटक लिपिवद्ध करना

इस प्रकार राजा 'बट्टमामणि धम्मय' ने बारह बय तथा आदि से पाँच मास तक राज्य किया ।

पूर्वकाल में महामति भिक्षु तीनों विष्णुओं की पालि (युग पद्धित) और उनकी अट्टकपापुं जिन्हें वे मुक्त-वरम्परा द्वारा (संकाश्रीप में) लाय थे

उन्हें प्राणियों को (स्मृति) हानि को दलकर, एकत्रित हो, मिश्रजा ने बर्म को बिरस्विति के लिए पुस्तकों के रूप में लिपिवद्ध किया ।

—परिच्छेद २०

(३) महात्तम—प्राचीन सदी में इस कवि-इतिहासकार ने 'महात्तम' नामक ग्रन्थ की लिखा । सिंहल के इस इतिहास ग्रन्थ की तुलना में आज काल बहुत कम तत्कालीन ग्रन्थ मिलेंगे । इसमें महात्तम के घामन-काल (३२५-३५२ ई०) तक का इतिहास विभा हुआ है । आग बमकर अन्य विद्वानों को यह प्रश्न इतना पसन्द आया कि इसके अगल भागों को भी उन्होंने इसी नाम से लिखा । बमकीति न पराक्रमबाहु के घामन-काल (१२४०-१२७५ ई०) में इसे परिवर्द्धित करके अपने समय तक पहुँचाया । बीच में किमी और ने इसमें परिवर्द्धन किया और 'तिम्बोवुवाब मुमङ्गस' न इसे १७५८ ई० तक तथा 'हिक्कबुवे मुङ्गस' ने अंशों के घामनारम्भ (१८१३ ई०) तक इसे पहुँचाया ।

महात्तम की टीकी को घोषित करणबाले निम्न उदाहरण प्रस्तुत है—

ग्रन्थ का सत्य

"प्राचीन विद्वानों ने नहीं अति विस्तारपूर्वक नहीं अति सतिष्ठ तथा (वहीं) अनेक पुनरुक्तियों के साथ इसकी रचना की थी ।

उन बोधा से बजित ग्रहण तथा धारण कर्म में महत्व प्रसार तथा संशय उत्पन्न करण बाने (महात्तम का) उस मुने ।"

—परिच्छेद १

१ अधिक उदाहरणों के लिए बेरी 'पालि काव्यपाठ' देखें ।

कुबेरी का त्याग

उठठ युद्धरथी ठरुव विजय अपने पाँच सौ सारियों के साथ निर्वासित हो ईसा पूर्व पाँचवीं सदी में भ्रमका पहुँचा। उस समय कोल-संबाल की जाति के ब्रह्म लोग संका के निवासी थे। उनके सरदार की सड़की कुबेरी विजय के प्रेमपाश में बँधी। उसने अपने लोगों की पराजय करायी। पर अविपति होने पर विजय ने सम्य तथा सुसंस्कृत जाति की पुत्री को प्राप्त करने के लिए कुबेरी को छोड़ दिया। इसे कवि-इतिहासकार ने निम्न शब्दों में व्यक्त किया है—

(प्रथम निमत में)

“कुबेरी राजपुत्र के पास सर्वाभरण से मूर्च्छित होकर यही और वृक्ष के नीचे उसने महार्थ सम्पादन किया।

तब विजय प्रमुख आदि (विजय को प्रमुख बनाकर उनके अनुयायी आदि) नाम से मूमि पर उतर कर, बके हुए होकर बरती को हाथ से पकड़ कर बैठे।

विजय उस (कुबेरी) के गाप सहास करके मुखपूर्वक शय्या पर सोया और कनाठ ठानकर सारे मृत्यु भी पड़ गये।

यत को पात्र के सख्त तथा पीठ के रथ को सुनकर साथ में सोयी हुई यक्षिणी से विजय ने पूछा—‘यह क्या शब्द है?’

कुबेरी ने उत्तर दिया—‘सारे यक्षों को मरवाकर सम्य स्वामी को देना है। मनुष्य के साथ बात करने के कारण यक्ष मुझे मार बालम।

वहाँ बिबाह का मंगल महोत्सव है वही यह शब्द है यह बड़ा सामान्य है। आज ही यक्षों को मार डालो फिर यह नहीं कर सकोगे।

पाँच्य राजकुमारी जब विजय के पास गयी बुलहिन बनकर आयी तो उसने कुबेरी से कहा—‘जब तुम दोनों बच्चा को छोड़कर आओ। मनुष्य अमनुष्य से सब भय खाते हैं।

यक्षिणी ने कहा—‘मठ चिन्ता करो—एक सहाय शूद्रक से मैं तुम्हारी बलि पूर्ण करूँगी।

बार-बार प्रार्थना कर (हताग हो) दोनों बच्चों को लेकर वह संका पुर गयी ।

बच्चों को बाहर बैठाकर वह नगर में चुसी । उस यक्षिणी को पहचानकर तथा उसे जामुन समझकर यल क्षुब्ध हो गय (और जगमें से) एक साहसी न यक्षिणी को एक ही क्षण में मार गिराया ।

कुबेरी का मामा नगर से बाहर निकला । बच्चा को देखकर उसन पूछा—‘तुम किसका बच्चे हा ? ‘कुबेरी न’ यह सुनकर कहा—‘तुम्हारी माँ यहाँ पर मार ही गयी तुम्हें भी खतर मार डालेग (मत) पीछ ही भाग लो ।’

दूसरा अध्याय

२ अनुराधपुरमुग

अनुराधपुर सिंहल की प्रथम राजधानी रहा । यही पर अशोकमुनि महेश्वर ने तीसरी सदी ई० पू० में आकर 'महाविहार' की प्रतिष्ठा की । यद्यपि इन्दिइ देश तथा इसके बीच में समुद्र स्थित था पर बीच बीच का यह सिन्धुना समुद्र इन्दिइ को नहीं रोक सका । जब द्वीप जाम्बी पड़ा था तो य वहाँ बसने नहीं आय । पर बाद में इनका ध्यान इस ओर गया जब गुजरात के विजय और उसके साथी वहाँ पहुँच गये और मगध आदि से भी हजारों परिवार वहाँ पर आकर बस गये । इस प्रकार इन्दिइ परिवार की मापामा से बिकी रहन पर भी सिंहल की माया बार्ध परिवार की ही है ।

इसमें भी विभिन्न बात यह है कि इसका उत्तर भारत की जिस बोली से अधिक साम्य है वह भोजपुरी है । भोजपुरी को इसके बोलनबोलने समीपकी सही में बर्ना मनाया किन्ती तथा द्वितीयशत आदि में अपन साथ ल गय । सम्भवत इस प्रदेश के लोग ईसा के पूर्व शताब्दियों में भी सिंहल में आते रहे हों । जैसे भोजपुर, बंगाल तथा गुजरात आदि स्वयम् के लोग वहाँ आ बसे ।

इनके सिंहल में आ जान पर तथा बस जान पर ही इन्दिइ का ध्यान इतर बसा और ये लोग लड़कानी करन लल । बहुसंख्य ईसा पूर्व द्वितीय शताब्दी से ही प्रारम्भ हुआ । यद्यपि अनुराधपुर समुद्र-तट से दूर था पर थोड़ा तथा पार्श्वों न आकर यहाँ की अपनी ध्वंसनीयता दिखायी ।

इस युग में बंग तथा बट्टनका साहित्य के निर्माण के साथ कुछ कथा साहित्य की भी रचना हुई । इनका संक्षिप्त परिचय यह है —

(१) जनागनबंश—यह ग्रन्थ इसी कोटि में आता है और इसमें

भाषी बुद्ध मंत्रय का वर्धन है । इनके कर्ता अज्ञात ही हैं । इसमें अनुराधपुर का भी वर्णन चित्रित है—

प्रमाण—“विचित्र रत्नों की भूमि अनेक चित्रों में रम्य सुगन्ध पृष्ठी की माता के समान नृत्य-गीत से अभिराम सुन्दर युवतियों से पूर्ण अनेक प्रकार की गोमा से आकीर्ण रत्नमय विमान (देव प्रासाद) की ही भाँति उनका निवास-स्थान था ।

वहाँ की किरण-किरणियाँ मनोरमा की मायत तथा अमनाएँ भी मनारम थीं, नृत्य तथा गीत आदि भी मनारम से और अनेक मनारम प्रसंगा का वहाँ पर प्रवर्तन था ।

(२) धम्मनन्दी—अनुराधपुर काम में ही धम्मनन्दी हुए, जिन्होंने ‘सिंहमवत्पुत्र्या’ नामक पुस्तक लिखी । इनमें प्रस्तुत की गयी कथाएँ सुन्दर हैं तथा दीप्ति भी प्रमाण गुण से युक्त है—

“एना मुना जाता है—सुकन्द जनों से समृद्ध सम्पूर्ण शस्य-सम्पत्ति से नित्य युक्त सुन्दर मिश्रणों से बहुल जनपदों में माता के समान मौराष्ट्र जनपद में अभिमन्त्रित नामक पद था । उस पर्वत की एक गुफा में छह अभिजातों का प्राण क्रिय महा अद्विबान एक अर्हन् रहने से । वृमरा एक मन्त्रराज भी उसी पर्वत के आश्रय से रहता था । उसे हयवर किमी जनवर ने उज्जैन के राजा से कह दिया—‘देव इस प्रकार के कणों से युक्त महाराज के योग्य हाथी अरुण्य में हैं’ । राजा ने मुनिक ही उस हाथी को पकड़वा लिया । स्वविर राजा के पास हाथी को छोड़वाने के लिए उज्जैन आय । राजा ने उनकी याचना पर हाथी को छोड़ दिया ।

तीसरा अध्याय

३. पोलसदय युग

इबिड़ों के आक्रमण के कारण सिन्ध की राजधानी इस समय बेल के सबसे महत्त्वपूर्ण तथा सांस्कृतिक केन्द्र अनुराधपुर से हटाकर पहाड़ में दूर 'पोलसदय' में लायी गयी। पोलसदय अनुराधपुर की ही भाँति बड़ा था तथा विद्यालय इमारतों से आकीर्ण था। सिन्ध के इतिहास का स्वर्णिम युग यही पर व्यतीत हुआ। इसी काम में पालि साहित्य को भी अभिवृद्धि हुई और उत्तम ग्रीका शिल्प तथा ध्वाकरणपरक शिल्पो का निर्माण इसी समय में हुआ। सिन्ध के राजा महापराक्रमबाहु ने भी इसे सुसोमिष्ठ किया जिसकी नीचाहिनी इबिड़ बेल के जोड़ा तथा पाँद्यों के भास्य का फँसला करती थी। पूरब में उसकी भाक बर्मा तथा सुमात्रा तक थी। उत्तम योनातायक तथा शासक होने के साथ ही वह बहुत बड़ा विद्याभ्यसनी था और अपने अनुरूप ही उसे 'सारिपुत्त' संघराज-जैसे गुरु भी मिले थे जिनके चारों ओर उस समय के प्रख्यात पंडितों की महली बिसमाज थी।

(१) सारिपुत्त—अट्टकबाण बन चुकी थी। उन पर टीका प्रस्तुत करने का कार्य सारिपुत्त ने किया। एसी प्रसिद्धि है कि उन्होंने सभी अट्टकबाणों पर टीकाएँ लिखी परन्तु अब सब नहीं मिलती। सब की एकता

बहुनामनि के बाद में उन संघिकों के आराध को बौद्ध स्तूप में परिवर्तित कर दिया जो उनकी स्मारक पर प्रस्तुत हुए थे। वहाँ पर 'अमयगिरि' के नाम से बुद्ध का महासंन्य बना। इस अमयगिरि में महाविहार की परम्परा को ठाँढ़ने का प्रयत्न किया और फूट महापराक्रमबाहु के समय तक चली आयी। इन प्रकार यह साह्य बाह्य ही बरों तक चलती रही और अन्त में 'सारिपुत्त' के गुरु 'बम्मर' के समय में ही इनकी ठोड़न में सम्पत्ता मिली। इसका शेष

इन्हीं 'सारिपुत' को देना चाहिए । पर इसके बोड़े ही दिन बाद प्रविष्ट देश के बरबादी आचार्य 'कस्सप जोळिय' न इनकी एक टीका पर आक्षेप किया कि इसमें भ्रममगिरिकों क मतानुसार कोई बात मिली मयी है । सारिपुत के गुरु कस्सप बड़े ही शील-सम्पन्न तथा त्यागी पुरुष थे । इनके सम्बन्ध में 'ममन्तपामानिका' की टीका में इन्होंने यह उद्गार ध्वस्त किया है—

“सिंहसननेन्द्र पराक्रमवाहु न जिनको सहायता मकर सम्प्रणया क मद को मिटा कर घम का संगमन किया जो ताम्रपर्णी द्वीप में घम के उदय को करन बात है जो धर्मरूपी आकाश में चन्द्रमण्डल क समान है जो प्रतिपति क आवीन है तथा मदा हो अरभ्यवामी है जो सध क पिता है तथा बिनपपिटक में मुक्तिमारण है बिनक आपस में छूठ हुए मुक्त धर्म-सम्बन्धी बुद्धि की प्राप्ति हुई ऐसे महास्वविर वास्यप की न बन्दना कग्या है ।

सारिपुत' के नाम में अबुना जा मट्टकषात्रा की टीकाएँ प्राप्त हैं उन सबके मतानुसार न मही हो सजने और बन्तुत उन्हें उनके शिष्य' न मिला होगा और तत्पश्चात् मुह न उनका दण्डमोक्षन कर मिया होगा । ये मन्त्रुत क भी पण्डित न और प्रमाणयाम्त्र का पण्डित हान न कारण विद्वानाग तथा धर्मकौति क प्रश्नों से भी परिचित होंगे । पाण्डु व्याकरण का उम ममय मिहम में भी प्रचार था और इनकी व्याख्या में भी 'सारिपुत न अना यागदान मिया तथा इस पर मिली गयी 'रतमतिपट्टि-रवा' की 'पट्टि-रवा संवा' नामक टीका प्रस्तुत की । मन्त्रा ऋषि नाममात्र ही दाय है । 'पदा बतार' क नाम में एक संस्कृत व्याकरण का मलिप्त ग्रन्थ भी इनके द्वारा मिया गया था । बिनय पर दूम्बा प्रमिष्ट ग्रन्थ 'पाणिमुत्तरबिनयबिनिष्पद्य' है । मन्त्रांश में इसे 'बिनयबिनिष्पद्य' कहा गया है ।

'सारिपुत' क शिष्य 'मुमयन महामामी' न अपन गुरु क सम्बन्ध में 'बिभाबिनी टीरा' क रूप में मिया है—

गन्धद्रोण दम-मपम द्वारा मन्त्रापित्त गुणाकर एवं त्रिभेन्दिप मितुत्रां क ममूह द्वारा मन्त्रानित्त बुद्ध क बचना क पण्डित तथा अनर

सीताबती का विजयबाहु से प्याह हुआ। उत्तर राज्य के राजा सिंहल राजाओं का यही अन्तिम सम्बन्ध था।

उस समय सिंहल देश में मिश्र-संघ भी उन्निद्धम-सा ही गया था। इसलिए विजयबाहु न बर्मा के राजा अनुरोध से इस सम्बन्ध में सहायता माँगी। वहाँ पर बर्मा के मिश्र-संघ की सहायता से संघ की प्रतिष्ठा हुई तथा शिविपट्टक के पठन-याजन का प्रारम्भ हुआ। पत्नों के बारे में भी बर्मा से सहायता प्राप्त हुई। इस प्रकार विजयबाहु न जिस प्रकार से चोळा के रंजुन से मुक्त कराकर सिंहल को स्वतन्त्र किया उसी प्रकार से मिश्र-संघ की भी पुनः प्रतिष्ठा उनके हाथ हुई। चोळ-प्राधिपत्य के समय अनुभूत अत्याचार की तीव्रता के कारण सिंहल में तीन बौद्ध निकाया (महाविहारीय वमपरिहिक तथा जसपनीय) में आपस में जो कटुता थी तथा जो मतमवादि के उनकी उग्रता में ज्ञान हुआ और इनके सारिपुत्त सत्तरास को इन तीनों में एकता स्थापित कराने में प्रचुर सहायता की। चोळ-शासनकाल में उस देश से ब्राह्मण तथा बौद्ध पंडित निरूपण में अत्य और इससे वहाँ पर संस्कृत भाषा के अध्ययन का प्रोत्साहन मिला। बौद्ध धर्म की स्थिति उस समय चोळ देश में भी थी और इससे विद्या के क्षेत्र में भी काफी आदान-प्रदान हुआ। चोळ राजा समवत बौद्ध धर्म के प्रति सहानुभूति भी प्रदर्शित करते थे। सिंहल तथा चोळ देश दोनों स्वाना में एक ही स्थितिवाद प्रचलित था और चोळ राजाओं की सहानुभूति न सिंहल के अत्याचार को कम करने में भी सहायता थी हीमी।

(२) भोग्गस्तान (व्याकरणकार)—बन्धामन व्याकरण पहले से ही मौजूब था। परम्परा बुद्धधर्म के समय में भी इसे विद्यमान जानती है। प्राचीनक व्याकरण होने के कारण उसमें व्याकरण के विरुद्ध ही नियम छूट पड़े थे। इमर संस्कृत व्याकरण का और उसमें भी जब चात्र व्याकरण का प्रकार बढ़ा तो उसके हाथ पर पालि के एक पुर्य व्याकरण के निर्माण की आवश्यकता हुई और इसकी पूर्ति भोग्गस्तान न अपन इस व्याकरण को निरूपण की जिसमें मूख वृत्ति तथा उच्चारिवाठ आदि है। इसमें

८१७ मूत्र हैं साव ही मसक द्वारा इस पर 'पञ्चिका' भी प्रस्तुत की गयी है। व्याकरण के अन्त में उन्होंने लिखा है—

“त्रिम राजा क प्रभाव स कुटुम्बिवाय बुरे सिद्धुक्ष' द्वारा मक्षया विद्वान् क्रिया मया मुनिराज का धम डीरु स मूत्र हाकर पूष चन्द्र क मयोम से मनुष्य को नीति बड़ रखा है उन पदा बडि-मुण-ममन्विग मनुष्य-पञ्च स्वस्त पराक्रमबाहु क मरा द्वीप में नामन करन समय भुविनीम पीमान् स्पेवर 'मोगल्लान' म त्रिम प्रय का मुसय अमोदय तथा स्पष्ट बनाया।”

(७) भोगल्लान (कागकार)—अभिवात'पदीपिका' कोम प्रन्थ के रक्षिना तथा व्याकरणकार य दातां भोगल्लान वाय' एक ही हा पर दसमें जो मग्नेह किया जाता है। यद्यपि उनको कृतिवों में एसा कई मकेन नहीं है। अतः इस कोम में उहात कहा है—

“मरा में गुणभूषण त्रिभुवी विजयो पराक्रम में सिद्ध क ममान पराक्रमबाहु नामक मूपाण ह। उन्होंने चिरबाण स तीन निराया में बेट हुए सिद्धु-नय को मन्वक रूप स एक में करके सारार कीति को नीति मय में मरा भातरवान् हो उनक लिए महाय (भोजन आदि) प्रणय विष त्रिमके सर्वशायप्र अमावाग्य अनुबह को पाकर मत भी विद्वाना क गाकर पन्धार पर को प्राप्त किया उहों क द्वारा बनबाय हुए प्रामाद वापर आदि में विमुरित जनवन मामक विहार में रण समय गालि स्वभाव पीमान् एत्र मज्जर्म को बिरीस्पति की नाममावाम स्वधिर 'मोगल्लान म इग 'अभिवात'पदीपिका का रचा।”

(४) धम्मकित्त—य 'साणिण' मभराज क पाप्य गिय्य थ। वाला का नमस्कार करने हुए क कथन है—

विचारद बाद के पय में दूरवनी तीनां नाक क प्रचाड-स्वल्प अगिन जपायय्य को ज्ञानवाय तथा जमहा का महन करलवाय अनन्त गोबर वाला का मैं नमस्कार करना हूँ।”

अतः बाप्य प्रय 'बागर्धम' में उन्होंने दलपानु का इतिहास दिया है। बड़ की यत्र पानु बनिग में पुरी जानी थी। राजा की अनुमति स

उसकी पुत्री तथा वामदेव इसे सिंहल ले जाये वहाँ आज भी 'कैली' में बह
 है। 'बम्मकिरि' म पराक्रमशीला रानी लीलावती के शासनकाल में इस
 ग्रन्थ की रचना की थी। 'पोलग्रन्थ' में संसृष्ट का बिलगा प्रभाव विद्वानों
 पर पड़ा था उसकी छाप 'बालाबंस' में होनी ही चाहिए। पराक्रमबाहु
 के पदवात् राजा बनानेवाले जो अमात्य हुए, उनमें सेनापति पराक्रम भी
 था जिसकी प्रशंसा करते हुए 'बम्मकिरि' कहते हैं—

“काञ्चनभगरबंस के विमूषण त्रिनशासन तथा बलवा की समृद्धि
 बाहुनबाजे पराक्रम सेनापति है जिन्होंने बुद्ध धर्म में श्रद्धावासी लीलावती
 को बड़ा रंघ की राजलक्ष्मी बनाया।

पल्लवातु को सिंहल में सातवासी कुमारी हेममाता का बर्णन इस
 प्रकार से उन्होंने किया है—“राजा 'गुहसीब' मुनीन्द्र बुद्ध की उस धातु को
 अपने नगर में ल आकर, अच्छी तरह सम्मान करते हुए तथा प्राणियों को
 मुक्ति ममन के मार्ग पर मोक्षित करते हुए, सुमुख का संबन्ध करते हुए बिहार
 करता था।

उसकी (उस 'गुहसीब' राजा की) विकथित कर्म के समान अलिं-
 वामी हंसकान्तामाग्निनी (अपन) मुक्त की आमा से शरीर का भी विजित
 करनेवासी हार के भार से लड़ी हुई तथा कुर्बों के भार से अवनताङ्गी
 हेममाता नामक कन्या थी।

सम्पूर्ण कुर्बों के निधान ब-बुल के अनुपम तथा सुन्दर विमल
 कुल म उत्पन्न उस कुमार को जानकर राजा 'गुहसीब' म उसे (उस राजपुत्र
 की) सम्मान के साथ अपनी कन्या दे दी।”

इसके पदवात् इस बन्तवातु की समुद्र-यात्रा का बर्णन विमल प्रकार
 से है—

“कुमुद मय के चूर्ण से आकीर्ण करों द्वारा निम्न ही कौतुकवत् ईद-
 ताओं द्वारा अनुपमन कराने हुए, मार्ग में दुग्ध पहल पहाड़ का पार हीकर
 पीरे-पीरे से ताम्रनिष्ठ के बन्दरगाह पर पहुँचे।

मिहम जानेवाने जहाज पर अपन काम से जानबाल बणिजों को उन्होंने देखा और तब ब मिहम जात के इच्छुक द्विजप्रवर दीन ही जाकर नाबिक से बोन तथा उनके मृति-मुन्द-बचन एवं मायु आचार से प्रमुदित हृदय हो उन्होंने उन्हें जहाज पर बैठा लिया ।

बागु मेकर समुद्र पर आरुद्र हान म (बही के) पवन तरंग की माया धाम्य ही मयो । मुपन्धि-मुक्त तबा मनोज उतर-दिगाबामो (उतररहिषा) बायु बहन मयो तबा दिगाए भी मबवा बिमम एव रुचिर गोमाबाली हुई ।

बहु जहाज पवन से प्रकल्पित ध्वज तथा उष्ण तरंग ही पवित्र तथा मयाबमि को खोरला हुआ स्पष्टिर ही उम निधि में एवाएक मयापट्टन में उलग ।

पागु का उतर बिहार में ल जाकर प्रतिवर्य एमी पूजा करत ब लिए कोर्गि भी मेघ नामक उष्ट सत्यप्रतिम राजा म पूजाचार का मन्त्र मिलवाया ।”

शाशबंम के अन्त में प्रत्यकार न करना परिचय देने हुए लिखा है—

“जिजने चत्रगाभिन् रुचिन मष्टगाम्भ तथा उनकी पञ्चिपता की प्रगम्य टीका रचो तथा बिनयट्टक्या ‘ममलपामादिता’ की बुद्धिप्रभावे-राविफा टीका की रचना की ।

धन्व अद्भुत्तर भागम (निवाप) की अट्टक्या ‘मम्पोहविनादिनी’ के भ्रम को नष्ट करत ब लिए, जिजने उमकी टीका का निमाण किया तथा योग में सम मयमी जना के हितार्थ ‘बिनयनद्गह’ नामक ग्रन्थ की रचा ।

उम योग्य इन्द्रिय प्रतिपत्ति-वरायण ताउम श्रुति में निग्न और ममापिस्म अस्तेषु आदि गुणों से विमूर्धित मम्बुद्ध के सामन ब महान् उन्नति के कारण

ममी (गास्त्री) में परम आचार्य पद को प्राप्त गास्त्री में तथा दूमरे बारी में कौबिर महास्वामी ‘शात्पुत्त’ क गिप्य तथा उनके बिमम बंम में उलग

गुण बंधवान बरगादि गुणों के उदय म युक्त तर्क तथा आगम

आदि में निपुण विचारक सर्वत्र प्रसारित चन्द्र-किरणनाम के समान अपनी कौटिलि प्रसारित करनवाले एवं परीक्षक

अस्मिन् अष्टावक्रनामके तथा नाम से 'बम्मकिति' राजगुरु ने भोजाओं में प्रसन्नता उत्पन्न करनवाले सर्वदली के प्रभाव के दीपस्वरूप 'बुद्ध-वन्तवानु वंस' (इस इतिहास) की रचना की।

'महावंस' के द्वितीय भाग की लिखने वाले सम्भवतः यही 'बम्मकिति' हैं। इस ग्रन्थ को मूल बसठ न सतीसवा परिच्छद तक लिखा था और ये उसे भाष्य बढ़ाकर अम्बुद्रोषि (अम्बुदेविय) कास तक ले जाये ?

(५) बड़े छोटे वाचिस्तर—बड़े वाचिस्तर 'सम्भवतः सारिपुत्र के समकालीन ब्रह्मा उनसे भी कुछ बढ़ प। उनकी रचनाएँ हैं—'बम्मप्य करनटीका' 'उत्तराभिनिच्छन्न विनयभिनिच्छन्न' 'स्वास्वभिभाग' आदि।

छोट वाचिस्तर 'सारिपुत्र' के शिष्य थे। इनकी कृति 'बुधवंस' है। यह 'महाबोधिवंस' के समान ही है। इसमें बुधवानु पर बन सिंहस के 'रत्नमास्य' आदि स्तूपा का वर्णन है।

(६) जेयकूर ज्जुम्बरविरि—यह 'सारिपुत्र' तथा र्बयाकरण 'मोग्यस्मान' दोनों के शिष्य थे। इन्होंने 'विमयत्पसमुच्चय' नामक ग्रन्थ लिखा है।

धीरे-धीरे 'पोलप्रबन्ध' न भी सस्वरित और सम्मान आदि में अनुरत्तपुर का ही स्थान ग्रहण कर लिया। मिहिर राजवत्ता का सम्बन्ध उस समय कस्मिन् के इलाके से हो गया था। और यह क्यास किया जाता था कि विजय और उसके साथी कस्मिन् के थे। बम्भुत विजय न ती बर्जिग का था न बगास का। यह उनके साथ हुए मार्ग से ही व्यक्त होता है। यह नाम पर महकण्ड (मङ्गोल) तथा मुष्याय होने हुए साम्प्रदर्भी पहुँचा। इस प्रकार यही व्यक्त होता है कि वह साट (मुजयत) देश का था। पराक्रम के शीघ्र उत्तराधिकारी कस्मिन् राजकुमार थे। उन्होंने अपने शिष्याओं में इस पर बहुत जोर दिया है कि मिहिर सिंहासन का उत्तराधिकारी कस्मिन्वर्षी राजकुमार ही हो सकता है।

पराक्रम के पश्चात् उनके उत्तराधिकारियों में इतनी शक्ति न रही कि वे राज्य का संभाल सकें साथ ही आपसी पक्षधरों से इनमें से कोई भी अधिक दिन तक टिक न सका। इन सब जनजीरियों से फलश्रुति उठाकर मनभार शोगा ने जो बराबर ही ऐसे अबसरा को ठाक में व सिंहल पर आक्रमण कर लिया। उनका सेनापति माध था। उन्हें विजय मिस्री और माध राजा हुआ। उसका शासन बहुत ही कठोर एवं नृसंस रहा। उसके आक्रमण तथा शासनादि के सम्बन्ध में 'महावंश' में उल्लेख है—

“सका-राज महावंश को निपीड़न में शबानम के समान उसने बहु संख्यक योद्धाओं को इस कार्य में लगाया। उनके बीर महाभावा उल्लास करत हुए कहते थे कि हम केरल योद्धा हैं।

उसने मनुष्यों को मारी सम्पत्ति को छीन लिया तथा शिरवास से उचित कुत्ताचार को तोड़ दिया। उसने बहुत-से मन्दिरों को तोड़ा मनुष्यों के हाव पैर काटे तथा गाय भैरव आदि को अपने हाथ में कर लिया।

महावंशी सोंकों को बाँधकर उनका बंध करके उनके सारे धन को हर कर उन्हें बरिष्ठ बना दिया।

उसने प्रतिमान-गृहों को तोड़ दिया बहुत-से स्तूपों को ध्वस्त कर दिया तथा बिहारों में घूमते बहुत से उपामकां को मार डाला न

य मोग बन्धों को बाँधकर लोनों एवं सन्तों को पीटन व तथा धनिकों के धन को उन्हीं हर लिया। वे सब बरिष्ठ हो गये।

प्रसिद्ध तथा बहुमुख्य पुस्तकें को भी रस्मी श्लोककर उन्होंने बर्हा-तर्ही क्षिप्रता दिया।

उन्हीं के यक्षानु पूर्व राजाओं द्वारा निर्मित 'रत्नमास्य' आदि शैल्या को गिराकर ध्वस्त किया और उनमें रस्मी हुई शरीर धानुओं को भी भ्रष्ट किया।

इस प्रकार मार के समान उनका आचरण था। तब पुनःपुनः (पोलप्रद्वय) को भी सब तरह से धरकर उन जातों न बगल किया और बिहारों तथा परिवेशों को विजय ही योद्धाओं का निवास-स्थान बनवाया।

इस प्रकार के जोर तथा बबरबस्ती से माग महीपति सिंहस में इनकीस बर्य तक राज्य करता रहा । माग के आक्रमण के बाद 'पोलसम्ब' फिर न संभव सका । आज भी माग के जल्लाधारों के बिह्व 'पोलसम्ब' की पुरानी इमारतों पर देखे जा सकते हैं । इसके बाद 'जम्बुद्वीप' (बम्ब बेतिय) राजधानी बनी ।



चौथा अध्याय

४ जम्बुद्वीपकाल

माघ के अत्याचार-युक्त शासन से कितन ही विद्वान् स्पष्टिर ब्रह्मिष्ठ देश भाग गये। इसके पदबाह् विजयबाहु न राजधानी बदली। पासात्र सब काम में पालि की सबीर्द्धिग उन्नति हुई थी। साथ ही संस्कृत की ओर भी दृष्टि थी। जिस समय पातप्ररुष के विहारा की स्वमसीसा माघ पर रहा था उस समय मासम्दा तथा विक्रमसिखा तुकों द्वारा ध्वस्त हो चुके थे। जिस प्रकार से माघ के राज्य को स्थापना एवाएक हुई थी वैसे ही उनके राज्य का उच्छ्रय भी अचानक ही हुआ। धम-धर्म के कारण सम्पूर्ण सिद्धि जाति का कुचित हीना स्वामाधिक ही था। अतः इस्कीस रूप के उनके शासनकाल में सिद्धि बीरों न उमे बँन से नहीं रहन दिया। इन समय उत्तर भारत में मुस्लिम शासन स्थापित हो गया था। सिद्धि पर माघ के साथ ही जोनों का भी मय जाता रहा और विजयबाहु न 'दम्ब देनिय' को राजधानी बनाया।

इस प्रकार इन युग में भी पालि के बहुत विद्वान् आकर्षित हुए जिनका संक्षिप्त परिचय नीचे दिया जा रहा है—

(१) संपरक्षित—य 'मारिपुत्त' के विषय न तथा उस समय संपरक्ष न। माघ के शासनकाल में बम की जा अचनति ही गयी थी उसके मुषार के लिए एक परिषद् बनने की अत्यन्त आवश्यकता थी। अतः इनके तथा मेघदूत उहुम्बर्दिगि की प्रपानता में विजयबाहु द्वारा निर्मित 'विजयमुद्रगराम' में यह परिषद् बैठी और इसमें आपसी मतभेदा को दूर करन का प्रयत्न किया गया। विजयबाहु न माघ के शासनकाल में ही जम्बुद्वीप को अपना बेग्न बनाया था और उस अज्ञानि के समय में भी

आचार-वैराग्य में बृह ब्रह्मवासी सम्प्रदाय के भिक्षुओं का प्रभाव बढ़ता रहा ।

(२) ब्रह्मरत्न तिस्स—य ब्रह्मवासी सम्प्रदाय के थे । 'उज्जुम्बर मेघकुर' के शिष्य आनन्द ब्रह्मरत्न भी इसी सम्प्रदाय के थे जिनके इतिहास लिख्य 'बुद्धपिय' जन गुरु को साम्प्रदायी-ध्वज कहते हैं । आनन्द ने 'पियवस्ती' के व्याकरण-ग्रन्थ 'पसावन' की टीका और 'बुद्धसिक्खा' की टीका लिखी । अभिवम्म मूल-टीका के रचयिता भी ये ही रहे जाते हैं ।

(३) सङ्गमोपायन—इस ग्रन्थ का रचनाकाल भी यही है । इसमें बर्म का महत्त्व बतलाया गया है । इसके कर्ता 'अममयिरि के कथिचकवर्ती आनन्द महापर थे । ग्रन्थ से यह स्पष्ट नहीं होता कि ये आनन्द 'ब्रह्मरत्न आनन्द' थे या दूसरे । ग्रन्थारम्भ में बही लिखा है कि अपन मित्र तथा साथी 'बुद्धसीम' को धार्मिक भेंट करने के लिए ही सेलक न इसकी रचना की थी । इसमें १६ परिच्छद हैं जिनमें मनुष्य-व्रम प्राप्त करने की कठिनाइयाँ पाप करने की प्रवृत्ति तथा इसके मर्याद विपाक के स्वल्प प्रतलोकादि का वर्णन है ।

पराक्रमबाहु तृतीय ने द्वीप की आक्रमणकारियों से मुक्तकर बहुत पन्नी फिर से इधे बसा दिया । अपन पाण्डित्य के कारण ही कलिकास सर्वत्र की उपाधि से उन्हें विभूषित किया जाता है । उस समय भिक्षुओं के आचार में सिद्धिमता आ गयी थी और उसे हटाने के लिए आरब्धक मेघकुर की अध्यक्षता में इन्होंने बौद्ध परिषद् का आयोजन करवाया । इस समय ब्रह्मवासी (अरब्धवासी) सम्प्रदाय की प्रधानता स्थापित हुई । भिक्षुओं के उच्च शिक्षण की व्यवस्था इनके द्वारा हुई और इसके लिए बौद्ध वेग से विद्वान् भिक्षु बुनवाय गए ।

इसी काल में भिक्षु अर्षदधी ने 'त्रेसग्गमञ्जुसा' नामक आयुर्वेद के ग्रन्थ का पालि में लिखा और इसका मिहसी अनुवाद पीछे अठारहवीं शताब्दी में नगराज 'सरमकुर' द्वारा प्रस्तुत किया गया । सिहली में मिले

गय बिनय-नियमों के प्रसिद्ध ग्रन्थ 'मिक्तावस्य' का पाणि-अनुवाद भी 'मिक्तावस्यसम्भारि' शीर्षक से इन्हीं मिस्र न किया ।

'सूपबंश' भी इसी समय की ही रचना है और इसके सम्बन्ध में ऊपर कहा जा चुका है ।

(४) अनोमबस्ती—'हृत्पदम-गोत्रविहारवम' इन्हीं के गिण्य की कृति है । इसमें गद्यभाष ही बहिक है और भाषा तथा टीकी दोनों ही अत्यन्त प्रौढ़ है । इसमें ११ अध्याय हैं और आठ अध्यायों में 'सधबोधि' का चरित वर्णित है और अन्तिम तीन परिच्छेदों में उस राजा के अन्तिम निवास स्थान पर (जहाँ पर 'सधबोधि' न सोनी राजा को अपना मिर बाटकर दे दिया था वहाँ के) निमित्त बिहारों का वर्णन है । बबिता भाग तथा गद्य भाष दोनों ही मधुर तथा प्राञ्जल हैं । इसके उद्धरण में 'पाणि-बाण्य पाठ' में दिया है फिर भी मसून के तीरे पर नीचे कुछ अंग लिय जा रहे हैं—

'तत्र सारे राष्ट्रवासी समाप्त्य क मास महाविहार गय और वही पर महानय की बैठक कराकर, मय के बीच 'सधबोधि' राजकुमार से प्रार्थना की । तब सधबोधि राजकुमार न सध को बंदबन्धु समस्वार करके ऊबराग प्राप्त कर, इन प्रकार से बहना प्रारम्भ किया—यह राजबन्दी ब्रैम-ब्रैमे जयती है ब्रैमे-ब्रैमे कपूर की शोपगिन्ना की मीनि राजम से मलिन कर्मों की हो बमन बरभो है । यह है नृत्मास्वी विपयता के लिए बगनवासी जयराग इन्द्रिय की मूर्ता के लिए निपाद (निवादी) की मधुर गीन-की मधुरतिरि की विवरण के लिए छून की घूमरेगा-की माहतिप्राधानों के लिए विभ्रमगत्या प्रसादुच्छिवाओं के लिए क्षीर की घूमरी के समान अविनय की महोनेता के लिए माग बलनवानी पताहा के समान ब-गनय की मकरां ब-निए उग्रप्र ली-की विघ्यादुच्छि मधुरों के लिए मधगाता-मी एवरं-विबारा-बाण क्षमिनताओं के लिए लयीनगावा-की दोरकी मरों के लिए निरासगुहा मधुरगाविन व्यवग के लिए भगनवासी ब्रैम की लड़ी की मीनि मुबलिन की हसा के लिए प्रमाण वैप-मी बरट मन्त्र की प्रस्तावना-की नाम की हाबी के लिए ब्रैमे-की गापता के लिए मूर्ती

पर बड़नवासों को दी बामबासी माता-सी बर्म रूपी बन्दर्मडल के लिए राहुमुख-सी । मैं किसी ऐसे (व्यक्ति) को नहीं देखता हूँ जो इस राजसभ्यी द्वारा सम्मानित किया गया हो और बोधे में न पड़ा हो ।

गोठामय न राज्य पाकर कुछ दिनों में सोचा—मेरी बड़ता से बिरक्त हो प्रजावर्ग बन म मय 'सबबोधि' को लाकर सायब राज करण क प्रयास करे । शक्ति ही उसे मरवा डालना होगा' यह निश्चय कर मय म मरी बबबायी—सबबोधि' राजा के सिर को जो सामया उसे एक सहस्र पारितोषिक स्वरूप मिसया ।

मलयदेशवासी कार्य मरीब जावमी अपन काम से पीटली म मात ल जा रहा था । भोजन के समय सोते के पास बैठ हुए 'सबबोधि' रामा को देखकर उसके आकार से प्रसन्न हो भोजन के लिए निर्मात्र किये । राजा न स्वीकार नहीं किया । उस पुरुष न कहा— मैं छोटी जानि ना नहीं हूँ न प्रामिबल से बीबिक्रोपाजंन करनवासाम केबट बयबा सिकारी हूँ । उत्तम बर्ण भोजन योग्य बंध म पीदा हुआ हूँ । बस्त्राणमर्मा (आप) इस मात का खा सकते हैं ।

उमके आबहू का न ठुठरा सकते मात जाकर, उससे पूछ्य— अनुराधपुर ना क्या समाचार है जो सिर लाकर देगा उस एक सहस्र पुरस्कार स्वरूप प्राप्त होया उसकी बात के तुग्ण बाब सोचा—मेरे सहस्र मूम्यवाम सिर क बान से इस समय इसका प्रत्युपकार हो सकेगा जो पुरय मैं वही सबबोधि' राजा हूँ । मरे सिर को ल जाकर राजा ब दिलाता देव मैं इस प्रकार का पातक कार्य नहीं करूँगा । तब राजा ' समसाया—मय डरो सहस्र कार्पापण क साम ना मैं ही उपाय करूँगा मड असय हो गया यह जाम राजा ने उसी मुट्ठी से कपड़े प्रवाहित होनी हुई घोषित बारा के साथ बर्नी की हबमी पर रख दिया ।

(२) बमरगत आनख—विजयबाहु के समय हुई बीय परिपद् के य बमरगत ब । मात के सामन में सायब य पाण्ड्य दैय के बीबलनमपुर

(महुय) में बना था। 'उपासकनामकार' नामक अपने ग्रन्थ में वे लिखते हैं—

विमुक्त वर्गवाम बुद्ध को उनके द्वारा मुश्किल भ्रष्ट धर्म को एवं बोधा से विमुक्त धर्म को नामकार करके 'उपासकनामकार' की ही रचना करता है।

इन तीनों बस्तुओं (बुद्ध धर्म धर्म) को जो उपासना करते हैं वे उपासक कह जाते हैं वे ही धर्म आदि धर्मों का सूचित करते हुए उपासक के नामकार कह जाते हैं।

उनके भूषण तथा उनके गुणों का प्रकाशक होने में यह ग्रन्थ अथवा ग्रन्थ तथा अर्थ के अनुसार ही पश्चिम द्वारा 'उपासकनामकार' जानना चाहिए।

अन्य मूर्तों में मार ग्रहण करके अनाष्टन हाथर इमका कथन निम्न जा रहा है जैसे कि चतुर उन अनर धर्मों की मधिया का मकर उत्तम मुकुट बनाते हैं।

ग्रन्थकार-परिचय

दूरे बौद्ध-निष्ठाओं में बिना मिथ्या विषय बनाने में महाविहार धानिया को परमेश्वर पर आधारित

धोइवनी नाम में प्रसिद्ध भ्रष्ट नगर में बिनाम बुद्ध में उन्नत अज्ञान तथा महाधनी

मत्त प्रतिम धर्मों में धर्म पाण्डित्य भूमिधर्म में एक ही भाषाभाषा 'धोवनी' नाम में प्रकाशित था।

उनके बनवाने हुए अनिर्गन्तीय तीन रमणीय विहार पृथिवी-रमणीय क मुकुट की धर्म प्रकाशमान है।

उनमें में जो मुद्रागत धोवन अन-मुक्त मानाधर्मबुद्ध क भासक-मा मकर भ्रष्ट विहार (है)

जा अनर जना के सम्मोद मयनकी धर्मों के समागम-मा (है) तथा उनका एक भाग कीर्ति की सदा-अनर-मा देहीप्रमाण (है)।

स्वर्ग में जाग की सीढ़ी के समान प्राणियों का परम धवन पाप अपहरण करने में रमणीय 'करवी' नाम से प्रसिद्ध (है)

वह पुत्रों का आकर 'परम्मस्सी' इस नाम से विद्वानों द्वारा प्रवर्धित किया जाता है। सम्पूर्ण संका द्वीप जब इतिहास की भाग से आक्रमण हो गया था

तो यहाँ अपनी रक्षा के लिए तथा पुनः धर्म की बुद्धि के लिए सदा ही सद्धर्मपोषक सम्बन्धी के ध्वज-सुम्न स्वधिर भाग।

भाग्य की अनुरक्षा करते हुए वे जहाँ रहते थे उसके पूर्व-उत्तर रमणीय प्रासाद में बसते हुए मीने सदा सज्जनों के रंजक इस अर्णकार ब रचा।

(९) बतत्तन मेवकूर—ये भी अरुणवासियों में से ही थे। इनके द्वारा रचित ग्रन्थ 'जिनत्तरित' (एक छोटी-सी काम्य पुस्तिका) तथा 'पयोपसिद्धि' (ध्याकरण का ग्रन्थ) हैं। 'जिनत्तरित' में बुद्ध की जीवनी बर्णित है और इसके साथ ही इसमें बुद्ध के उपदेश कथों का भी विवरण दिया गया है तथा बुद्ध के विभिन्न वर्षावास भी इसमें बर्णित हैं। इसमें प्रस्तुत की गयी बुद्धजीवनी में कोई तथीय बात का उल्लेख नहीं है और सम्पूर्ण बर्णन का आधार जातक-निदानकथा ही है। इस पर उल्लेख के काव्यों का स्पष्ट प्रमाण पृष्टिपोषक है। यद्यपि मेवकूर नाम व सिद्धल में कई व्यक्ति हुए हैं पर य बतत्तन मेवकूर के नाम से प्रसिद्ध व। इनके समय के सम्बन्ध में भी विद्वानों में विवाद है। इन्होंने तो केवल यही व्यक्ति किया है कि इस ग्रन्थ की रचना उनके द्वारा राजा विजयबाहु द्वारा निर्मित परिवेण में हुई। इसी को आधार बनाकर विद्वानों में इनके काम व सम्बन्ध में अलग अनुमानों को प्रस्तुत करने की चेष्टा की है। इन सबका निष्कर्ष यही निकलता है कि निम्नलिखित ही इनका समय देखनी सदी का उत्तरार्ध है।

'जिनत्तरित' के निम्नलिखित तमूत इसकी टीसी को व्यक्त करने के लिए पर्याप्त है—

हिमासय-वर्णन

“हरिचन्द्रन कपूर तथा अमर की मन्थों से वासित सुषुप्तिवत् ब्रह्मा अनोक पादमि तिसरु बूझों तथा मुवाठी पुत्राग आदि आदि के बूझों से मंडित

सिंह बाघ चरस हाथी शीत तथा अस्व आदि अनेक मुगा से समानुक्त मैना खिड़स हंस, तोता शीश बबूतर तथा करुणिक आदि पक्षिया से कूजित

यस राससु रासई देव दानव सिद्ध तथा विद्यावरों आदि से मखिन स्वर्न तथा मणि के सोपानबाने अनेक तीवों और सरोवरु स घामिन एव देवाङ्गनाओं की शीड़ा से घामिन

धीतम फुहार म ईके आंगनों से मंडित तथा किन्नर और नागों के रमणीय रंयस्पर्षों से विरुजित

मौरुं के बन-नृत्यों से तथा सताओं के मंडनों म एव स्नेह बामू म ईके आंगनों से मंडित (हिमासय पा) ।

सिद्ध्याय के जन्म पर प्रकृति का आचरण

‘इन समय कृत इच्छियों के साथ हय-मूर्ति ही कीए उल्लुब्ध व साथ साथ मुनत्तम मण्डों के साथ और बूझ बिस्मिया के साथ ज्ञान मग ।

मृग मित्र व साथ बँगे ही मित्र गय जैम पुत्रा के साथ माना-रिगा वर समागम होता है । ताब म विष्णु की गय दाबी स्वदेग बारम आ गय ।

महायागर मात्रा बर्न के भीम कमला म विभूयित मान तरंगा की मानाबाना ही गया था और (उमका) जल भी अल्पन्त सुन्दर हा गया था

प्रताप मय व श्रिय गंयम से रूची स्त्री बहू अल्पन्त पाल्द ही गयी देवां के अनन्त प्रकार के पुत्रों की बलि म विभूयित और भी मरू विभूयित हुई गयी थी ।

कीवन पीवन तथा मनोम गन्तवाना बापू सम्पूर्ण प्राणिया के लिए

सुखप्रद होकर प्रकाशित होने लगा और जनक रोगों से बुझी हुई शरीरवात सोम उगड़े मुक्त होकर सुखी हो गये ।

ग्रन्थकार-परिचय

“बंका के मलकारभूत राजवंश के केन्दु विजयबाहु राजा के अपन नाम से बनवाय

अन्तमम प्राकार, तौपुर आदि से शोभित अष्ट रमणीय बिहार में मान करत हुए सान्त्वितिकाम

पयानु तथा पौमानु मेवदुकर स्वधिर न उवा लणो द्वारा खेवित इत (पद्य) को रचा ।”

भारत मेवदुकर का द्वितीय ग्रन्थ ‘पपीर्गातिदि’ है, जो भोग्यस्मान व्याकरण की भाषा बनाकर प्रयोग की व्याप में रसकर प्रस्तुत किया गया है । इनमे सबसे म कश्चापन व्याकरण की भाषा बनाकर प्रक्रिया सुसार बुद्धिनिम दीपदुकर द्वारा प्रस्तुत किया गये ग्रन्थ ‘कर्मतिदि’ से बहिन शब्दको का उत्तर उपस्थित करने का प्रयत्न किया है ।

(क) बुद्धिनिम दीपदुकर—य जोड़ देस के कश्च बहिन न । इनका सम्बन्ध मम्मवत ‘बनरतन ज्ञानन्व’ से उसी समय हुआ था जब वे मरुत के वेरम्बकी बिहार में माष के ज्ञानाचारा के कारण शम्भामत हुए न । बुद्धिनिम बनरतन ज्ञानन्व को अपना पुत्र मानते न । पठित पद्यम्भ न निहम म पुन ज्ञानन की प्रतिष्ठा के लिए जोड़ देस से मिभू-मंष को जब आमन्त्रित किया था तो मम्मवत से मी उठी प्रसंघ में ही सिंहल जाये न । इनके ग्रन्थ पञ्चमधु तथा ‘कर्मतिदि’ आदि हैं, जिनके विषय में ‘ब्रह्मिद् ब्रह्म में पाणि’ नामक अध्याय में ज्ञान विवरण प्रस्तुत किया जायगा ।

(ख) लंपरन्वित—‘तारिपुर्त’ के विषय तथा सन्नाद् विजयबाहु के समय में सबयत्र न । इनकी कृतिवाँ हैं—(१) ‘मुबोपासंकार (२) बुतोपय’ (३) ‘सुदकविक्रान्तीना (४) सुमतिदि’ (५) ‘भोग्यस्मान्पिदि-मटीका’ (६) ‘धम्बन्वचिन्ता’ तथा (७) ‘भौषिकि-

विनिन्द्य' आदि । इन रचनाओं से यही सात होता है कि य बहुत-से विषयों के पंडित तथा ऋजू प्रवृत्ति के थे । 'मुद्रोपासकार' की रचना उन्होंने संस्कृत के विख्यात कवि बली के 'वाग्धातव्य' के ढंग पर की ही जिसमें उदाहरण उन्होंने अपने ही द्वारा बुद्ध-महिमापरक पद्यों को रचकर रखा । नीचे 'मुद्रोपासकार' के उदाहरण दिए जा रहे हैं—

“मुद्रिदात्र बुद्ध के मुख-कमल-स्पी परम से उत्पन्न सुन्दर तथा प्राणियों की धरम बाणी (सरस्वती) मेरे मन को प्रसन्न करें ।

धर्मधर्मा आदि के तो प्राचीन अर्थकार (ग्रन्थ) विद्यमान हैं तथापि वे बुद्ध मागधी (पाणि) के बानन में प्रयुक्त होते हैं ।

इसलिए अर्थकाररक्षिता को भी ठीक-ठीक अर्थकारों से सत्पुष्ट मैं कर मरूँ इसीलिए मेरा यह धर्म है ।

ममो गुणों से बिबेकी पुस्य को पूजा करना ही पूजा है । अविबेकी पत्तों के पास मीय बिबेक को नहीं प्राप्त कर सकते ।

धमी कुशल अनुमस प्रबल अथवा अप्रबल जब तक ज्ञान न हो तब तक बुद्धप्रय ही होते हैं

मेरे द्वारा विहित विधानादि आनन्दप्रद विरल को आनन्दित करते हुए आर के महित प्रकाशित हों

स्त्रियों पर, बुद्धों पर विष पर सीगबान पद्मों पर नदी पर, रोग पर तथा राग्याविचारियों पर विश्वास करना ठीक नहीं है ।

ममी कोमल बगों से अनुप्राप्त प्राणनीय नहीं है जैसे कि मीन चंचल भ्रमर-पंक्तिवामी ज्योती की माला ।

हे जिन-बद, जी लोपमवस्वी अम्ब्रनि दोन मे तुम्हारे शरीर की कान्ति का पान करने है वे तृप्त नहीं होते हैं क्या आप तुपा मानवाने भी है ?

अन्त लक्ष्यवर्ती है कमसे बहुत एक (अन) वाला है, अतः तुम्हारा मुख उनके समान होता हुआ भी उत्कृष्ट है—इसे तिन्योपमा कहा जाता है।

मुनीन्द्र का मुख सोभावमान तथा मनोहर चमकता है। हे अन्त अन्तर जग हृण भी लीटी भेष्टा स्वर्ण है।

‘सुहृदसिन्धवा’ की टीका में अपन मुख के सम्बन्ध में यह कहा है—

अनक सास्त्रों में विमारद महाबुधी एवं महाप्रज्ञ अपन मुख ‘सारिपुत्त’ महास्वामी का मैं फिर से नमस्कार करता हूँ।”

(३) बेरेह—इनके काल के सम्बन्ध में विश्वास है। कुछ लोग इसे देखनी सही और कुछ चौबहनी सही मानते हैं। ये बतवासी सम्प्रदाय के थे और अनरतन आनन्द के शिष्य थे। इनकी कृतियाँ हैं—(१) ‘सम्पत्-कूटवच्यना तथा (२) रसवाहिनी’। सिंहल का प्राचीनतम व्याकरण चन्द ‘सिञ्जतठपर’ (सिञ्जातसमह) को भी इसी की रचना कहा जाता है।

इनका एक ‘रसवाहिनी’ बड़ा ही लोकप्रिय है और इसमें १३ भाष्यान्त का संग्रह है। यद्यपि इनमें मठ ही प्रचलन है, पर बीच-बीच में याबाएँ भी आयी है। इस भाष्याना में गैरिक उपदेशों का प्राधान्य है साथ ही लंका तथा भारत दोनों को सम्मिलित संस्कृतियों का विषय इन भाष्यान्तों में उल्लिखित किया गया है। ‘बुद्धनामनि’ सिंहल का बहुत प्रतापी राजा था जिसने ईसा पूर्व प्रथम शताब्दी में इचिङ्गा से सिंहल को मुक्त किया। और हीन के साथ ही उसके चर्म-श्रम का ममूना ‘रत्नमास्य’ चैत्य है। उनके एकमात्र पुत्र शान्ति ने शासन किया से प्रथम करके सिंहासन छोड़ दिया। बेरेह में ‘रसवाहिनी’ में यह कहा ही है—

“ बुद्धनामनि’ राजा का पुत्र शान्ति कुमार तीनात्त अथवा से मुक्त राज महि-नरकमवासा था।

यह बहुत मेधावी रूप में कामरेव के समान मधुरभाषी शत्यप्रतिज्ञ तथा विमार्द था।

(बह) राजा भोपवाला बनी एक सम्पूर्ण शानियों का हितैषी

था। वह दान एत में कभी भी वृष्ट न होनेवाला तथा वस्तुत्रय में पर्यय था।

एक दिन कुमार उद्यान-क्रीड़ा करकेमा' यह सोच कर दक्षिण द्वार से निकला। जाकर उद्यान क्रीड़ा करते हुए जहाँ-तहाँ रमणीय विभागतम पुष्पगुणी मत्तमण्डप तथा बृहत्सूत भादि में विचरण करता हुआ एक पुष्पित अनाक वृक्ष को देखकर उसका नीचे गया और (वहाँ) ऊपर की ओर दसा। उस समय 'हस्तास' ग्राम के चांडाल की पुत्री 'बिबी' उस वक्ष पर (ऊपर) मेघ मन्मण्डल पर देदीप्यमान विद्युस्तता की भांति ध्यष्ट रूप को प्राप्त अमाक के पुष्प तथा पस्तर्वा को सोड़ती तथा पहतती हुई म्वित थी। कुमार उसे देखकर उत्तम यन्त्रान् प्रम स युक्त हृदर आशय-अहित हो मगत प्रम पर संयम न कर सका। और फिर, उसका माय समाप करते हुए बोला—

वहाँ से तू आयी, तू कील है? देवता है या मानुषी? मैं तेरे ममान अध्व किमी को दस पृष्ठी मंडल में मही देखता हूँ।

तेरे चरण पय मद्गुग मुग्धत तथा कोमल हैं। तुमहम मोर की शीबा की भांति तरी जीप मर्ष: के लिए रमायत है।

मत्र तेरे जानु भरे हुए तथा वनव बदमी तुम्य धुम हैं। तेरी बटि एमो द्रवीत होती है जैग कि वह मुद्गी स नय जाय।

मत्र एर क समुद्र में अविच्छिन्न रोमा की पंक्ति से मुग्धाभित तैरी विवसी तरंगों की भंगिमा वा निर्माण करती है।

मत्र स्वमागर में तेरे स्तन उत्तरमागर में अत्र तुम्य मुनहम बुनबुन के समान घोभायमान है।

मत्र वलामता स उत्तर अति अद्भुत प्रराह की भांति पापि की पन्तबा स अपहृत तेरे बाहु विराजमान है।

मझे वर्तमान स्त्री के मूल चन्द्र चमक की किरणों से विभित हो मेरे मन स्त्री कमल बन को प्रफुल्लित करता है ।

शृंगार मन्थिर में मुखर्षस्तम्भ पर बंध ध्वज के समान अविमर्श कार्मुक की भाँति क्षिप्रमिमासी ठेरी मीहूँ विराज रही है ।

चमकी की भासा से सेवित मनोरम तेरे नीचे केवल तापिक के मुल्ल के समान है ।

मह तुम अपना नाम मुझ बतला । तुमने तेरे माता-पिता कौन है ? मेरे पूछन से मह बतला कि तू समर्ता है या अमर्ता ? ”

उत्तर कहा—

“स्वामिन् हेल्तोस’ धाम के मासिक को मैं पुत्री हूँ मुझ मोग मोहार पुत्री चाँदानी कहते हैं ।

उसे मुनकर कुमार ने कहा—

‘गन्धे में पड़ी हुई उत्तम ममि को यह दुनिया नहीं छोड़ती । स्त्री-रत्न को हीन कुल से भी सुधि की भाँति ही ग्रहण करना चाहिए ।

कुमार उस पर मूक होकर, ब्रह्म से उसे उतार कर, बँके धाम में बिठमाकर उसके साथ मगर को गया ।

राजा ने एक विश्वसनीय स्त्री को बुलाकर कुमार के पास मह कह कर भजा—स्वामिन् तुम्हारे पिता तुम्हारे चित्त के अनुकूल राज-कन्या या शाह्यभ-कन्या लाकर पादपरिवारिका बनाकर अमिवक करवें बने । इस चाँदानी को छोड़ दो । राजकुल को मत्त रूपित करो । साथ ही मह भी बहू कि राजकुमार के मन के मास को जानकर मुझसे भी कहना ।

उस स्त्री ने जानकर यह बात राजकुमार से कही । तब कुमार बोला—

‘बोहवामी (जब) एक अनार को खाता चाहती है तो क्या वह धाम के फल को पाकर लुप्त हो सकती है ?

इसी प्रकार दूमरी (म्हो) को पाकर मेरा मन नहीं मरेया चाँद को देखकर बज कमलजन फूलता है ?

राजा ने ब्राह्मणों को उसकी लक्षण-जीव के लिए भजा । उन्होंने भी आकर कहा

उसका सिर छत्र के आकार का मत्र बिगास कमल पत्र के समान मुग्न तथा हाथ-वीर मरे हुए हूँ तथा उसमें बजल मन्त्री यगती है ।

यह सुनकर राजा स्वयं उपगज के महसू म गया । तब उपराज और अधोऽन्तासा दत्ता राजा की भगवानी वर बन्दना करके एक ओर पाइ हा मय । राजा न देखी की रूप-मन्वति मे सम्पुष्ट होकर पूछा — क्या तू ही असोऽन्तासा बेबी है ? उसका 'ह्रीं स्वामी' कहल समय मुग्न से कमल गन्ध निकलकर सारे भवन में फैल गयी । राजा इस आश्चर्य को देख प्रगल्भ हो आकर विधाय आसन पर बैठा राजा पति-श्लोकी को उपपद्य देकर, अभियुक्त करके बसा मया ।

तब पिता 'बुधुवामधि' राजा न पुत्र का बुभवाकर कहा—भिरे म राजा पर इस राज्य की भेभासना । उसने नहीं चाहा और 'गङ्गानिस्त' कुमार राजा हुआ । गालि राजकुमार मन्विष्य में मन्त्रय बुद्ध न पुत्र होकर जन्ममें ।

(१०) तिद्धरथ—मुजलरुबाहु (१२७७-१२८८ ई०) न नाम में इन्होंने 'सारथ्यमङ्गल' नामक ग्रन्थ की गद्य-पद्य-मय ४० परिच्छदों में पूर्ण किया । यह बौद्ध धर्म का इतिहास है साथ ही इसमें दान तथा त्यागादि से सम्बन्धित कथाएँ भी दी हुई हैं ।

(११) धम्मकिति—इन्होंने चौदहवीं सदी में भारतीय तथा सिन्धी भाषानां क मद्रह-स्वरूप सिन्धी भाषा में 'मज्झिमासंवाट' नामक मद्रह-ग्रन्थ की रचना की । इसमें २४ परिच्छद हैं तथा तीन परिच्छदों का छोड़कर गद्य २१ परिच्छदों में 'ग्गवाहिनी' की ही कथाएँ दी हुई हैं । य भी धरत्य बानी मन्त्रदाय न ही य ।

(१२) देवदक्षिणत धम्मकिति—भुवनेकबाहु पंचम तथा बीरबाहु द्वितीय के काल में (१३७२-१४१०) के संवत्स्र के । उस समय मित्तुजों में व्याप्त दुर्म्यंभन्का का हटाने के लिए बौद्ध मित्तुजों की एक परिषद् का आयोजन हुआ जिसके अध्यक्ष देवदक्षिणत धम्मकिति ही बनाये गये थे । इनके द्वारा रचित ग्रन्थ 'सत्तेप' 'निकायसङ्गह' 'बामावतार' तथा 'जिन बोधायनी' आदि हैं । बौद्ध इतिहास को स्पष्ट करने में 'निकायसङ्गह' का महत्त्वपूर्ण स्थान है । यह सिद्धली ज्ञापक है । 'बामावतार' कल्पामम को आधार बनाकर प्राचीनक विद्यार्थियों के लिए संक्षिप्त रूप से प्रस्तुत किया गया है और पालि अंगत् में इसका सर्वाधिक प्रचार है ।

अपन ग्रन्थ 'निकायसङ्गह' में वे कहते हैं—

“हमने क्या नहीं सुना” इसके अन्तर्गत रहते हुए, तथा 'हम सब जानते हैं यह भी चिन्तनीय नहीं है । जैसे शीघ्र ज्योति-सहित हो और उसमें फिर तेज काम बिना जान जैसे ही मेरा वह भजन है ।

सदा अनन्त दिग्गजों में प्रख्यात महामैत्रवाजा मूर्ध्नि दुर्जन-रूपी सम्पूर्ण घोर अन्धकार को अक्षय्य दित्त-जित्त कर, सत्जन-भक्ति-रूपी-हृत्त सहित सब-रूपी कमल-सरोवर को तुष्ट कर संका द्वीप में राज आदि रक्षियों के स्वामी तथा अष्ट चिरकाम तक म् ।

मूर्तीस्वर का धर्म चिरकाम तक चमता रहे राजा भोग धर्म में स्थित रहे समस्त परम बरसे और सारी प्रजा परस्पर मैत्री से सुख को प्राप्त हो । 'तंभानिगिपुर' में रमणीय पहल भुवनकबाहु के राज्य करते समय जो संवत्स्र 'धम्मकिति' गडसाबोधि नाम में 'तिसक' नामक विहार बनवाकर चिरकाम तक रहे

उनका विषय-रूपी मुन 'देवदक्षिणत' नामक और जयबाहु नाम से प्रतिष्ठ और लोडपुत्रित जो 'धम्मकिति' इस नाम से भूषित है तथा संवत्स्र बर को प्राप्त करके जो जिन धामन को घोषायमान करते हैं

उन्हीं इन 'निकायसङ्गह' को स्वनापा में संतेप से सदा बुद्धपावन की उन्नति के लिए रचा ।”

पाँचवाँ अध्याय

५ अयवर्धनपुर (कोदटे) काल

अम्बुद्राणि से 'कुम्भमत्त' भी राजधानी का स्थानान्तरण हुआ और उसके बाद कोसम्बा के उपनगर 'काट्ट' में । पराक्रमबाहु पण्ड (१४१५-१४६७) ने तामासाह 'अमकेरव' की इहमीसा समाप्त कर दी और सदा का सन्नाह हुआ । लंबा पुन' एकता के बृह सूत्र में बढ हुआ । इनके समय में संघराज राहुस जैसा महान् विद्वान् उत्पन्न हुआ जो पराक्रम के 'पौसभरव' की विद्वत्ता का अन्तिम प्रतिनिधि था ।

(१) राहुस संघराज—जो युग महापराक्रमबाहु के समय (११२३-११८१ ई०) में आरम्भ हुआ था उसका य अन्तिम पंक्ति य । इन्हें राहुस 'बाबिसर' (बागी-बग) भी कहा जाता है । 'तोटगमुब' क विजयबाहु परिवेण में निवास करने क कारण इन्हें 'तोटगमुब राहुस' की मजा भी प्रदान की जाती है । सम्भवतः य राजवंश क य । य 'उत्तरमुमनिराय' क य और इन्हीं के कवन के अनुसार स्वामी वात्तिकय न १५ वर्ष की अवस्था में इन्हें बरतान दिया था जिससे य 'पद्मापापरमदय' हुए । ये छह भापार्य हैं—(१) संस्तुत (२) मागपी (पामि) (३) अपन्नग (४) पैसापी (५) गौरसेनी (६) तामिल । इनके अतिरिक्त गिहनी तो उनकी मातृभापा थी ही । इन्हींने गिहनी में मेघदूत की पैसी पर सन्देह-वाप्यों को प्रारम्भ किया । और इनके य दो मन्दग-काव्य हैं—(१) मऊनितिनि (२) परबिमग्दना । बाम्य-राज में इनका प्रसिद्ध प्रम्य काव्य योग्य है जिसमें य अमर है । इनकी अन्य कृतियाँ हैं—(१) सीमामंवर-छेदनी (२) तोग्यमुनिमित्त (३) अनुपयमत्वकाव्य (४) मोगस्तान पञ्चिवापदीय (५) पद्मापनटीका आदि । इन सबके अतिरिक्त इनकी अन्य रचनाएँ भी हैं ।

इनके द्वारा प्रस्तुत किया गया 'पञ्चिकाप्रदीप' पालि-व्याकरण को व्यवस्थित करनेवासी प्रौढ़ टीका है। स्वयं आचार्य 'मोग्गल्लान' द्वारा अपने व्याकरण पर लिखी 'पञ्चिका' का यह प्रौढ़ व्याख्यान है। यह अगस्त पालि तथा सिंहली में लिखा गया है। इसमें विद्वान् मघक द्वारा संस्कृत पालि, सिंहली तथा अन्य ठमिभ कृतियों से उद्धरण भी दिये गये हैं और ये कृतियाँ अपना पूर्णतः उपलब्ध नहीं हैं। जब तक 'पञ्चिका' अपना मूल रूप में प्राप्त नहीं की तब तक मोग्गल्लान व्याकरण के गम्भीर अध्ययन के लिए केवल इसी ग्रन्थ का सहारा विद्यमान था और इसी से पञ्चिका के गम्भीर तथा प्रौढ़ता का धामासु विद्वानों को प्राप्त होता था। पञ्चिका के मिलने के पश्चात् तो इस ग्रन्थ का महत्त्व और बढ़ गया है।

सिंहल के प्रसिद्ध विद्वान् सुमुत्ति ने अपने ग्रन्थ 'नाममासा' में राहुस संघराज द्वारा उद्धृत निम्न ग्रन्थों की सूची की है—

- (१) कण्वायन
- (२) ग्याम
- (३) स्यामप्रदीप
- (४) निवृत्तिमञ्जूसा
- (५) रूपसिद्धि तथा इस पर 'सन्न' तथा 'सत्पण' (ग्रन्थिपद)
- (६) वामावतार तथा इस पर 'सन्न'
- (७) गार्गीति
- (८) भूमविद्धि
- (९) निवृत्तिपिटक
- (१०) गुत्तनिहस
- (११) सम्मग्गबिन्ता
- (१२) पदसाधन तथा इस पर 'सन्न'
- (१३) पञ्चिकाटीका
- (१४) पयोपसिद्धि
- (१५) विक-सङ्गि-टीका ('दीवनिवाप' की टीका)

- (१६) मेसग्गमञ्जूसा तथा इम पर 'सम'
- (१७) अमिपानप्यधीपिका
- (१८) पान्द्रम्याकरण
- (१९) मगामाप्य (पतञ्जलि)
- (२०) नाप्यप्रशाप (कैयट)
- (२१) सनुवृत्ते (पुण्डरीकमदेव)
- (२२) दुर्मिहृष्टुतिरञ्जिता
- (२३) पञ्चिजामङ्गार
- (२४) कागत्र
- (२५) गण्डार्यचिन्ता
- (२६) मारम्बल
- (२७) कागिना
- (२८) कागिकावृत्ति
- (२९) कागिना
- (३०) मागवृत्ति (मर्गुहृति)
- (३१) मागमप्रपह
- (३२) पराननार
- (३३) धीपर (कोण)
- (३४) वैजयन्ती (कोण)
- (३५) अभिधर्मकाण (बमुबन्धु)
- (३६) प्राहृत्प्रसाग
- (३७) ध
- (३८) रामानन
- (३९) बाहट (महानाग्न)
- (४०) मरुत्तगास्त्र
- (४१) अमरकोण
- (४२) मन्िनीकोण

- (४३) चातक-सप्त
- (४४) उमत्था-गटपद
- (४५) रत्तनमुत्त-गटपद
- (४६) वेपल-चातक-गटपद
- (४७) विरिह-सप्त

'पञ्चिकाप्रदीप' को प्रकाश में लाने का यय विद्यामन्तर परिवर्ण (विहार) लंका के संस्थापक तथा हमारे बाबा गुरु आचार्य श्री बन्नायम नायक महाराज को है। इन्होंने १८६६ ई० में 'पञ्चिकाप्रदीप' का सम्पादन करके हुए इसकी मूमिका में लिखा था—“मोगलशाह व्याकरण के अध्ययन करने में विद्याविधियों का जो इतना उत्साह बढ़ रहा है, उसमें पञ्चिका का जो ज्ञान बड़ा बाधक हो रहा है, यदि : अब जो मूल पञ्चिका भी प्राप्य है और इस पञ्चिकाप्रदीप के महत्त्व में इससे और वृद्धि ही हो गयी है।

इसके प्रारम्भ में व कहते हैं—

जिन सम्भाषि-स्त्री निर्मल-सागर से उत्पन्न जिन मुनिवन्द के उरम्भम बचनों के सुष्ठिसमूहों के द्वारा बाह्य बाधों के मुखकमल सफुषित हो जाते हैं, ऐसे उस अतुल बुद्ध-स्त्री बन्ध की में सदा बन्धना करता हूँ।”

अपने लालन-पालन करनबाम पराक्रमबाहु के सम्बन्ध में इन्होंने कहा है—

सूर्यवशा-स्त्री कमलाकर के प्रकाशक राजेश्वरों के मुकुटमणियों से रोजित अनुपासकबामे पिठा-मद-अभिमत लवाधिपति (पठ) पराक्रमबाहु द्वारा पुत्र प्रेम भाव-द्वारा जो पाले-पोसे यय

अनक धारणों में तथा दूसरे बाधों में अल्प चायादा में एवं सम्पूर्ण निविटक में जो आचार्यत्व को प्राप्त कर प्रीति वा बुके हैं ऐसे उदा पराक्रमबाहु हीर्बजीवी हों।

'पञ्चिकाप्रदीप' के अन्त में व लिखते हैं—

“महावीर्यशाम (गोटगमुव) में (स्थित) रमणीय प्रवर विहार

महाविजयबाहु-निवास के बासी स्वविर, राहुन स्वामी के नामवासे बागीश्वर नाम से विरिठ ने 'पञ्चिषवा' के पठनार्थ 'दीप' प्रदान किया ।

पचासी राजा पराक्रमबाहु न जा कि सिंहस ने बहु पुष्य तथा तेजबाले राजा है बचपन से ही मुक्त पुत्र-समान प्रेम से अश्व गुर्जा के साथ पोसा

उस कुशाग्र बुद्धिबाले राजा को विपिटव क बर्ष की व्याख्या करते हुए तथा बस पुष्य बर्षों को प्ररणा प्रदान करते हुए हमन जयबर्धनपुर में

उन्ही क राग्यारम्भ क चौदहवें बर्ष में कातिव की पूणिमा को राके १३७६ (१४४७ ई०) में इस ग्रन्थ को समाप्त किया ।”

(२) पत्तार उपतपस्ती—य भी इसी काल के य तथा 'सरमी गाम' क निवासी य इसी स इन्ह 'सरमी-गाम-मून-महासामी' बहा गया है । इनकी रचना 'बुतमाता-सन्दम-गतक' है जिसम १०२ पद्य है तथा यह उत्कृष्ट काम्य के भावर्भ को उपस्थित करती है —

जयबर्धनपुर (कोट्टे) वर्णन

“प्राजियां क सिण भानवकर तिकावों का समूह सरमी-रूपी-सरोज के भाकर, अश्व कुम सूर्यबंज राजबंदा में उत्पन्न (तथा) जो सुमित्र के अरण्य सुमित्र को शरण देनबाले तथा पुष्यार्थ को साधारण बरनबाल है । जिस पुर में देवलोह क देवतामा की भाणि सोग प्रमुखित हो कीडा करते हैं

सूर्यबंजालात्र राजा पराक्रमबाहु (की पुरी) प्राकार के मारमूत परबामी दहन तथा विमान चन्द्रबंदा में स्थित बरपुत्रों को बत के लिए परिधिनी दीगती है

(जहाँ) विमान भागाय में निरामन्ध परा में उतर्ने चारा और प्रशासित माना शरद चतु क मेघा की पदिस्र के समान अनर प्रामाद गिगर देवीप्यमान है

(जहाँ) मूमि पर पैन घाम-रूपी जल में प्रतिबिम्बित नगर की मड़कों क बोनां और बँधे पत्र सदा ही मूय की नदी के मिर पर ललने हुए माना प्रहार के जमबर्तों-बैम घोनापमान है

(यहाँ) ध्वजों के चरणों में बँधी किकिनी-आस के माथे अति अधिक वायुबोग से हिलते मानों राजा की कीर्ति को नवर के आकाश में देवीप्यमान विशाल ध्वजमाला द्वारा स्वर्ग के देवपत्नों के लिए गाय बाते हुए (नील के समान) बीखते हैं।

(यहाँ) नारी सुरंग-समूह के सुरों से उठी धूमि से सूर्य भूषणित है और विस्तृत सड़कों के बीच उत्तम पत्नों की बड़ी पकितत कारनों की मर्दनकारी प्रतीत होती है तथा अथकार के समूह की भाँति ही भाव है।

अब चारों ओर स्थित सुपारी तथा विशाल घास के बृक्ष मन्द बामु से ढँपाये जात हैं ता ऐसा जान पड़ता है कि य पुर की सोभा को बिलसा स्तुतिकर अपने अस्तक को हिला रहे हैं।

नील अल के तल से उत्पन्न इकठ घटपत्तों की वनम-पकितत ध्वजसो आदि पत्तियों की विविध परिष्कारों से चिरी बून से सिपी प्राकार से विस्तृत पुर नामक बन् जब सर्वथा वस्त्रहीन होती है तब कस्यान के धौर से विविध चित्र-से अमकता वस्त्र सा दीयता है।

जैसे स्तम्भों के शिलरों पर बँधी मन्ध बामु द्वारा आसित रजः की पकितत एंसी लपटी है मानों नायभाग के पुपन-सुपक स्तम्भ-दयी स्तनों को पकड़न के लिए गठड़ उठा हो।

जहाँ महानदी बह रही है और नदी के जग में मौच अथम हीन दिखाई दे रहे हैं। एसा मयता है मानों यहाँ सम्मान के लिए माना हाठ नायमोक से लायी गयी पद्यतपमजिया अमर रही हो।

इस प्रकार बहुविध ऐश्वर्य के निवास लका-बपी-कायता के तिलक की भाँति उत्तम पूरी में अथप प्राणियों को थी वनेवास के दरवाज विभीषण विराजते हैं।

राजा पराक्रमबाहु की प्रदासा

जो राजा पीरता में गिरत, स्थिता म पृथिवी धनु-समूह-बपी

हिम के घोषण में सूर्य सञ्जन-कृमुद के बिक्रासन में चन्द्रमा तथा दिवा विविधा क सासन में गरुध्रष्ट क ममान है ।

बिस्मयत कौटिलान मूरति ऐस बिराजमान है जैसे वारदमध, चन्द्र-किरण औरमापर से उठी तरंगें तथा गंगा का जल ।

सूर्यवरा के ध्वज मररात्रधष्ट बुद्धि में बृहस्पति को उद्यम में विष्णु को बीजगुण में सूर्य को तथा मरा म चन्द्रमा को जीवन है ।

कस्यामनुरो-कपी भस्वर में अनुपम राजा-कपी-चन्द्रमा क सावहितार्म निरस्तर प्रकाशित होत म वायु-कपी-यमल मरा मृगसाय और स्ववपु कपी-कमुद मानन्वित हुए ।

पूर्व जन्म क संबन्ध बहु पुष्य-कपी-कमल-नाम मे संका-कपी-कमल-सरोवर में उगात्र क राजा सम्पूर्ण प्राणि-कपी मँबरां को हम राजधर्म-कपी-मपु का दाता उत्तम भूपानकपी-कमल क मुकुम मरा समी क निबाम तथा मरा ही ममतिगामी उगमवर्ण वध-कपी रवि म बिराजित निय जाने है ।

संका-कपी औरमापर में बिराजित मररात्र क ममान गग प्रका पर होतबाम भग्याय-कपी नागों को मारन में पदङ्क क ममान सम्पूर्ण वायु कपी-मरां को विजित निय मिहारात्र क ममान क धष्ट देवरात्र विनीपण को स्तुति करते हुए

बित्त-कपी-कांस पर तुम्हें दियाई दन अमात्य-मंडल-महित राजा पणकपबाहु को स्नेह-कपी मंत्रन मे अत्रिन हयामय साचना मे अक्षी तरह देग हे मुग्रापिनि नित्य रजा कपो ।”

सिंहम की प्रकृति का वचन

“मुतुनिग मुतापी के बूतों को पाव की पछादन के लिए बउरेनु क ममान देग 'बदां बड होना ही ठीक है उमी जग-श्रुति से हँसने-म दीगते

प्रभाव में गमते मोसरुष और पक्षियों के कूजन-सहित बृक्ष-समूह 'यतियों' के तपोवेद ठीक है ऐसा कह यानों गिद्यान्त में सन्तोष अमु-सा अर्चित करते हैं ।

मता-स्त्री-हाथों में प्राप्त पुष्पित पुष्पवाले जहाँ मन्वन्-मन्व राधि-स्त्री अर्चितवाले बृक्ष-सन्त ही भर्म के आचरण में प्रेम किम् विमल दिव्य के समान सदा प्रकाशित होत है ।

प्रातःकाल कूजते कुक्कुट बहाँ संयमियों के आभम में भाव-युक्त उपस्थित हो मानों प्रतिदिन बजाते हैं ।

जहाँ संयमिया के तपोवन म पुष्प क बाह फलयुक्त आम के बृक्ष हैं । वे मानों अपनी इत सम्मति को कहते हैं कि आर्य-यागं क समाप्त हीम पर इमी प्रदर से मोक्षफल होता है ।

मगर शोमा

हीरमागर से उत्पन्न पद के मनुम देवीप्यमात्र भर्तों क प्रतिमा-मूर्तों में बुद्ध की सजीव-नी चित्र-विचित्र प्रतिभाएँ मदा दीजती हैं ।

(बहाँ) पर-मर पर संचित पुष्प की राधि है हाथ-हाथ में शीपमासा-धारम है बाँह-बाँह में फूल की इलियाँ सटक रही है और प्रत्येक मुख से माधु-माधु (का शब्द) निकल रहा है ।

परममबाहु अर्थात् सिद्धम क अन्तिम प्रतापी राजा थे । अत्यन्त कवि का यह कवित्व यथार्थ है ।



छठवाँ अध्याय

६ अन्धकार युग

पण्ड पराक्रमबाहु (१४१४-१४६७ ई०) के मरने के बाद काफी सतायी भी नहीं बीठी कि आपसी झगड़ के कारण सिद्धम निर्बल हो गया और उसी समय पूर्वी देशों के साथ व्यापार करने में प्रथम पार्शुगौत्र बहो पहुँचे । उस समय सोमहरी शही का शास्त्र ही था और धर्मपरम्परा मन्त्र का संका में लागू था । उसे स्वयंसेवी और बाहरी शत्रुओं से रक्षा करने का अधिकार देकर पार्शुगौत्रों ने पान ही की भूमि पर जिसे उन्होंने 'कोमन्दा' नाम दिया—मन्त्र के बिना ही बट्टनों पर अपना किला बना लिया । कोमन्दा के किन पर पार्शुगौत्र की तोपें चढ़ गयीं । फिर क्या एक ओर आपसी झगड़ को बढ़ावा मिला हुए दूमरी ओर अपनी तोपों और बन्दूकों का जोर प्रयोग करने हुए उन्होंने सिद्धम को अपना हाथ में कर लिया । इनसे सिद्धम प्रका अस्तित्व ही गयी । १४४० ई० तक पहुँचते पहुँचते राजा की स्थिति इस हद तक पहुँच गयी कि उसने पशुच धर्म बौद्ध धर्म का छोड़कर ईसाई धर्म स्वीकार कर लिया और उसका नाम नामकरण 'डाम ज्ञान-परिय-बन्धारा' हो गया ।

बयोनिष्ठ अत्याचार

भारत में उस समय मन्त्र का शासन था और बहो पर शास्त्र की नीति को अपना कर पशुच मन्त्रा प्रचार करने थे । सिद्धम में जो शक्ति भी उठी के हाथ में थी । इस शक्ति का दुर्गुपयोग उन्होंने सिद्धम की जनता को निर्मार्द बनाम में शिम प्रसार में किया इसे दारुण मन्त्रमन्त्र के शास्त्र में मुनि—

१ ३० - जी० पी० मन्त्रमेकर, "ही पालि सिद्धमेकर आठ लीपोन"

“पोर्तुगीजों के आगे का प्रतीक कबमें नूट, घमण्डिता कूटा, और और किसी यूरोपीय उपनिवेशिक शक्ति के उपलब्ध इतिहास में अनुमनीय अमानुषिकता से भाषित था। उनकी क्रूरता एवं अत्याचारों के प्रति उपेक्षा उनकी सैनिक सफलता के साथ ही बढ़ी। उनका अमानुषिक बर्बर व्यवहार ने स्त्री पुरुष और बच्चे का मेह नहीं रखा। अपनी प्रजा को भयभीत करके तथा पोर्तुगीज-बस के प्रमुख को समझाने के लिए उन्होंने ऐसे अत्याचार किये जो उनके अपने इतिहासकारों द्वारा यदि बहाय्यी के भीतर ही अभिलिखित न होते तो उन्हें सच न माना जाता। बच्चे सैनिकों के नामा पर टांगे जाते थे जिसमें उनके माँ-बाप दिग्गु की जाबाब चुनें। कभी-कभी दो पत्थरों के बीच उन्हें पीसा जाता और मस्ताजों को यह दुष्प्रयोजन के लिए मजबूर किया जाता।

कभी-कभी पुतां पर से लक्ष्मी में आश्रमियों को मगरों के आघ-रूप में सैनिक मनोरंजन के लिए फेंक दिया जाता था। मगधों की यह आदत ही गयी थी कि वे मीठी की मुठते ही अपने मुँह को पानी के ऊपर कर बैठे। अम अमली राजा के जो भक्त थे उनके सर्वस्व को हर लिया जाता। जो पोर्तुगीजों का पक्ष करते उनका स्वागत होता और उन्हें मन पर और नृनि ही जस्यी। गाँव के किसान इतने सतप्त जाते थे कि वे अक्सर अपनी जीवनापयोमी चीजों के लिए अपने बच्चों को बच डालते थे। पोर्तुगीज अफसर बाकुमा ग कम नहीं थे लोग अस्तिपों को छोड़कर भाग गये थे और अविश्वर मृनि बिठा नुठी रह गयी थी। सबसे बुरा यह था कि पोर्तुगीजों ने सिविल के राष्ट्रीय धर्म को मरुट कर देने का निश्चय कर लिया था। ‘सौम जोशी तृतीय’ उन समय पोर्तुगाल का राजा था तथा वह शैवोलिक धर्म का अर्चन समर्पक था। वह अपनी काफिर प्रजा के धर्म परिवर्तन के लिए घमण्डितापूर्व आग्रह रखता था।”

भुवनेश्वराहु न अपने पुत्र धर्मपाम की मूर्ति पोर्तुगीज राजा के पास राज्याभिषेक पाम के लिए मारी। यह प्रार्थना इन शर्तों के साथ की गयी कि सिविल राजा के राज्य में बार्दिकिन के प्रचार की शूट हो। धर्म

रबार पर पोर्तुगीजों का सबसे अधिक ध्यान था। हिदायत थी—“उपदेश गुरु करो पर यदि उसमें सफलता न मिले तो तलवार से फैसला हो।” पोर्तुगाल के राजा न १५४९ ई० में भारत (गोवा) के वाइसराय को बिट्ठी भेजी—“मैं तुम पर भार बता हूँ कि तत्पर अफ़सरा द्वारा मारी मूर्तियाँ का पता लगाओ उन्हें टुकड़-टुकड़ कर डालो। उन सागों का सिमाफ कड़ी सजा पापित करो जो मूर्तियाँ का गड़ने हासन तथा निरप करन का काम करते हों। अथवा जो भानु, पीतल सबड़ी मिट्टी अथवा किसी दूसरी चीज में मूर्ति बनात हों उनका सिमाफ भी कागडाई करो जो विदेश से मूर्तियों को पात हों। जो काफिर खुस अथवा गुप्त रीति से अपन उत्सव आदि करें उनका बिकर भी कडा रुख अख्तिवार करन के लिए हिदायत थी।

उसका आदेश अक्षरशः पाला गया।

जो भी काफिरा के धर्म-गरिक्वर्तन करन के विरोध करन की मुव्ठता करता बहु पोर्तुगाल के राजा के कोप का साजन होता।

राजा धर्मपाल भी अपनी रानी के साथ कैथामिक ईसाई हो गया। रानी का नाम 'बाना बनेरिता' रला गया। पोप न भी राजदम्पति को अपना आशीर्वाद भेजा। सिंहमबासों न पोर्तुगीजों और दासकों ग बचन के लिए पोर्तुगीज नाम अपनाय। परेवा दमित हस्ता आदि उसी समय के अवधार है। नाम रखन में प्राण तथा धर्म बर्धे तो क्या न ऐसा करले। उस समय मिरन के सोम मो-मांग का हिन्दुओं को ही तरह अमन्त्र मानने थे। पर उसको कसौती बना कर पादरी बहीं मिर न काटें इमलिए उन्हाने इमे भी मध्य मान लिया।

पोर्तुगीजों न आसी इग धर्मग्यना की पूति के लिए कोई उपाय बाकी नहीं रला। बिहार भूमिगत कर निय मय। पुस्तकालयों में आय सगा दी गयी। पुस्तका के पत्रों को हवा में उड़ा दिया गया। जो पूजा रगता या अपना मिसु वा पीताम्बर पहनता या उसे मीन वा सामना करता पड़ता। 'ठीण्णमुब' और 'काएत' के बिहार, जो मानन्दा तथा विजमण्डा की

परम्परा के प के मिश्रु मार जाने गये । इस प्रकार से राजाधिराजों के काम को कुछ ही वर्षों में समाप्त कर दिया गया ।

परन्तु सिद्धन्त-निवासियों ने विशेषकर पहाड़ों में रहनेवालों न पोर्तुगीजों को ज़ाराम से नहीं पीन दिया और इस संगठन में 'सिन्धुसमन्त' (कैंगी) के क्षेत्र के लोगों का विशेष हाथ रहा । प्रारम्भ से ही इस सम्बन्ध में बेदामकत लोगों की दृष्टि रही और उन्हें तभी साँस-में-बाँस ज़ायी जब उन्होंने १५० वर्षों के पदचात् पोर्तुगीजों को द्वीप छोड़ने के लिए बाध्य किया । इस कार्य में राजवंश के 'सीतानक' के 'यामाहुन्न और उनका पुत्र 'टिकिरि बाध्याय' का विशेष प्रयत्न रहा । प्रारम्भ में इसका नेतृत्व इन्हीं साँस म किया । 'टिकिरि' ने तो १३ वर्ष की अवस्था में ही सेना में प्रवेश ल लिया था और प्रारम्भ से ही उसे विजय तथा यश प्राप्त होना गया तथा उन्हें 'राजसिंह' का खिताब हासिल हुआ । इस नाम को सुनकर ही पोर्तुगीजों का बिस कांपने लगता था । बीरे-बीरे प्रत्येक स्थलों पर उसकी विजय होती गयी और वह जिससे शासक का स्वामी बनकर कैंगी क्षेत्र पर भी आक्रमण करने में समर्थ हो गया ।

कैंगी के राजा ने पादरियों की बुलाकर अपनी राजधानी में मित्रता बनवाया और यह स्वयं भी ईसाई होना चाहता था । राजसिंह ने इस पर अधिकार कर लिया । पर राजसिंह द्वारा बौद्ध धर्म का यह समर्थन बहुत ही सक्षिप्त रहा । बात यह हुई कि कैंगी की विजय के पदचात् मरान्ध होकर उसका अपन हाथ से ही अपने पिता की हत्या कर दी । इस पाप से पृथ होना के बारे में उसने मिश्रुओं से पूछा । उन्होंने इनका यह उत्तर दिया कि पितृनाश बहुत बड़ा अपराध है और इससे गुड़ होना अव्यक्त बर्तन है । यह उत्तर सुनकर वह बाम-जबूसा हो गया । उसकी बसा बैसी ही हा मयी जैसे बंड से बर्तन आशीर्षि की । वह भयंकर रूप से बीड-विरोधी हो गया और बिहार को प्यस्त करने पुस्तकों का बनाने तथा धर्म की धर्म करने का कार्य उसने प्रारम्भ कर दिया । सिंहम में आज भी प्राचीन पुस्तकें प्राप्त नहीं होनी इसके कारण पोर्तुगीज कैंगीसिंह पादरी तथा राजसिंह से

सेनों ही हैं। राजसिंह से प्राप्त बचाने के लिए के डर के भारे मिश्रकों ने अपने बीच-बीच उतार दिये। बीर विक्रम (१५४२ ई०) ने बहुत-से घामिक प्रन्वों की प्रतिनिधि पर्याप्त धन सर्प करके करवायी थी। अब वे सभी बमकर साफ हो गयीं। राजसिंह स्वयं शैव सम्प्रदाय का अनुयायी हो गया और उसने 'समस्तकूट' पर्वत पर स्थित 'श्रीपाद' की शैव संग्यासियों को दे दिया। राजसिंह की मृत्यु १५६२ ई० में हुई।

राजसिंह का उत्तराधिकारी 'बिमलधर्म सूरिय' हुआ और उसने १२ वर्ष तक, अर्थात् १६०४ ई० तक राज्य किया। वह पोर्तुगीजों में ही रहता था और उन्होंने उन ईसाई बना कर उसका नामकरण 'बाम जायो' कर दिया था। पर कार्य-जैसा में उसने ईसाईयत छोड़ दी और पोर्तुगीजों से स्वतन्त्र हो अपने उपयुक्त नाम से ही पहचानी शत्रु की राजधानी कंबी के राजसिंहामन को उसने विमूर्षित किया। पर वह तथा उसकी रानी पोर्तुगीजों के बीच में रहे प और यूरोपीय सहानुमूति उनमें विद्यमान थी। अतः कंबी सरकार में पोर्तुगीज वसतभूया की नकल होने लगी। पोर्तुगीज नाम भी सामन्तों में साधारण होल गये और अब तक यह सब सिहमी जीवन में मूनाधिकर का में वर्तमान है। पर इन बाह्य प्रभावों का 'बिमलधर्म' की शत्रुओं के प्रति नीति में कोई असर नहीं हुआ और वह अटल ही रही। बीछ धर्म के प्रति आस्था का अम्युदय हुआ और राजसिंह द्वारा किये गये धर्मसा-रमक नायों की पूर्ति की ओर उनका ध्यान गया। पोर्तुगीजों तथा राजसिंह के अत्याचारों के कारण परिस्थिति यहाँ तक पहुँच गयी थी कि देस में ऐसा कोई भी भिन्नु मुमन नहीं था जिसकी उपममपश ठीक से (बायसे से) हुई हो। अतः इसको पुनर्जीवित करने के लिए राजा न 'रक्षरङ्ग' (अरकन) देस से परम्परागत भिन्नु-समुदाय को आहूत करने के लिए अपने राजदूत का भजा। यह उद्देश्य सफल रहा और स्पष्टिरे 'नन्दिपवक' की अम्यराता में लंबा में भिन्नु-समुदाय का आगमन हुआ। 'महाबलीगङ्गा' के तट पर 'मगन्दाय को नीमा मानकर सिंह के सम्भ्राण्य परिवारों के वितने ही कुन्तुन भिन्नु हर और इससे प्रजा बहुत ही आनन्दित हुई। 'रन्तपातु' की

भी प्रतिष्ठा एक विमलिता बिहार बनवाकर कून्डी में की मयी और श्रीपाद के भी अधिकारी बौद्ध बनाय गये ।

'विमलधर्म' की मृत्यु के उपरान्त उसकी रानी 'बीना कतेरिना' साम्राज्ञी हुई, पर 'सनरत' नामक एक सक्रियशाही व्यक्ति ने गद्दी पर अधिकार कर लिया और इस रानी से अपना विवाह सम्पन्न कराया । यद्यपि इसके समय में देश कुछ क्षान्ति में दृष्टिमोचर हुई, पर वह भी पोर्तुगीजों से सड़ता रहा । अथवा १६३० ई० में पोर्तुगीज सेना को उसने बुरी तरह से हराया । उनका समापति माया गया और सेना भी बहुत संख्या में ध्वस्त हुई । इस प्रकार से पोर्तुगीजों की शक्ति निरालत निर्बल हो गयी ।

सनरत के पश्चात् उसका पुत्र 'राजसिंह द्वितीय' गद्दी पर बैठा । उसने भी मार्च १६३८ ई० में पोर्तुगीजों को भयकर रूप में परास्त किया और उनके मूलोद्धार के लिए इषाओं को आमन्त्रित करके उसने सन्धि भी की ।

धर्म की स्थापना (अवकाश) (१६५८-१७८६ ई०)

इस लोगों में पोर्तुगीजों की बर्मान्विता नहीं थी यह इसी से स्पष्ट होता है कि कौटिली भी राजसिंह ने जब संघ को फिर से स्थापित करने का विचार किया तो इषा का इसमें पूर्ण सहयोग रहा । इस समय बीच क पहली दत्ता के कंडो के राजा के हाथ म म बार इतको राजधानी केराया थी ।

कौटिली भी राजसिंह के पक्षसे विजय राजसिंह न स्वाम से मिदुमा की पान के लिए दूत भज पर राजा बीच में मर गया । पहिली बार क मत्र दूत भी मौला बुर्पटना में मर गय । दूसरी बार दूत भेजने के लिए अहाज इषां न दिया । राजसिंह द्वितीय क बाद कौटिली भी राजसिंह गद्दी पर बैठा । इषाओं ने दूतों को स्वाम में भेजकर राजा की इच्छा जाननी चाही । राजा न ^{के १५२५} स्वाम के राजा धामिक न दूतों का स्वागत किया और यह उत्तर गुन ^{के १५२५} । स्वाम के राजा धामिक न दूतों का स्वागत किया और जैसे उच्च सं धारण के स्थापना के लिए सहमता बन की इच्छा प्रकट की । और बिहारों को ध्वस्त के उपाधि स्पष्टि के नेतृत्व में मिधु भेज । १०५३ ई० में पहुँचकर उन्होंने सराकार्त आदि मिहल का कार्य उसने प्रारम्भ कून्डी में पहुँचकर उन्होंने सराकार्त आदि मिहल मिदु बनाया । प्राण नहीं होती इसके क

सातवाँ अध्याय

७ संघ की पुनः स्थापना

सिंहल देश में क्षुद्र भिक्षु संघ की पुनः स्थापना १७२१ ई० में हुई और स्वविरबाह तथा पानि वाङ्मय के अभ्युदय ने एक नया मोड़ लिया। ताल्पतिक सिद्धन्त सम्राट् कीर्ति श्री राजसिंह की सहमता से इसे सम्पन्न करने वाला मंत्रराज 'सरत्तकर' थे।

(१) सरत्तकर सम्राट्—धर्म के नैसर्ग का अपनी पीढ़ियों के लिए पुनःस्थापन प्रस्तुत करने तथा प्रायः अस्तावसान की प्राप्त धर्म-सूर्य की उदय-नामिका का पुनः दिग्गमन कराने में अपना अपूर्व योगदान इन्होंने दिया और मन्त्रकाराच्छासन की संघ के इतिहास से विद्याकाश में स्थित एकाग्रो गणत्र की मूर्ति झूलने लगे थे। इनके हृदय की प्रकाश से अमुना भी यह हीन देखीप्यमान है। इनका जन्म ई० १६१८-१९ में कौन्डी के ही मनीष स्थित 'बलिबिट' ग्राम में हुआ था अतः 'इन्हें बलिबिट सरत्तकर' भी मंत्रा प्रदान की जाती है। १६ वर्ष की ही अवस्था में ये 'सामगर' हुए तथा स्वविर 'मूर्तिपयोद' का शिष्यत्व स्वीकार किया।

य बहुत बड़े विद्या व्यसनी तथा अत्यन्त 'सामगर' थे। प्रारम्भ से ही ताल्पतिक सम्राट् से इन्होंने अपना सम्बन्ध स्थापित किया और संघ की पुनः स्थापना तथा उसे सुदृढ़ करने में अपना हाथ डेलाया। उस समय पानि के अभ्ययन तथा अभ्यासन का बहुत ह्रास हो गया था। बहुत कम भिक्षु या भूष्य एते थे जिन्हें पानि का माधारण मात्र था। अतः पानि भावा क अभ्ययन में रत हीन पर इन्हें सबसे बड़ी कठिनाई यही हुई कि एक व्यक्ति ही नहीं सुमन्य थे जो उन्हें पत्रान की योग्यता ररत हों और पानि भावा क गान के बिना बुद्धोपदेशों को समझना असम्भव ही था। पानि नया उन्मत्त अभ्ययन के यह अवस्था थी कि इनके विनी

भी व्याकरण की कोई भी पूर्ण पुस्तक प्राप्त नहीं थी। इन्हीं परिस्थितियों में सरलंकर ने अपना अल्पयन प्रारम्भ किया। इन कठिनाइयों का सामना करते हुए मन्वुबक 'सामनेर' में अपने उद्देश्य को पूर्ति के लिए जनक स्वामी की यात्रा की और अपना अल्पयन 'बालाबवार' नामक पाणि व्याकरण को प्रथम पुस्तक से एक मुहस्य का सिष्य बनकर प्रारम्भ किया और इसकी पूर्ति बलेशस्त्री 'सामनेर' के द्वारा की। अल्पयन पूर्ण होने पर बर्म के सन्देश का प्रचार बड़ी सतत के साथ इन्होंने सम्पन्न किया और इसके लिए देश के मुहुर भायों की भी यात्रा इनके द्वारा की गयी। साथ ही श्रोताओं का क्या कर्तव्य है तथा उन्हें इसकी पूर्ति के लिए क्या करना चाहिए, इस सम्बन्ध में भी इन्होंने अपने उपदेश दिए। य बड़ ही उदार, सीधे स्वभाव वाले तथा अत्येष्ट्य थे। प्रायः काल उन्हें जो मित्राटन में प्राप्त होता था उसी से इनकी सन्तुष्टि थी और इसके कारण इनका नामकरण 'विषय पाठिक सरलंकर' भी लोगों ने कर दिया था।

बीड़ बर्म एवं सब की प्रतिष्ठा में सम्राट् की य सदा उत्साहित करते रहे। सम्राट् ने मित्रुओं की भवने के लिए स्वामिके राजा के पास जो प्रतिनिधि भेजना चाहा था और यह उस देश के सम्राज की जो पत्र में गया था उसे पाणि में इन्होंने ने ही लिखा था। उस प्रतिनिधि मंत्रम के सदस्यों का चुनाव भी इन्हीं की राय से हुआ था और इन्हीं के उत्साहों से यह प्रतिनिधि मंत्रम अपने उद्देश्य में सफल हुआ। मिहल में जब पुनः 'उपनम्यदा' का प्रारम्भ हुआ और राजा ने इसकी स्थापना करने में सहायता प्रदान करनेवालों के इत्यादि का मुचमान करके उन्हें अनेक उच्च उपाधियों से विभूषित किया तो सरलंकर के कार्यों की भी अपूर्व सराहना उनके द्वारा की गयी और वे लंका के संघराज बनाये गये। इस पद पर रहते हुए बीड़ बर्म तथा पाणि भाषा के अल्पयन की दृष्टि में रचकर इन्होंने अनेक सुचार किए।

मित्रु-मंत्र के समाज में मिहल में विद्या का नाम होना स्वाभाविक ही था क्योंकि बड़ी परे इमना सम्पूर्ण भार मित्रुओं पर ही था। मित्रु-मंत्र ही मयाज की गिरा के लिए उत्तरदायी था। समाज न उनके आधिक /

जीवन को व्यवस्था कर दी थी और ब विद्या का भार निमाते थे । वहाँ पर ब्राह्मणों की भाँति कोई ऐसी गृहस्थ व्यवस्था नहीं थी जिसकी जीविका का पूरा भार निर्विघ्न कर दिया गया हो । अतः समाज को शिक्षित करने के लिए संघ की अत्यन्त आवश्यकता थी और संघदायक संरक्षण एवं उनके अल्प महयोगी विभुओं की सहायता से संघ में अपने इस उत्तरदायित्व को पुनः संभाला ।

इनकी इतिवृत्तों में 'अभिसम्बोधि-अलंकार' तथा अन्य कृत्कर पद्यादि हैं—

अभिसम्बोधि-अलंकार

“बस्तुत्रय (बुद्ध धर्म तथा संघ) को समस्कार करके जनय (निर्वाण) को मुलम करके रत्न-वपनासक (बुद्ध) न बीमे बन्धामय (बोधगया) को प्रत्य किया बैठे ही (अपना जमी प्रकार से बर्षन प्रस्तुत करते हुए) मैं 'अभिसम्बोधि अलंकार' नामक ग्रन्थ को रचना करूँगा ।

साग कल्पों तक जिन्होंने विपुल पुण्य का सम्पादन किया था जो निरन्तर विमत धीम से अर्बुद अल्प-स्वल्पता थी तथा जो बर हाम से बृत्त थीं, उन माया देवी की बुद्धि के स्मृतिपुष्प ब (बोधिमत्त्व) उत्पन्न हुए ।

सम्पूर्ण मणि क मध्य (विद्यमान) स्वर्णकार की भाँति माता के तानुर्बन्धक बम माग तब उनकी कुटि में निवास करते हुए, इनकी समाप्ति के परवाना—

बैराय पूर्विका की विद्याया मन्त्र में पट्टह पढ़ी के बाद मयमकार की द्वाद के सुगन्धित मयन बन की भाँति सबिब श्रमिद मुम्बिनी नामक उद्यान में अयन पुष्पित मङ्गलमानकुण के नीच पाया पट्टह बन लगी माता की कृते म (बोधिमत्त्व म जगम प्रण किया) ।”

बुद्ध-रूप अर्पण

“उस समय तटस्थान का बग्ग मन्मूनें नाट का प्रमत्त कर रहा था (अनेक मन्मूनें) मन्मूनें में पूर्ण गरीर मुन्दर मन में सुपन्न हुआ था;

(बोधिसत्त्व का) बहू चरण सम्पूर्ण देवताओं तथा मनुष्यों के सिरों का जलकार-स्वस्व था तथा बनेक मुर-गरों के बयभोप से मुक्त था ।

तमाम जटा की आमा के समान गुमीम कैयबाले पूर्ब चन्द्र के आकार के सौम्य मुखवासे सुपुष्पित नील कमल के समान मीम नेत्रबाले इन्द्र धनुष के समान टेढ़ी भौहोंबाले

मुरस्त बबरीं से सोमित, कुन्ध पुष्पों की उपमाबाले हस्तपङ्क्ति से सोमित मुष्कु मलमा से सुसोमित कटि-मण्डेसबाले हाथी की सूङ के समान बरी हुई दोनों बाँहोंबाले बलय तथा मणि-मुक्त उज्ज्वलमान पाशों बाले महाकर के चूर्ण के समान चरण कमलबाले

(बोधिसत्त्व ने) नेरञ्जना' नदी में जा बालू में पत्र रखकर, पुन म्नाग करके (पायास का) उल्लास प्राप्त बना उसे बध्नी तच्छ पहन करके ऊपर धार में पाच फेंक दिया ।

मूठ, म्नाग बण्डे बड़ समुदायबाले सीबे पने बने मोर के पुच्छ के समान नील बबल पत्रबाम चंचल रक्त पल्लव की सोभावासे

मन्दबायु से कम्पित धाम्गाबाले भूमि के तिमक से सहज स्वेत स्वम्ब बाल सर्व मुनिपों से सेवित महीरहू नाम से प्रसिद्ध अपनी दया की भाँति घोटन छायाबाले उस श्रेष्ठ बोधि-बुद्ध के पास पहुँच कर, तीन बार प्रशिक्षा करके सामने (स्वित) बुद्ध-मदेस की (जन्होन) पहुँचाना ।”
फुल्लकर

मझाद् नरेन्द्र सिंह की प्रशंसा में इन्होन लिखा है—

“ब्रह्मलोकाधिपति ब्रह्मा मुरपति देवराज राज स्वर्ग में सिंह-राज की पाचना करके (उनकी आजा से) मम्म-अपन विर पर मुकुट धारण करना उचित है (ऐसा सौबकर) राजा द्वारा प्रदत्त रत्न-अभित धानु वेदिना से पुस्त होकर, बुद्ध की (बही) स्थापना करके मुर-गर और मम्म-कन वर्णन करते हैं ।

जिन बंग में 'पञ्चा का कर्तव्य क्या है' इसका ज्ञान है जो गुणत
ब्रह्मर का मुख्य मूर्ध बंग है उनी बंग में भरपति प्रवर मिहलन्द्र तुमने
ही जन्म प्राप्त किया। महर्षि शास्त्रा बुद्ध के मार्ग की तुम्हारे विना-विना-
शक्ति म प्रकृत किया।

इस प्रकार स एव बन मुनि (बुद्ध) के मम के चिह्नित कर मने
बुद्ध हैं, मेरा धर्म है, मेरा संघ है मैं धर्म में प्रवृत्त हूँ (मादि साम्पादां म
मुक्त होते हुए) दान आदि अनेक पुण्य तथा स्वर्ग की मांति गुणत बुद्ध की
महा से प्रसंगा करते हुए तुम अन्धकार समूह-स्त्री पात्र-मनुह के, मूर्ख की
मांति ध्वस्त करने हुए इन जाड़ अविश्व पञ्चम क्यों तब (इस देश) की
रखा करो।

चारों देवराज (महाराज) महामतपन (इन्द्र) और मारुत्तन आदि
के देव प्रजापते राज-निज (कर्बरा) मौतरी-बाहरी राज मष्ट हों। बापु
हम विपुल पद और बस देकर, उनके माप पामन करते बापु शत्रु के
उपि की भांति राज-तेज प्रजाप म पुक्त होकर (तुम) कल्प भर जीवो।"

(२) फिरेष—२ नी इसी क्षण में हुए। इसकी इति निम्नम
माला है—

"वेणु परमपत्र गुणत पुत्रवीय मता बुद्ध ने संसार में विचरना करने
हुए दानादि मपूर्ण चारुमिठाओं का पूर्ण कर, बोधि बत क नीचे माग की
सेना का पराम्प कर मर्क-मद को आ प्राप्त किया उन उगम त्रिन के यष्ट
'दन्तपातु' की ये बलना करता हूँ।

(३) हीरदिकम्बूरे मुमङ्गल—यें नपरात्र के शिष्य स। राजा
के प्रस्ताव पर 'विनिष्पयम्ह' (विनिष्पयस) का विह्वली अनुवार इन्होंने
प्रस्तुत किया था। एष्य के बल में ये बाबाएँ हैं—

"बुद्धराज के परिनिर्वाण के सा हजार मात ही बीस वर्ष बाद वेणु
बुद्धबर्न के मुनिनिष्ठिन रमवीय बीड मयापम से सीमापमान बंरा में
सर्गे गंड मे मात्वर केगी नगर में लौटानान की सीधि की राजनिष्ठ

को पीतमे में सिंहराज के समान समुद्रमूहस्वी नागराज के लिए यक्षराज के समान भीर 'सरसंकर' संवरराज शोभायमान हैं।

उनके अग्रवर सिष्य 'अत्तराजाम' निवासी 'अच्छार राजमुर' के नाम से प्रसिद्ध थे। यह छापर के समान गम्भीर शास्त्रराशि को बालक करने-वासे थे। उनके अग्र सिष्य सुमङ्गल स्वबिर थे।

उन्होंने मूलभाषा (पालि) में अर्म रस से युक्त गम्भीर एवं अरुण अर्थ प्राप्त से बह स्थित उस 'मिसिन्धपण्ड' को पूर्य बुद्धि से विसेपक सिहसी भाषा में किया। यह अर्म का अर्थ श्रम के लिए अमृत रसायन बन गया।"

आठवाँ अध्याय

८ आधुनिक युग

सम्राट् राजपिराज

श्रीति भी राज के पश्चात् यही कंगड़ी के सिंहासन पर बैठा। इसे भी पूर्व सम्राट् की ही शक्ति धार्मिक कृत्यों तथा विद्या आदि से प्रमत्त था और इनके सम्बन्ध एवं प्रवृत्ति में उसे ज्ञानन्त्र आता था। उस समय सम्राट् के विचारों का मूल्यांकन इन्हीं के हाथ में था। अन्तिम सिंहासन राजा प्रसिद्ध बंग के ये और विवाह सम्बन्ध के कारण ही यही के अधिकारी हो सकें। उत्पन्न होने के लिए उनका लिए यह परमात्मिक था कि बौद्ध धर्म तथा उनकी भाषा पालि के प्रति अधिक अनुमान का प्रदर्शन करें। राजा इन सम्राट् ने भी इसी मार्ग का अनुसरण किया।

उस समय मार्ग में स्थित अंग्रेज यह नहीं चाहते थे कि उनका अधिकार से केवल २० मील ही दूर इन्हीं का सामन्त स्थापित रहे और यह बात बहुत दिना से उन्हें लटक रही थी तथा इसे समाप्त करने के लिए वे मौका ढूँढ़ रहे थे। १७६३ ई० में श्रीति भी के समय में ही उन्होंने अपना पूरा कंगड़ी भेजा था जो सिंहासन सम्राट् के प्रति शक्ति-प्रस्ताव की लहर गया था यद्यपि राजा ने इस प्रतिनिधि से ठीक से भेंट की पर शक्ति के सम्बन्ध में कोई विचार कम नहीं हुआ। १७६६ में हार्नबर्ट अंग्रेजों के विरुद्ध युद्ध में लगे रहे युद्ध में सम्मिलित हो गया और सिंहासन में इन्हीं का हमला के लिए समाप्त करने का यह अंग्रेजों के लिए स्वर्णवस्त्र था तथा उन्होंने यही भी इन्हीं के विरुद्ध युद्ध घोषणा की और अपने अहंकार में मग्न हुए। १७६६ ई० में बर्नार्ड स्मिथ कोलम्बो के सामने मेला लकर पहुँचा और उन्हें आपीतता स्वीकार करने के लिए कहा और १६ फरवरी १७६६ ई०

में क्रौसम्बो पर ब्रिटिश संघा सहृदयने लगा क्योंकि इस दिन उर्षों ने अंग्रेजों की सभी शर्तें मंजूर कर ली ।

सिंहल के सामन्तों ने आगे बसकर आपसी पड़पण्ड द्वारा कैंडी पर भी अंग्रेजों के अधिकार को जमाने में सहायता दी । भी विक्रमराज सिंह अन्तिम सिंहल राजा था । तात्कालिक प्रधान मन्त्री किसी भी प्रकार से उसे समाप्त करना चाहता था और इसके लिए अनेक पड़पण्ड उसने किये । इन सबका राजा के खरिब पर बहुत व्यापक प्रभाव पड़ा । उसके मस्तिष्क की क्षास्ति समाप्त हो गयी तथा बुष्ट साधियों ने इसी बीच गम पतन करन की संलाह देकर उसे सरास पिमाना भी प्रारम्भ कर दिया उसका जीवन खोर रूप से पतनोन्मुख हुआ और वह रोमाञ्चकारी खरयाचारों की ओर प्रवृत्त हुआ ।

इससे प्रजा में बिद्रोह की भाग सुलगी और सिंहल के प्रधान मन्त्री तथा ब्रिटिश गवर्नर मार्श ने इसका साम बठानर २ मार्च १८१३ ई. को सिंहल की स्वतन्त्रता सबा के लिए समाप्त कर दी और सम्पूर्ण देश पर अर उनका अधिकार हो गया । जिस अन्वि के अनुसार सम्पूर्ण द्वीप के शासन सूत्र पर अंग्रेजों का एकाधिकार हुआ उसमें स्पष्ट रूप से यह स्वीकार किया गया था कि बेबीड परम तथा जाचार-बिचार में दक्षत नहीं होंगे और सबा ही इनकी रखा करेंगे । पर प्रारम्भिक दिनों में अंग्रेजी शासन ने भी ईसाई प्रचारकों के साथ अत्यन्त सहानुभूति रखी । ईसाईयत का जिन कूटा और बर्बरता से पोतुमीजों ने सिंहल के बसास्वस पर बलपूर्वक जमाया था और जिस प्रबलचना के साथ उर्षों ने कूटा को छाड़कर अन्धर ही अन्धर अस्तन संदर्भन किया था उन मोह को अंग्रेज आति भी न छाड़ सही और अन्हाने प्रारम्भ में बस्तुस्विति का ही बनाय रखना चाहा तथा अरनुसार अवन शर्ष भी किये । गवर्नर टामस मैटसैड न चाहा कि सरकारी पर्षा के लिए ईसाई हीने की शर्ष हटा दी जाय पर इस प्रस्ताव का विरोध तात्कालिक 'बिकरटी आफ स्टेट' न किया और यह कार्यान्वित नहीं हुआ । अर मिसरी तोप स्कूत खोलकर ईसाईयत का प्रचार करन सवे और स्कूतों में जो अर्षे

विद्या ही जान लगी जयमें सबा ही इन भावना का घूट रहा करता था कि उनका अपना धर्म हास्यास्पद विस्वासा से आलसप्रोक्त है। इससे विपरीत ईसाई धर्म ही स्वयं मन्मथा का प्रतीक है। यह भावना भी उनमें घूट-घूट कर भरी जान लगी।

इसके विरुद्ध मिहल निवासिया में विचार जागृत हुए और इसका विरोध करने के लिए पारसिया ने मिहल-साहित्य तथा पाणि-शास्त्रमय की कर्मियों का बतलान के लिए इनका सम्पत्त भी प्रारम्भ किया। इसके पदबाध के इन निष्पत्त पर पहुँचे कि बीड़ पुस्तक केवल कृदा-करक नहीं है। यद्यपि प्रारम्भ में यह कार्य संइन-मइन के लिए ही शुरू हुआ पर इनमें एक नया माह्र लिया। उबर स्कनी में पड़ मिहल लक्ष्मा में अपने मूलधर्म तथा परम्पराओं के प्रति सम्मान की भावना का जागरण हुआ और वे स्थान-स्वात पर मिहलियों द्वारा अपनी आस्थाओं के प्रति विषय काक्रमों का बबाह बेन लप। अपने-अन्य विहारों में 'उतोमप' के लिए एरविश मिहल ही मिहलियों द्वारा बीड़ आस्थाओं के प्रति प्रकट विषय गव प्रहारों का बसा उनी प्रकार की उडनात्मन रीनी में प्रस्तुत करने में प्रवृत्त होन लग। इसी समय 'बोहीट्टिबत गुमानन्द' नामक एक लक्ष 'भामनर' का पशरीन हुआ। इन्होंने ईसाई शास्त्रों का मति यन्त्रीर सम्पत्त किया और उनमें पारसिया हल के पदबाध के लिए मिहल रिया की ललकारन लग। इनकी भाषा में यह भीम भीम तथा प्रतिना थी कि उनके समय परबाधियों के लक्ष सम्पीन्धन की कति भल्ल हो लप। उन्होंने ईसाई पारसिया को लुन आम लान्कार के लिए ललकारा। परन्तु तो इन लोगों ने इस लक्षन 'भामनर' की बबहुलता की परम्पु इनमें इनके उपाह में कोई बमी नहीं जायी और बुडागम के प्रलर लेज से रेरीन्धमान तथा ईसाइयों के शास्त्र-लक्षन में पूर्ण दीक्षित गुमानन्द ल 'भानदुर लान्कार' के लुन काम बनना के बीच १२७३ ई० में पारसिया का एका पणल किया कि लणुषं मिहल में एक बार पुन शास्त्रा के भाषनों का ललकार लूँ गया तथा बोडोरेण के लान्दि-लोल के प्रवाह से लक्ष हीन

की विचारों प्रचलित हो चठीं और सर्वत्र बौद्धविनाय की विजय बीजयन्ती फहरा बयी ।

इस प्रकार एक बार पुनः बुद्ध-सन्देशों से सिंहल बस की बामु सुमनित हो गयी और आधुनिक युग में बीस धम एवं पालि बाह्यमय के सम्मुख की लहर सम्पूर्ण देश में दौड़ पयी । अपना सर्वस्व देकर लोगों ने मुनानन्द को उनके उद्देश्य की पूर्ति में सहायता प्रदान की और बौद्ध धर्म के पुनरुत्थान के लिए आवश्यक सामग्रियों—शिक्षा, उसाह तथा प्रेस—की जोर लोगों का विशेष ध्यान तथा इनकी सुलभ करने में लोग लगे मन और बन से जुट गये । ईसाइयों के ही अपने कई प्रेस थे और उनसे मोहा मन के लिए बौद्धों ने अपने प्रसों की स्थापना की । स्वाम के सम्बन्ध में प्रेस स्थापना में प्रचुर बन देकर अपने अपूर्व सहयोग का प्रदर्शन किया और 'सङ्कोपकार प्रेस' नामक प्रथम प्रेस की स्थापना 'गाम' में १८६२ ई० में हुई । मुनानन्द ने रोमन कैथलिकों के गुरु 'कोट्टम' को अपना प्रमुख बुद्ध बनाया और वहीं पर शायकों की सहायता से 'सर्वज्ञ-शासनाभिबुद्धि-प्रेस' नामक प्रस की स्थापना की । बाद में आगे चलकर इस प्रकार के अनेक प्रसों की स्थापना हुई । इसके पश्चात् बौद्ध ग्रन्थों के प्रचारार्थ प्रकाशन का कार्य प्रारम्भ किया गया और सर्वप्रथम इसके लिए 'मिलिन्दपञ्च' की सिंहली अनुवाद के माध्यम प्रकाशित करने के लिए बना गया क्योंकि विरोध-पक्ष के लक्ष्य एवं अपने पक्ष की स्थापना के लिए यही पालि का सर्वोत्तम ग्रन्थ है । इसका प्रकाशन १८७७-७८ ई० में भी मुनानन्द के ही सम्पादन में हुआ ।

मुनानन्द के शास्त्रार्थ की जोर 'पियोसाक्रिकस सोसाइटी' के संस्थापक अध्यक्ष जर्नेस हेनरी स्टील आल्फाट का ध्यान आकर्षित हुआ और वे भी बौद्ध धर्म की जोर आह्वय हुए । वे सभी धर्मों का ध्यायक समन्वय चाहते थे और मानव के आध्यात्मिक विकास में बौद्धोपदेशों के महत्व का अनुभव करते हुए उनके मूल अध्ययन के लिए वे सिंहल आये । वहाँ बौद्ध धर्म-विषयक अध्ययन में रत होकर पास्ता के उपदेशों के बूझ तरवों से वे अत्यन्त प्रभावित हुए तथा सिंहली बौद्धों से उनकी प्रगाढ़ मैत्री स्थापित

हुई तथा उनके शिक्षण में १८८० ई० में कासम्बों में 'बुद्धिस्ट विद्योत्पादकालन सोसायटी' की स्थापना हुई ।

इस पुनरुत्थान की महूर ने यूरोपीय विद्वानों को भी पर्याप्त रूप से प्रभावित किया और पाणि तथा बौद्धधर्म की महिमा स्वयं यूरोपीय विद्वानों द्वारा प्रसारित होने लगी । कार्ल ह्यम तथा रीज डबिडस आदि ने पौर्ण सोत्र काल में बर्मान्धता की आय में मम्म होम से अक्षरिण्ट ग्रन्थों का प्रकाशन प्रारम्भ किया । इन सबका जगो जतकर बृहद् परिणाम यह हुआ कि गिला विभाग के डाइरेक्टर ने 'प्राच्य गिला विभाग' की स्थापना मिहम में की और इसके पालि के अध्ययन का विषय बन तथा प्रोम्पाहन प्राप्त हुआ ।

मिहम में पालि की गिला की और विद्वानों का ध्यान आकृष्ट हुआ और राजधानी के समिष्ट ही वे एक ऐसे विद्यापीठ की स्थापना करना चाहते थे जहाँ पर मिल्तु तथा बृहस्प दोनों ही मिहमी पालि तथा संस्कृत की गिला प्राप्त कर सकें । इस प्रस्ताव की वाचक्य में परिणत करने के लिए उन्होंने 'द्विरदुष मुमज्जन' को आमन्त्रित किया । वे एक बहुपुत्र मिल्तु थे । उन्हें अनुभवान्-हित मण्णुं विपिटक क गहन अध्ययन क माव-माव संस्कृत-भाषा पर भी पूर्ण अधिकार एवं शक्ति प्राप्त था और इन सबके वे सर्वत्र घण्ट पटित थे । साथ ही प्रारम्भ हुए बौद्ध पुनरुत्थान काय में भी उनका अत्यधिक योगदान था । सुभानन्द का स्थाई पारगिया के साथ जो सुप्रसिद्ध पाम्भार्ब हुआ था उसमें उनके महायक के रूप में वे भी सम्मिलित हुए थे । मग उन्हां १८७४ ई० में 'विद्योत्पादक परिषद' की नीव डाली जो उत्तरोत्तर विभाग का प्राप्त होता गया और आज विश्वविद्यालय के रूप में प्रतिष्ठित है ।

१८७१ ई० में कोलम्बा के बाहर 'विमलिया' नामक स्थान में 'विद्योत्पादक परिषद' की स्थापना हुई । यह 'धम्मालोक' स्वरि द्वारा स्थापित हुआ था जिनके गिल्स 'रत्नधम्माल पम्पाठम' नामक स्वरि करने समय के पालि के सर्वप्रथम विद्वान् थे । इसी परम्परा में 'धम्मालोक' नामक पुस्तक हुए, जो इन पत्तियों के बरक भद्रम आनन्द कोसन्दावन तथा जगदीश

बहुत बड़े बिकनी की परक्रमवाह्य राजा ५ सन् राज्यों को परस्त किया उनकी पुति 'बयबर्नपुर' ऐसी ही की जैसे इन्द्र का निवास बमरावती हो ।

अपनी सुभाषिनी भगिनी 'सरोजवती' की स्मृति में महार्ह कारगिरि नामक पर्वत पर उन्होंने 'सरोजवती' नामक बिहार बमबाया,

कीर अपनी माता रानी 'सुनेता' की स्मृति में उत्तम तथा महानौमबाले महाबिहार 'सुनेता परिवेश' का निर्माण क्षुभ 'पण्डितन' में कराया ।"

६ बिभलसार त्रिस्स—इन्होंने 'सासनबंसदीप' नामक काव्य लिखा जिसमें बौद्धधर्म का इतिहास व्यक्त है—

"तब महिषी (माया) उस (धर्म) के इस भास पूज होने पर अपने स्वर्गों के बहन में जाने की कामनाबाली हुई । प्रियकर त्रियतम राजा से उसने पूछा—'देव मुझ देवपुत्र नवर जाने की इच्छा है ।

उस नरपति ने देवी के उस बहन की स्वीकार कर मुन्दर ५पिलबस्तु से लेकर सारे मार्ग का कबली कबली-शाखा पूर्ववट जाधि से स्वर्ग के मुरपप की भांति सबबा दिया ।

तब श्रीराम्या से उठकर, द्वार के पास स्वर्ग जा (बोधिगत्व न) पूछा—'यहाँ कौन है ? 'यहाँ महाराज धन्दक नामक मैं अमात्य हूँ । नरेन्द्र ने कहा— धन्दक मैं निष्क्रमण करूँगा ।

७ रतनजोति (मातली)—इन्होंने 'मुमङ्गलचरित' नामक एक संक्षिप्त रचना में 'बिद्यारय परिवेश' क तस्मापक आचार्य की प्रगसा प्रस्तुत की है—

'जी ५ महा की मुमङ्गल संघ-म्बामी बिद्यारय नामक परिवेश क श्रमिद्ध पति बायीरर तथा बिपितकाबाय ५ उमने-चरित कः में संक्षेप में बहता हूँ ।

उक्त पवित्र जलों के स्नेहमय मिश्रण ब्रह्म के निदान की महती कृति की कामना करनेवाले ने पवित्र-जलों के हित-रूप उस मुन्दर प्रसस्त तथा शक्ति विद्योत्पत्ति परिकल्पना का आरम्भ किया।

अन्त में राजा-मन्दिर में हीप के समान और अक्षरों में उसके उत्तम में निरत इसके अक्षरों में गाँठ पर लंका के बोधजनों ने आह्लादित होकर अनेक-रूप से युक्त एक यम ही रूप हीप और पुत्र लेकर स्वर्ग के उत्तम और मुन्दर गुणों का स्मरण करके

नाम पूर्व शतों नामों तथा शौर्यों में और मुन्दर पञ्चाङ्गिक बाणों के साथ अही-गृही बड़ी अक्षर-शक्तियों की उद्यम हुए मूविपुत्र संका नूनि की कर्तव्य किया।

८. वैशाल्य (धोरुके) — इन्द्रांत त्रिनंदनदीप नामक पाणि ग्रन्थ की रचना की। योपय का अर्थ-वर्षत इत प्रचार है—

“यथा भूतों में मूविध परीरवाणी नवीन स्पृह मृतों में अविद्यम यमारण नुपायी का अविनिबन्ध हरी पावकी में बैठकर पाय।

सावनी की मुतहनी माता पहन मुगण्य म् माविन केजा की बगीचाणी (देवी) में विरह-वक्र-मविनवाणी एवं विद्यम मन्त्रिवाणी मधमत्मा का कौमरता में जीव लिया।”

बहि न कदना परिचय देने हुए लिखा है—

“यस्य के अक्षरवि बर पाय में अक्षराराम के स्वायी गुण के भूतों में मूविध विद्याय निर्मल विद्याय यगायाम ‘वन्निपाय’ में अक्षर मन्त्रिध के मनुष्य में मन्त्र उपाय अक्षर अक्षर अक्षरानन्द स्वर्गि तामक गुण भावनाय गुण हाय उत्तमरता में निरी गिण्य न अक्षर अक्षरों के समान रता कान हुए अक्षरवि अविन की।

‘वन्निपाय’ के स्वायी मन्त्रिवाणी अक्षर-मन्त्रिवाणी यदीप्य की विद्या-युद्ध बना उपायय बना उत्तमरता न अक्षर के अक्षरवि के लिए रक्षणीय अक्षरों गद्य में उत्तरे।

पिता के पद को प्राप्त 'मेग्ढान' राजा ने मेरी कुशाग्र बुद्धि से प्रसन्न होकर पालन किया। "

३ पिपतिस्त (विदुष्यस्त)—ये एक स्वामाधिक कवि थे। इनके ये तीन पालि काव्य ग्रन्थ सुन्दर कृतिवाँ हैं—(१) 'महाकस्तपपरिठ' (२) 'महानेक्खम्मचम्मू' (३) 'कम्ममाब्बसि'।

इनके नामने हैं—

"तब पिपती माणव की माता ने नित्य ही उसे स्वी मानने के लिए अनेक प्रकार से कहते हुए (इस कबन से) पुत्र को अतिशय रूप से पीड़ित किया।

उन ब्राह्मणों ने सलाह दी—'मो निश्चित रूप से 'मद्र' वस में 'मापन' (स्पालकौट) नामक श्रेष्ठ नगर है। वहाँ गुम्बरियों की जगह है। इसीलिए इच्छित की साधना के लिए वही चले।

मद्र देश के आभारण समान उस सामन नामक श्रेष्ठ पुर म जाकर जगह जगह से आकीर्ण वहाँ गुम्बर तीर्थ स्थानों को उम्होंन देखा।"

'महानेक्खम्मचम्मू' में बुद्ध के बाहर निकलने का वर्णन है—

"तब उस समाचार के अवकाश से उत्पन्न प्रीतिप्रमोद की अधिकता से परब्रह्म हृदयजाले अनादिनिन्दक गृहपति न अपरिमित जनसमूह को ले पाँच ती महाश्रेष्ठियों सं अनुसमिण होकर, योजन मात्र मार्ग पर अगवाणी कर, अनेक प्रकार के पूजाविभाग करते निरन्तर होलबाण महर्म्मं चाकुवाहों से मुबन लोक के व्याख्यातितहोनेहुए जनसमूह द्वारा पूजित मनमान ने मिश्रु मय ने माव निकल कर अपरिमित समय से मन्थित तीम पारमिताओं के अतिशय प्रभाव सं उत्पन्न मारे विमुबन क विम्मपरायक अति महान् ब्रह्मानुभाव मे अचेतन पृथिवी के निम्न स्थानों को उन्नमिण करत उन्नय स्थानों को मनीभाव करने बिना ब्रह्मय भी बीणा बन्नु मूर्धन संन ठोन यदि बाहों को ब्रह्माने तथा स्वर्ग ही अपन-अपन नाश को छोड़ने सम्पूर्ण कर माणियों द्वारा पहन गये सीने-बाँदी-मणि-रत्न के आभूषणों के अधिकतर

आधुनिक युग

नाममान हूँ। विद्वानों के सिंहासक करते . विविध स्थितियों के शोभासा-
र ममोहर उठे हुए प्रदर्शनात्मक मुकेश्वरि पूर्वकट पर शीपमाता से अलङ्कृत
महोत्सव 'जतवम' नामक अनुपम विहार में प्रकट किया ।

'वसन्तारम्भ' में बुद्धमूर्ति प्रस्तुत है—

"बुद्धा-विष्णु-शिब-ब्रह्म-शान्त-मनुज-गण-पतियो क मङ्गला में जड़ी
मयियों की क्रिया-रूपी-मन्त्र पवित्रियों द्वारा लेखित मुनिचरण-रूपी निर्मल
वसम का म प्रणाम करता हूँ ।"

१० आधुनिकता (कैलिलोट)—ये बहुत ही प्रतिभा-सम्पन्न थे ।
इन्हीं रचनाएँ हैं—(१) 'एक-वक्त्र-कोमल्याक्या' (२) 'कल्याण
माग्यास्या' (३) 'निर्दलितनाकर' (४) 'मोहमुत्तार' संस्कृत मीति
शास्त्र (५) 'कारिष्यास्या' आदि ।

'वसन्त' ग्रन्थ के आरम्भ में—

'मन्वुदि मे उम उगम अनुपम तेज मे जिसत माहात्म्यकार क समूह को
जम मज्जम-रूपी मनस सूर्य को मे तार स प्रणाम करता हूँ ।"

ग्रन्थान्त में—

"बुद्ध-शान्त में यह मानवानी बुद्ध पिता में गौरव रखने मतिमान्
को पधाराम हुए ।
के पनीरकर प्रगत चित्त व मेर माता पिता आदि तथा मातृ लोग
प्रशम्भा बगल के लिए तरह करने को छापी ही आयु में मम न गय ।

तेज विजय-करों के माय मुम उम्हान प्रयत्नित किया और बिना
उपमनादिन किया ।"

११ विमलकिन्ति (महानात्मक)—इसमें प्रसिद्ध इतिहास ग्रन्थ 'शीप-
' का दूसरा भाग २७ परिच्छेदों में अर्पित किया । बुद्धपाप के सम्बन्ध
द्वन्द्वान् किया है—

'अम्बुहीन' में बोधया के समिकर ही एक ब्राह्मण कुमार, विवेक का नेता विजात विद्या भाव के लिए बुद्धता हुआ एक विहार में गया ।

१२ पञ्चालाचार (घण्डिन)---इन्होंने वर्तमान लुधी के प्रारम्भ में 'महावज्र' के तीसरे भाग की निरुद्धर बामुनिष्ठ काम तक उसे पहुँचाया ।

'हिंसकडक सुमङ्गल' के निम्न पर वे लिखते हैं---

विद्योपव के प्रथम अधिपति प्रसिद्ध विद्या विद्युत् इवय भीरुसरा सख्य अपने समय के पूज्य अष्ट अधिनायक भी मुनोगम ह्य ! स्वर्गवासी हो गये ।

यह कर्षकट्टु समाचार सुनकर, बाकपूर्ण इवय से रोते ह्य-ह्य नाद से सारी संका को बहिर करते एकत्रित हो लौट जन भीरु अधिक रोये ।

उत्तम नेता के मोक्ष गौरवपूर्ण मन्त्रि-पुत्रा करके उन्हें दण्य कर दिया तब सारी संका अन्य से बहिर आकास की नीति बसावना हुई ।

विद्यार्थकार के नायक पार महाप्राज्ञ 'अम्माराम' के निम्न पर इन्होंने ये उद्गार कहे---

जपनी बुद्धि में अनेक ब्रह्मा के रचयिता और सायक कर्मशास्त्र के प्रवक्ता हीनवर्त्ता (बीर) यथियों के नायक

विद्यार्थकार नामक प्रसिद्ध आस्थामन्दिर में निवास करणवाने महाप्राज्ञ महाकवि 'अम्माराम'

इन यथियात्र सारी अष्ट के मृत्यु की प्राप्ति होने पर सम्पूर्ण संकावाम पीकापुत्र ही नय ।

अत्यन्त घोरापुत्र कुञ्जित बीडों में उनके मृत देह को अजाया ।

१३ अम्माराम (अचकडुब)---ब्रान्कवि व महाविद्वान् विद्यार्थकार निरवधिचामय के प्राण हैं । क्यों वे इन्होंने बत में रखा था---"या निरा सर्वभूतानां तस्यां जायति संयमी ।" कविता उनके सिय वाप्यन्त अरुम काम था । 'अम्माराममाबुधरिण' नामक छोटी पुस्तिका उन्होंने लिखी । बाकी कविताओं में बलिगीन तथा कुन्दर वद हैं । 'मनोरथपुराणी' की भूमिका में इनके पद्य हैं---

“हुट में प्राप्त मुन्दर, बिन्नामणि या बस्यकुम गमान भद्रपम बतता के मन-स्वी बुद्ध की चारनी के समान अष्ट मुन्दर की हृप में मैं बन्दना करता हूँ ।”

विद्योन्म (वेद्यज्ञानिया) विरचविद्यालय में उपाधि छ सम्मानित होत समय उन्होंने यह बचिवा बनावी थी—

“यह जो वह विद्योन्म प्रसिद्ध अष्ट विद्यालय में विरचाम म विद्या की उपरति में निरुत्त बित्त म रत्न अथवा ‘बहुगम’ नामक प्रसिद्ध ग्राम के स्थिरमणि महाविद्वान् धीमात् ‘निष्कलन’ नामक स्यादिर हैं ।”

‘वक्तिनीत’ में इनके कथन उद्गार है—

“पुत्र किसी की दुप दे रहा है । कन्क वारबू पिमहरी मयवा बम्बु या किसी की नू हिमा मठ कर ।

छोट म भी प्राणी को पुत्र जानने देखने नू न मार अष्ट में मक्की बस्यदर या लटमम को भी ।

न हन में न बाठ के टुकड़ से न मयार्ई मे या न हाप न ही चौपाय पत्नी या किसी पर नू मठ प्रहार कर ।

आशा में उड़ने जपवा बूत पर बैठ बिहूग को बाल क गिम्प छ नू न मार ।

पुत्र पत्नी गगन में उड़ने हैं तथा मयन को ही घर बनाने हैं के पुत्र पुत्र में बैठ बज वा धानन करते हैं ।

वे मयूर गायन करते हुए मीठ को मयूर बनाने हैं । रैय तथा बूयन मे भी वे बाठ को मुन्दर बनाने हैं ।

उनमें नी पुत्र कोई माता-रिता को पोसने हैं बटा-बर्नी को पोसने हैं और पत्नी को भी पोसने हैं ।

उनमें कोई एक ही पुत्रवारी हैं उन्हीं एक पुत्र के आशय में रूती हैं । उनकी बनी एक मात्र पति है अथवा जप में वह विद्या भी है ।

पुत्र उस माता का मुँह मुख की भाँटी के लिए बाहार, प्यासी के लिए पानी लाकर बांसल में देता है ।

मूँजे कड़ के समान बिपके पेट से नी बूनी काँपती बह पुत्र को जोहती बड़ी रहती है ।

उसने लिए बड़ी मेहनत से आहार इ बकर बह बोंब में से बस्ती बस्ती माँ के पास जाता है ।

बो मुत्र पूँजे उषे मारा तो बह बुझिया क्या करेयी बह माता क्या जाये बह माता क्या पिय ?

पुत्र कौन उसे किसायगा कौन उसे पिलावेया कौन उसे आरवासन देगा बह तो एक ही पुत्रवासी है ?

हे मुत्र बह बनाप माता बिसे बालिगन करे किमको, मुत्र बह बूमे या किसमे प्रियाभाप करे ।

पुत्र तू परवर का बही है न तो तू मिट्टी का है न तो तू बाठ का है न तो तू निर्मितक ही है ।

एक बार ही पुत्र मा जा अब नक वी बीली हूँ पुत्र मे तेरे बरसों पर फिरती हूँ इ पुत्र आ जा ।

तू ही एत मात्र पति है तू ही घरल है तेरे बिना मैं बीन-प्रताब हूँ कैसे मैं बीऊँ, कैसे मैं बीऊँ ।

किसी की गरिबी प्रिय भायाँ बोंसले में है इ पुत्र पति के भाग की प्रतीता करनी हुई बाहार बाहती है ।

उनकी भी है मुत्र प्रिय भायाँ बरबाँको तथा परिसंविताँ की देखती ठीक मे सोय ।

वे बिझिया के बंधे मुँह से बूँ बूँ नी न कर पामने के भीतर ही नष्ट हो गय ।

आधुनिक युग

हूमे भी मुन मारे प्राणी मूल-इच्छुन कुन के विरुद्ध है मरन मुगी होना चाहते हैं कुन्ही नहीं । मन नू किमी को मारे मन किमी का फरकारे, मन किमी को डंके मन भीह बडाप ।

१४ प्रकृतार्थित (कोउहेने) — बिद्यानवार बिदबिद्यालय में पाणि मरुनी क ये बिनापाध्यग है । मिहला मारा में इरुहांन बिननी ही पुन्यके मिली है । इपर यह दयकर कि पाणि को पुन्यके का प्रचार सीमित हाडा है पाणि में यदून नही मिलत । उनकी बबिता क समून है—
‘यह स्वच्छ गीतय जमपागसामी मदी बिनार पर मोमित तरज्रा और मगात्रों म पुपररक क बच म सम्मानित बतदबला की मुनग बन्धा-मी दीगनी है ।

मा यह नदन पनी मुदनी त्रिया क माप-माप मपुर धाम के फन को फोडबर त्रिया के पूग ममापम-मुग का माम करले हुए गूह के मलात्र प्रम का निवेदन बग्ना है ।

अबदी तरखु देखने मुम अनि बादबयं हागा है कि मार गनी के बीच में मरं मुग म माना है मिह और मूग म मडा बीर गनत बाव जन्नु है और म बही महोदर की भांति मन रहे है ।”

१२ जिनबंम (मिगमुने) — इहाण ‘भतिमायिनी’ मामक पाणि काव्य विद्या है—
“बांनो के समान मरुहम मे अपहृण मुगबाप उनर मनुद में ज्ये मगाहम बुदबदुपातवान ह बिगामी बबन जय म शानित गीत गती हूई मार की बन्धाबा को बदा मुनन पराजित नही विद्या ।

तात की बानी मैना जॉ के गीत-जय म संकुन गीदा के तरंय की खेन बाबुना-नरममाद मरु बाबु मे बमित्त पुनररक म पूमगित मुनार जय मे शानतन अनि पुन्य म भांमित हुआ ।

कुम्भ और चन्द्रबन्धु (कुमुद) ने समान मन्वहासनाम सुम्बर जातन से मुक्त लोक को आनन्दित कराने के लिए 'वीर्य आषट्ट' (आषट्ट-संसार) के बन्धन में जन्में सूर्यबन्धी शोकबन्धु, अश्रमताओं के बन्धु हे बुद्धराज अबन्धु के बन्धु तुम्हीं मेरे एक बन्धु हो ।

हीरसागर के अश्रमा के समान तुम श्वेत तथा धीतमन हा जनों के मातृश को तुम वृष्ट कर देनाम हो तुम्हारे प्रति प्रसन्नता प्रदर्शन मात्र से 'मद्द्रुमुच्छला' आदि मर कर बेवता हुई तुम्हीं कामप्रद मणि हो ।"

कवि परिचय

"नील सागर के समान मारियस के नाम में देव-मन्दिर समान जनक मंत्रियों की आपस (बाजार) बासे बिजली के धीरों से हतान्धकार सोमन-मार्गबासे बर्म में आस्थावात अश्रमों के 'मिमम' नामक पुर में

कुम्भ और हार सी श्वेत बामुकान-विस्तृत प्राज्ञनवात बौद्ध भिक्षुओं के बाध करण के अनन्त मदनवात सदाचार, दाग तथा आदि से पवित्र भिक्षु बासे साधुओं के घेसर 'अमयलसर नामक विहार में "

१६ सुबङ्गल (भोवुस्त) — इन तबल भिक्षु ने 'मुनिन्दापदान' नामक लघु काव्य लिखा है—

'जहाँ-तहाँ हंसयुवक कूब रहे थे जहाँ-तहाँ पुष्प लताएँ पुष्पित थी जहाँ-तहाँ स्वतः शीघ्र निनाद से मुक्त जहाँ-तहाँ कमल-कुम्भ से बाधित सारस तथा मोर के झुंडों से मुक्त मैना-तोता द्वारा आधित तथा भीरों से शीत कमलिनी से मुक्त था । इसे देख के मन में बहुत प्रसन्न हुए ।"

ग्रन्थ समाप्ति

" 'उद्दुवर' नामक प्रसिद्ध ग्राम में 'मुधम्मावास' नामक शुभ परिवेश में शासन के परम मेधा परामर्श 'भोवुस्त' नामक ग्राम में उत्पन्न स्वधिर ने बुद्धाब्द २५०० (१९५६ ५७) में मन्त्रिपूर्वक इस ग्रन्थ 'मुनिन्दापदान' को रचा ।"

निहम में पालि का पठन-पाठन बहुत बढ़ा हुआ है । निशु तो पालि में बसाता प्राप्त करना ही चाहते हैं गृहस्थ भी उससे बंधित नहीं हैं । विद्या-

नगर और विद्योत्सव शैलीं विश्वविद्यालय विद्यार्थर इसी उद्देश्य म स्थापित किय गय है जिनमें पाणि के अध्ययन पर ध्यान दिया जाता है । इनमें प्राचीन प्रबन्धी की उतना साध्य नहीं किया गया है । इसलिय जैसे भारत में नम्बूत का संकीर पाठिस्य मूण्ड हल्ला आ रहा है, वैसे ही यहाँ भी पाणि के पाठिस्य के लिए प्रय है । पर भारत में त्रिभ प्रकार म नम्बूत के सम्भीर पाठिस्य की गता के लिए 'बायबमब नम्बूत विश्वविद्यालय' एसी संस्थाओं की स्थापना करके केप्य की जा रही है उनी प्रकार न मिहल व उरपुक्त विद्यालय भी जयन उद्देश्य-शक्ति में मसम्न है ।

नवाँ अध्याय

६ ब्रह्मिष्ठ प्रदेश में स्वविरवाद तथा पालि

ब्रह्मिष्ठ प्रदेश के बौद्ध धर्म के सम्बन्ध में भारत के प्रकरण में ही सिद्धना जाहता था पर उसे यहाँ अलग सिद्धने का कारण यह है कि एक तो यहाँ के बौद्ध धर्म का सिद्धना काल विद्यमान 'महाविहार' से अनिष्ट संबंध था। साथ ही यहाँ बौद्ध धर्म एक शाखाधीन स्थित रहा जब कि उत्तर भारत के सभी में ही बौद्ध विहीन हो गया था।

बौद्ध धर्म का ब्रह्मिष्ठ प्रदेश को लक्षितना कहा जाता है। 'बौद्ध' में अशोक के समय धर्मश्रुता के आने का उल्लेख उनके अभिलेखों में आता है। ब्रह्मिष्ठ प्रदेश के समीपतम स्थान बिहारप्रदेश के जटिजटिया—शामोदर पहाड़—में अशोक शिलालेख प्राप्त है जो कर्नाटक देश में है। और यह धर्मश्रुतों के आने के पट्टन से है। ब्रह्मिष्ठ प्रदेश में ब्राह्मण तथा कुछ शर्या में शक्ति भी आ चुके थे। धर्मश्रुत किम जयह उत्तरे से उनके बारे में ब्रह्मिष्ठप्रदेश अट्टकवाक्य 'बम्मपास' कहत है—

“सद्धम्मामोचनरट्टान पट्टन नागसम्भुप ।

धम्मामोचमहाराजबिहारे वत्तना मया ॥

(नेतिजटिया-अट्टकवा के अंत में)

अशोक मज्झिम के उत्तरण क स्थान 'नामपास' के धर्मश्रुत महाराज के विहार में बगले में यह पुस्तक लिखी। 'नामपास' तभी जिन में अब भी मधुइ तटपर एक मच्छा कच्छा है। नामपास के बम्मरगाह पर उत्तर कर धर्मश्रुत धर्म के प्रचार में संलग्न हुए थे जैसा निम्नी शिलालेखों में उत्तर में सर्वत्र मत्तयान कथन मया था यह बात ब्रह्मिष्ठ प्रदेश में नहीं

इबिङ्ग प्रदेश में स्पिरिटाब तथा पालि

हुई । यहाँ अन्त तक स्पिरिटाब महाबिहारीय ही रहा । इबिङ्ग प्रदेश के किछन ही इबिङ्ग भाषायों का भाब भी स्पिरिटाबी देसों में बड़ा मान है ।

(१) बुद्धवत्त—यह भाष्य बुद्धधोप से पहले सिहस भाय थ । दोनों की श्रेष्ठ समुद्र में नौका पर हुई थी । इनके प्रथम 'बिनपबिनिच्छय' में सिगा है—

“इति ताम्रपत्नीय परमवम्पाकरण तिपिटकनयबिभिबुसमन परमकविजनहयपपुमकनबिबमनकरण मध्वरबसहन परमरतिकर-वर मपुर-बबतुमाग्न उरयपुरवावीन बमामंकारमूनेन बुद्धरत्न रचितोय 'बिनपबिनिच्छयो' ।

इबिङ्ग प्रदेश में नबी तट पर स्थित ताम्रपत्नी या और उनी प्रदेश में 'उरयपुर' (भाब का उरेउर) नागर था । 'बुद्धवत्त' कबि और परम बियाकरण थ । इनक प्रथ्या म बबिग्य स्पष्ट है । इनके प्रथ्य है—(१) 'बिनपबिनिच्छय' (२) 'उत्तरबिनिच्छय' (३) 'बमिपम्माबतार' (४) 'मपुरत्त्वबिमाग्नी' और (५) 'कपात्त्वबिनिच्छय' ।

'बिनपबिनिच्छय' में थ बहने है—
“बिनपबिनिच्छय-ग्नी नागर के पार उत्तर में भिडा तथा मिगुबियो क लिए जो नाब-भा है

जो इस बिनिदक्ष्य को प्राण हाउ है क अत्यन्त उत्तुग तर-दू-मासा बाय शीम-ममाबि-बिघ्न रूप प्राहोषाम प्रज्जि ग्नी मागर का तर जाने है ।”

'उत्तरबिनिच्छय' में एमा व्याख्यात है—
“इग परम उत्तर प्रथ्य को पार करन पर निर्बिज्जता को मार देनबाम अमृत-ग्नी नागर के पार उत्तर बिनप-माग्दूत मर मुक्क होता है ।”
'बमिपम्माबतार' में प्रथ्यरार का परिषय दिया गया है—
“नर-भारियां मे मरे बुम की बाधुनता मे अमंवीनं, मपूड मर्वात्त परिपुर्ब स्वच्छ-नरी जयवाप

नामा रत्नों से भरी दूकानों से समाकीर्ण नामा उद्यानों से सीमित रमणीय काबेरिफट्टन' में

“उरणपुर’ निवासी आचार्य ब्रह्म बुद्धवत्त द्वारा दत्त अधिषम्या-बठार’ नामक अधिषमं में प्रवेश करानेवाला प्रथम समाप्तः।”

‘सुहृत्तिकाय के ‘बुद्धवंस’ की ‘मधुरत्तविमासिनी’ नामक अट्टकथा के रचयिता भी यही है। जान पड़ता है और अट्टकथाएँ लिखी जा चुकी थीं और यही केसम इनके हाथ आ पायी। इसमें इन्होंने कहा है—

“सदमं में रत धीमासिगुण प्राप्त बुद्धसिंह द्वारा सत्कारपूर्वक मुक्तिर काळ तक प्रापित होने पर इस ‘बुद्धवंस’ की अल्पवयसा’ का आरम्भ ये करता हूँ।

बुद्ध की पंक्तियों का प्रकासक प्राचीन अट्टकथाओं के मार्ग का अनुसरण करते हुए मैंने ‘बुद्धवंस’ की अट्टकथा बनायी।”

(२) धम्मपाल—द्विदि प्रवेश के इस आचार्य की कृतियाँ बुद्धचोप से कम महत्त्वपूर्ण नहीं हैं। वास्तव में बुद्धचोप द्वारा छोड़े हुए कार्य की पूर्ति इनके द्वारा हुई है। इनकी रचनाएँ हैं—

(१) परमत्पदीपनी (सुहृत्तिकाय के उन श्रवणों की अट्टकथा जिनका बुद्धचोप न व्याख्यान नहीं किया है। इस प्रकार उदात्त इतिवृत्तक विमानवत्तु, पेतवत्तु घेरगामा बटीगापा एवं चरियापिटक की यह अट्टकथा है)

- (२) नेतिप्पकरमअट्टकथा
- (३) धीपनिकाय-अट्टकथा-टीका
- (४) मग्गिमनिकाय-अट्टकथा-टीका
- (५) संवत्तनिकाय-अट्टकथा-टीका
- (६) अट्टगुत्तपनिकाय-अट्टकथा-टीका

- (७) वातवृद्धका-टीका
- (८) अमिषम्पुष्पका-टीका
- (९) बुद्धवैस-अष्टका-टीका
- (१०) विमुद्धिमगा-टीका

इनका जन्म तमिल प्रदेश के 'काञ्चीपुर' नामक स्थान में हुआ था। ये बुद्धबोध के शरणागत हुए, अर्थात् पाँचवीं सदी के परधान। पृथक् पृथक् ने जिन ब्रह्मण्य का उद्भव किया है व उनमें गुरु तथा महासानी व और नामन्दा के आचार्य व।

इनकी टीका का समूह है—

"महासङ्गिक, श्रेयभागर-वारङ्गल निरुद्ध गम्भीर, विविध रूप की वैशाली वेदवाच्य भाष्य की में बन्दना करता हूँ (उत्तमवृद्धका)।

जिन महर्षि को चर्चा सम्पूर्ण शोध के हितार्थ है उस शोध के अग्रगण्य अद्वैतप्रकाश को मैं बन्दना करता हूँ" (अमिषम्पुष्पका)।

"विनय-योग्यों के ब्रह्म-मन्त्रों में जो महर्षि को दिग्गज की मान्यता है जिनने महासानी-श्री उन को चारा जोर से मष्ट रूप प्राप्त किया है (विमुद्धिमगा-टीका)।

(१) अनुच्छ—ये भी काञ्ची के पास के ही 'काञ्चीपुर' के उद्भवण व। इनके ग्रन्थ हैं—(१) 'अमिषम्पुष्पका' (२) 'वाचस्पतिपरिच्छया' (३) 'परममभिविच्छया'।

इनमें मुख्य ग्रन्थ तो 'परममभिविच्छया' ही है पर अमिषम्पुष्पका महर्षि अतिरिक्त ब्रह्मण्य होना व चेरव ही देशों में अतिरिक्त प्रचलित ही गया और इसी कारणवश इनका जन्म भी प्रचार हुआ।

ग्रन्थकार ने अपना परिचय देने हुए कहा है—

"श्रेष्ठ काञ्ची राज्य के उत्तम 'काञ्ची' नगर में जन्मिल हुए मैं

उत्तम बह्मण्य बानी,

अध्याहृत यद्यथा परमार्थ-ज्ञाता अनुसूय स्वविर ने ताम्रपर्णी प्रवेश के 'तमोर' नगर में बसते हुए,

वहाँ के संन-मवान द्वारा प्रापित हो निर्मम महाविहारवासियों की परम्परा पर आधारित 'परमरत्नविनिष्कम्प' नामक प्रकरण को परमार्थ के प्रकाशन के लिए रचा ।"

(४) काश्यप (बौद्धीय)—ये ईसा की चारहवीं सदी के अन्त में हुए । 'सारिपुत' ने इनकी प्रतिद्वन्द्विता भी और अपनी हठियों में इन्होंने 'सारिपुत' की टीकाओं का योग का प्रदर्शन किया है । इनकी रचनाएँ हैं—

(१) 'मोहविच्छेदनी' (अभिधम्ममातिक-टीका) (२) 'विमतिविनोदनी' (विनयक-टीका) । सिंहल और इन्डो-देस के विद्वानों में बेरबाबी होते हुए भी आपस में भी प्रतिद्वन्द्विता विद्यमान थी इसकी स्पष्ट प्रमाण हमें इनकी हठियों में मिलती हैं । अपने बारे में ये कहते हैं—

"नाता जनो क निवास से अतिरमणीय जल बेध व मार को बहन करन में कुमपवत के समान कावेरी के पवित्र जल से हितयुक्त पर्यावास राजाधिराज के उत्तम बंस से मुसन्तोषित

सम्पूर्ण उपमोग तथा परिमोग के धनो से माना रंगो से भरी बुझनों से मुन्दर, मन्दर के स्वामी के समान ही बौद्धराज का पुर है वहाँ के श्रेष्ठ, मुन्दर बीश-विहार में जो रहते हैं ।

विनाली इत घोमायमान प्राङ्गणोंवासे उस नगर के 'नामान' नामक विहार में वास करते हुए,

नाम से मुनङ्गमर महाधेष्ठ काश्यप के समान आकाश में उदित चन्द्रमा की भाँति विस्तृत प्रकाशवान दूसरे शास्त्रों और तीनों पिटकों में विनुन शारी-गजसबूह के विनिग में गिह क समान सीता करनवास

उन (काश्यप) ने अभिधम्मपिटक-रूपी नामर में बिलारे सारगुण

वस्तु-रत्न-समूह का विकास कर, सम्बन्ध ज्ञाताओं के लक्ष्य को प्रकृत करने के लिए 'मोहविच्छेदरत्नी' नामक रत्नावली बनायी ।

विनयदीक्ष 'विमतिविनोदनी' में उल्लेखित जा 'सारिपुत्त संबराज' का यह एक प्रसूत किया है। इसमें स्पष्ट होता है कि उनकी मायता अथवा गिरिद्व 'विद्वान्ता' की और थी। विनया उल्लेखित 'सारिपुत्त संबराज' न किया था । 'कम्पन राष्ट्रीय' अखिल इविङ्ग विद्वान्-टीकारार य ।

(२) बुद्धपिय वीपहुर—इसका समय तेरहवीं शताब्दी है । इसकी रचनाएँ हैं—(१) 'महास्यमिदि' (ध्यातरण) (२) 'पञ्चमपु' आदि । पञ्चमपु पालि को बहुत सुन्दर रचना है । यह एक गतक है । इसका अन्त में इन्होंने 'आमन्त्र चरगत' की प्रशंसा करते हुए किया है—

'आरप्यव' अथवा 'आरप्यव' नामक महापत्तौत्र के समान विषय प्रबुद्ध बुद्धप्रिय का मन्त्र करनेवाले बुद्ध के मुखा क अल्पप्र प्रती 'बुद्धपिय' द्वारा रच गये पञ्चमपु' का पालि स्पष्टि-वादी भेदों कर ।"

बुद्ध सौन्दर्य वणन

"श्रीवत् के भीतर स्थित अमर-पद्मिन क समान पदक कम-कमला के समान क तत् पर समय करती मन्त्रमयी की नामा की दक्षिण-पद्मी गुह्यै थी-अथवा बरौली की पदित पदा पाल का दूर करे ।

दाना वप्या और बाहुओं-रुही तीरण के बीच गन्ध की धारा पर गगन विर-पद्मी मगम पद क ऊपर उल्लेख के लिए कम में स्थापित धीम-वपम अथवा गुह्यै के विमुचन के मगम क लिए होवे ।"

इस प्रकार यह 'पञ्चमपु' एक सुन्दर वाक्य है ।

महावक्त्रायन के ध्यातरण की द्वारा उल्लेखित 'मोहविच्छेदनी' न तत् मय पालि-व्याकरण की रचना की तो 'बुद्धपिय' न वक्त्रायन-ध्यातरण की प्रशंसा के लिए 'महास्यमिदि' नामक वक्त्रायन-ध्यातरण पर आपातिन रूप की प्रसूत किया ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि केवल अट्टकपा और दर्शन की उद्भावना करवाना ही नहीं प्रत्युत बौद्ध धर्म भी इतिहास के क्षेत्र में उत्पन्न हुए। प्राचीन इतिहास भाषा में भी 'महिमेसासा' आदि काव्य प्रस्तुत किये गये।

प्रविष्ट प्रदेश से बौद्ध धर्म का उद्भव

बौद्धही सभी न मलिक काफूर ने मधुरा को जीता तथा सारे मन्दिरों और बिहारों को ध्वस्त कर दिया। वहाँ जगदोर अत्याचार किया गया। प्रसिद्ध मागी इन्कतूता न इस अत्याचार का आर्षी देसा अर्थात् उपस्थित किया है—

“एक रात को मुस्तान एक जंगल में घुसा वहाँ काफिरों ने शरण भी थी। वहाँ दूसरे दिन सबेरे उनको उन काठ के खम्भों में बाँधकर मार दिया गया बिनका के ही रात को डो लाये थे। तब उनकी स्त्रियों के केशों को खम्भों में बाँधकर बँस ही मार कर छोड़ दिया गया। ऐसा आचरण करते मने किसी भी शासक को नहीं देखा।”

बौद्धबिहारों को तुर्कों न मूट लिया और इन्हें न मध्य-एशिया से ही मूट्य हुए बन आ रहे थे। ऐसे निर्मम हत्यारों से मिश्रु अपन को पीस कपड़ों में रखकर कितन दिनों तक बच सकते थे। जो जीवित बचे वे सिहल भाग गये और बिना नामे की गाया की माँठि जो बौद्ध पुस्तक बच रहे, वे ब्राह्मणों के शिष्य हो गये।

इस तरह इतिहास से बौद्ध धर्म का उद्भव हो गया।

तृतीय खंड
अन्यत्र पालि



पहला अध्याय

१ बर्मा में पालि

१ चेरबाद—बर्मा तथा सुबर्नूमि में समोत् के समय बौद्ध धर्म-
 दून 'सोप' और 'उत्तर' पये थे। तब से मकर पाँचवीं मरी तक मर्यात्
 लगभग ७०० वर्षों तक परवाद ही बर्मा में प्रचलित रहा। 'ह्याबजा' के
 मदीर 'मोड-गन' में दो स्वर्ण-अभिलस मिल है जिनमें दक्षिण की चौपी
 पाँचवीं मरी को कदम्ब लिपि तथा पालि भाषा में उत्कीर्ण है—

“यं बम्मा हेतुप्यमत्रा तेनं हतुं तथागतो भाइ ।

तेमएव पीं निरोओ एंबंजारी महासम्मथा ॥

वही पर ताजपोदी के समान बीच स्वर्ण-पत्रों पर लिखी एक पोषो
 निरुन भाषा जो पालि में है, जिनमें है—

“अपिउत्रापञ्चया मट्ठारा” आदि ॥

इसने पता लगता है कि पाँचवीं-छठी मरी में बर्मा में हीनयान स्व
 बिरवार ही स्थित था वीर्ये यहाँ महायात्रा पैला। तर्पट (केरल) बंग के
 गिनू अर्हन् भिगु हुए। वे पिच्छ और तास्त्रा में निरुण तथा बनुर थे।
 गिनू अर्हन् अण्ड्य में बाग कर रहे थे। लोगों ने समझाया और पाग उनही
 में जा गयी। वे राजा अनुराठ से मिलन पय।

राजा के पुटने पर उद्दान बग—“मिरा बंग मयान् बुद्ध वा बउ
 है। ये भयान् बुद्ध व गंवीर सूम्म पडिउ-वैस्तीय धर्म वा अनुगमन
 कणा हूँ।”

“तो मने मुत भी अयराज व उरवेतिन बर्म वा पौड-मा उरवेण
 कीरिये।”

गिनू अर्हन् ने राजा अनुराठ की बउ के मुट धर्म वा इनना मुदर उरवेण
 रिया दि बह बो व उग—“मने आरही पौड कीं हमाग वरण नरी

मेरे स्वामी आज से हम अपना घरीर और जीवन आप को अर्पित करते हैं। भन्ते मैं आपके सिद्धान्तों को अपनाता हूँ।”

इस प्रकार राजा ने बज्रयान-महायान को छोड़ विष्णु अर्हन् के बरबाद को स्वीकार किया।

वर्मा में कई बातियों का समायम था। तर्क पुराने और सबसे अधिक सम्म थे। उत्तर से ‘अम्म’ बड़ी संख्या में आकर बस गये। इनका तिब्बतियों के साथ बड़ी सम्बन्ध है जो हमारे साथ ईरानियों का। अम्म ही पाषक थे।

अनुसूय न अपने एक मंत्री को भेंट लेकर ‘बातोन्’ के राजा मनोहर के पास बर्म-ग्रन्था और बुद्धपत्तुओं को नौयन के लिए भेजा। बातोन्-राजा का उत्तर था—“तुम्हारे जैसे निष्पादुष्टिवासे के पास पिटक और बुद्धपत्तु नहीं भेजी जा सकती—केसरी सिंह राज की चर्ची सुबर्न पान में ही रखी जा सकती है, मिट्टी के बर्तन में नहीं।

अनुसूय यह सुनकर अस मुन गया और जस तथा स्वयं मार्ग से सेना से बातोन् पर बड़ा तथा मनोहर और उसके मन्त्रियों का कड़ी बना ‘अरिमईनपुर’ (पगान) भाया गया। साथ ही प्रन्थों के साथ उनके पानवार विद्वान् भिक्षु भी ‘पगान’ लाये गये। वह बड़ा ही आकर्षक दृश्य था जब कि राजा के बत्तीस बनेत हाथियों के ऊपर विपिटक तर्क से अम्म वेदा में साया गया और उनके साथ बड़ सम्मान और सत्कार के साथ भिक्षु भी साथ गये।

इस विजय का क्या प्रभाव हुआ इस सम्बन्ध में एक ठोच विद्वान् ने ये उद्गार व्यक्त किये हैं—

“युद्धक्षेत्र में विजयी बर्मी बौद्धिक तौर से पराजित हो गये। इसी समय उस अद्भुत वास्तुविद्या और साहित्य का निर्माण हीन सदा त्रिसले पगान बौद्ध राजधानी बना दिया गया। उत्तरी और उत्तरपूर्वीय भारत के प्रायः तीन राजाधियां से पड़ते प्रमाकों न धीरे-धीरे बर्मी लोगों को इस योग्य बना दिया कि राजा अनुसूय की विजय से प्राप्त तर्क सम्मता को अपना लें। उसी समय बर्मी स्वरा और परपर तथा ईंटों के अभिलेखों के लिए विदेशी बर्णमाना से साधारण बर्मी-बर्णमाना संवार की गयी इस मयी

बर्मासा में त्रिपिटक सेलबद्ध हुआ। बर्मी राजधानी पगान में धार्मिक विद्या के लिए संस्कृत को हटा पालि में स्थान से लिया।

तमैऊ मिथुओं के चरणों में बैठकर बर्मी जनता और राज-वरवार ने हीनवान की दीक्षा ली और जल्दी-जल्दी एक के बाद एक अतिमम्य बिहार और मन्दिर भारतीय तथा तमैऊ मिथ्याचार्यों के उत्साहवान में बनने लगे।

बर्मा में तांत्रिक बौद्ध धर्म और उसके पुरोहित आदी बिधा हुए और एक नया एनिगामिक युग आरम्भ हो हुआ।

गिन् अर्हन् के प्रभाव और वाग्मिता तथा राजा अनुसुइ की उत्साह-पूर्ण सहायता से बुद्ध का धरम और बुद्ध धर्म मारे अम्म बेरा में फैलने लगा। बेरा के कोन-वाल में मीकड़ों जन आ-आकर गिन्-नीला लाने लगे। पगान (अतिमर्दानपुर) स्वबिरवार के क्षेत्र के रूप में सर्वत्र प्रसिद्ध हो गया। मिहम के राजा बिजयबाहु ने धार्मिक ग्रन्थों और मिसुओं को भजकर धारण की स्थापना में अनुसुइ से मदद माँगी। अम्म संघ न उठता ही नहीं भेजा, प्रस्युत मिहमराज के लिए एक इबत हाथी भी भेजा और बदले में मगबाम् की इन्तवानु के लिए याचना की। इस इच्छा की पूर्ति सिहमराज द्वारा हुई।

इसमें पहल बुद्ध की कुछ अस्थियाँ अनुसुइ को घेर कितारा से मिलीं थी। इनके ऊपर अनुसुइ ने 'स्वेजिमोन' का महास्तूप बनवाना शुरू किया जिसकी समाप्ति उनका योग्य पुत्र और उत्तराधिकारी 'केन्जित्पा' के हाथ से हुई। इस स्तूप के चारों तरफ पूजाएँ लीनीम मान्ते (देवताओं) के मन्दिर ह। उनके बारे में पुराण पर अनुसुइ ने कहा था—

“मनुष्य मर्दम के लिए नहीं बना चाहते! अच्छा तो उन्हें अपने पुराण देवताओं के लिए मान दो के हम तरह धीरे-धीरे मन्चे पम पर आ जायेंगे।”

अनुसुइ ने अरम चार पर्यायों को भजकर मिहम से त्रिपिटक की प्रतिनी माँगवाई। गिन् अर्हन् के वागोन् के त्रिपिटक में उसकी तुलना करके एक अतिमम्य बुद्ध संस्करण तैयार किया। गिन् अर्हन् के उद्योग से

तीसरे पाठि की संस्कृति ने अम्म देश को बहुत योजे समय में संस्कृत और सम्म बना दिया ।

पगात में अबुना भी एक विरात बुद्ध प्रतिमा लड़ी है जिसके दोनों ओर दो मूर्तियाँ हाथ जोड़े जमीन पर घुटने टके लड़ी है । इनमें एक मुहुटबारी राजा केन्द्रबिन्धा की और दूसरी संवरज मिन् अर्हन् की है ।

अनुच्छ के अभिलेख में उल्लेख है—“ओ इयसमोयं सच्चवानपति महार थी अनिच्छदेवस्य ।

केन्द्रबिन्धा (१०८४ १११२) पिता की भाँति योग्य और भक्ति मान था । उसने बहुत से स्तूप और मन्दिर बनवाये जिनमें पयान का 'मान्म विहार' बहुत सुन्दर और प्रसिद्ध है । इसकी पहली परिक्रमा की दीवारों में अस्सी पत्थर हैं जिनमें बुद्धजीवन के आरम्भ से बुद्धत्व प्राप्ति तक की घटनाएँ अंकित हैं । इन मूर्तियों को 'जातकनिबानकमा' के अनुसार अंकित किया गया है । दीवारों और विहार की दसगों पर कर्तव्यशी मिट्टी की चमकीली स्थावतियाँ हैं । प्रत्येक स्थावती पर तर्ज में संक्षिप्त लक्ष हैं । दूसरे तल पर मिट्टी की चमकीली स्थावतियाँ लगी हुई हैं जिनमें सम्पूर्ण साङ्ग पाँच ती (५४७) जातक अंकित हैं । चारे मूर्ति-शिल्पों की संख्या १४७२ है ।

मिन् अर्हन् की मृत्यु के समय बर्मा पालि-पित्त का अनुयायी हो चुका था । मिन् अर्हन् के बाद पंचमू संघराज हुए । नरत्तू और 'मिन्-पित्ता' के अग्रका में नरत्तू के कहन पर पंचमू सम्पत्त बन । पंचमू को विश्वास बंद नरत्तू म मिन्-पित्ता को बुलवाया और अपने यहाँ बाढ़ में घोस से बिय बेकर मरवा डाला । इससे पंचमू बहुत नाराज हुए । वे इस छोड़ मिहल चम पये और नरत्तू के पीन तक नहीं रहे ।

६० वर्ष की अवस्था में जब संघराज बर्मा लौट तो उनका बड़ा स्वागत हुआ । वे अधिक दिनों तक नहीं जी सके । उनके बाद तर्ज मिन् 'उत्तर जीव' संघराज हुए । सिंहल स्वविरवाद का केम था । इसलिए अर्ह बहुत से तीर्थयात्री जाया करते थे । एक बार 'उत्तरजीव' के राज 'चपटा'

घामबामी एक २० वर्ष का धामधर भी गया। मिहम मित्रुओं को बाउबीठ के दौरान में मापूम हुआ कि मिम् अर्हन् अगाक-पुन महम्न क उत्तरपिकाटी ब और 'उत्तरबीब' भोगवत्तर के। घामधर 'बपट' की उपमम्परा मिहम मेंहुँ नाम पड़ा 'बोनिपाम'। 'उत्तरबीब' संपराज सौट गये। मिम अर्हन् न विपिटक की पाठ-गुपना की थी और दात्रोन् विपिटक से मिहम विपिटक को अभिन गृह बनमाया था। अब मिहमी उपमम्परा भी भ्रष्ट मानी जान लगी। 'बपट' पूरे वस साम तक मिहम में रह। उन्होंने माया—'बर्मा के मिम विपिपुवक उपसम्पन्न नहीं है। उनक साथ मैं विनयकर्म नहीं कर सकता। उनके लिए पाँच और मित्रुओं की आवश्यकता होगी। चार और मित्रुओं को माप म विपि सौटन क विचार मे उन्होंने ताभनिधि (बंगाल) के स्वबिर 'मीबमी' कम्बोजयज के पुत्र 'तामनिन्द' काञ्चीपुरी क 'बामन्द' महापर और तथा कंगारुत' महापर को हम साथ के लिए माप लिया।

बन चारा भापियों के साथ ११८१-८२ में ब पगल ली। उन्होंने हमरे मित्रुमा क माप विनयकर्म कान मे इन्कार कर लिया। इस प्रकार ११८१-८२ में बर्मा में मिहम संघ और अम्म संघ नामक दो संघ बन गये।

बर्मा की परम्परा बनाकर मममान की काशिग की गयी विन्नु हमरा कोई अमर नहीं हुआ। 'बपट' नहीं लही हुए। मिहम संघ का भारभोग इनका अधिक था कि उनक अनुमान मिम बनन के लिए, इयबरी में बनाय गये नाब के बड़ा में आकर बहुत म साम मिशु बनन लग। मिहम संघ की संख्या और प्रभाव बढ़न लया। 'बपट' के गायिया में तथा के उत्तर लक्षम अधिक पठिन थे। के एक मुग्गरी कम्पा पर मुग्ग हा गये। उन्होंने औरर दाइन का निश्चय कर लिया। मममान-बुमान का प्रयत्न निष्फल हुआ और गहून औरर दाइ मनाया बन गये।

पाइ निन बार्ड 'बपट' भी मर गये। मीनवी भातम्न तथा तामनिन्द बदात में बर्मप्रचार करने रहे। उनमें ममम हुआ था पर विन्म संघ बढ़ना ही गया और उनका प्रभाव मार बर्मा पर पड़ा।

मह बही समय या जब कि कुतुबुद्दीन ने सेनापति महम्मद बिन-अस्तियार ने नासम्बा तथा विक्रमसिमा को ध्वस्त कर दिया था और सारे मियु इतनी निर्भयता से मारे गये कि वहाँ के पुस्तकालयों के ग्रन्थों को पढ़कर बचसाने-वाला कोई नहीं रहा था। भारत में बिहारों और मिस्रुबां के सर्वनास के साथ महायान (बज्जमान) बौद्ध धर्म भी सदा के लिए लुप्त हो गया।

नरपतिविन्दु (१२१० ई.) का उत्तरविजयारी 'इतिशो-मितेस' (१२१०-१४ई०) न बौध गया के मन्दिर के समूह पर एक मन्दिर 'पमान' में बनवाया। उसके बाद 'ब्यासबा' गद्दी पर बैठा। 'ब्यासबा' स्वयं त्रिपिटक का विद्वान् था। कहते हैं उसने त्रिपिटक और उसकी मद्रुक-बाओं और टीकाओं का तीन बार पाठयज किया था। अपने अन्त-पुर की स्त्रियों के लिए उसने 'परमत्पविन्दु' नामक पुस्तक लिखी थी। 'सुबिन्दु' नामक व्याकरण की पुस्तक भी उसने लिखी थी। उसकी कन्या भी विदुषी थी जिन्होंने 'विमत्पत्थ' नामक पालि व्याकरण की एक छोटी पुस्तक रची।

'ब्यासबा' के पौत्र 'मरविहपते' अथवा श्रीविमुवाणादित्य परमबम्म-राज' (१२५४-८७ ई०) इस वंश का अन्तिम राजा था जिसके साथ ही जो सी बपों से बसी आ रही पमान की ज्योति बुझ गयी। १२८७ ई० में कुवमखान् की सेना ने पगान पर आकर अधिकार कर लिया।

२ अष्टम स्यम्म जोतिपाल—इनके ग्रन्थ हैं—(१) 'अभि-बम्मत्पसद्धेय' (२) 'बज्ज्यायननिहेस' (३) 'विनयगुल्लत्थपीपनी' (४) 'नामचारणीयक' (५) 'सीमासङ्कारटीका' आदि। ये कहते हैं—

'बुद्ध-निर्वाण के १६८० वर्ष पूरा होने पर वहाँ समूह 'अरिमहनपुर' (येगू) स तम्बपत्थि' (संक्रा) पहुँच थी पराक्रमबाहु राजा पठ को पा और अक्षयस्य स वम के ममो को अक्षी तरह गुबार कर 'अदबर्बन' (कोट्ट) नामक पुर में आपत्तिहीन विनयानुसार सीमा बँधवायी भिन्दुओं की 'विनय' और 'अभिषम्म' लिखाया प्रजा स बुद्ध हृदय

बाम जनों पर क्या निसर्गमत्ता पराक्रम और धीम के घुना से प्रगस्त
थडा क घनी मन्मूर्ण गिप्यों पर अनुकम्पा करनबासे

मारे बर्मा के माव त्रिपिटक-पारंगत 'छप्पट' नामक बलिप्राज के प्रिय
प्रिय न नाता धनी की इस परमम-हृहृषणा' को मुनि व धामन व रिताय
संतप से रषी ।"

बर्म छिन्न-भिन्न

मंगाला का आक्रमण हान से अम्य लोग बिनकुन निबल हा गय और
इसका साम नगको न उठाया । इसी समय उत्तर के घूमन्नु मड़ाब गान्
की बार बड़ और बबंहर की भीति व मारे बर्मा म फेन गय । उनक सामन
न अम्य रिषे म तसद । पहल उन्होंने मर्गाणा के सामन्त व ठौर पर धामन
करते हुए 'पिप्रिया' (बिजमपुर) को अपनी राजधानी बनाया और फिर
आबा' (गनपुर) में धामन शुरू किया १०८७ अपन एक मता 'बरेह'
की अमीनता में बधिणी बर्मा में पेयू को अपना दूसरा बेम्न बनाया । इन
बबंर के प्रहार न और बाउं के माय बिवा को भी बहुत हान हुआ मबिन
य भी मान्दित प्रभाव में अनुष्ण नहीं रह सके । उनका एक राजा
'धीरू' बीड हो गया । उनका हा भाई भी बीड य । मंगोल बिजय के
बा' यही तीना बर्मा के धामन से । बीड यम बीन और निष्पन्न में था
इसलिए धान उमम अरुचिबन नहीं य । 'पिप्रिया' में धीरे-धीरे बिजने
ही बिहार बन मन पञ्च-नाटन हान मगा । बुद्ध धान मैनिक छागिब बीड
धर्म के भी धामनबाब य मन उमका भी प्रभाव पड़ा ।

३ धम्मबेलिज (१४७० ३१ ई०)—देगू व राजा की मड़वी
का नाम 'गिन्' गा-बू या । वह पञ्च आबा और फिर पेयू में गनी गू बूवी
पी । वह अन्त गुर म भाग निरमता बागनी थी । 'धम्मपति' और उसके
माया भिषाओं न उमे पढ़ाया या । उनरी मतापता म भाग निरमन में
बा' मरुन हूँ और फिर पेयू की गनी बनी । दोनों भिषाओं में एक का गज
का भाग ८ या' मूरन जाना बागनी थी । दोनों में ममातमाव होन में
विषय उमन भाव्य पर छोड़ दिया । एक दिन एक मता -

स एक में गृहस्थ का बस्त्र और दूसरे में नीबर रत्न दिया । गृहस्थ परिष्कार नामा पात्र 'धम्मवेत्थिय' के हाथ में पड़ा । 'धम्मवेत्थिय' ने नीबर छोड़ दिन्-दा-बू की कन्या से ब्याह कर लिया । दिन्-दा-बू 'स्वर्गगत-वैत्य' में जा धर्म सेवा करने लगी । आज 'स्वर्गगत' का समय दिन्-दा-बू की ही बात है ।

'धम्मवेत्थिय' के समय सम्राट का सिंहास फिरे जमका । यद्यपि वह गृहस्थ हो गया था पर धर्म पर उसका अनुराग था । इसर जो संघ में विविधता आ गयी थी उसको हटाने के लिए उसने २२ भिक्षु ६ जनवरी १४७६ में सिंहास भेज । जो जहाजों में ग्यारह-ग्यारह भिक्षु अनुयायियों सहित चल । उनके अमुका 'चिनडूत' और 'उमडूत' थे । दोनों पीठों में 'चिनडूत' का पीठा २३ फरवरी १४७६ को लंबा पहुँचा और उसन सिंहास के राजा मुबनेकबाहु को 'धम्मवेत्थिय' का स्वर्गपत्र और भेंट थी । उमडूत का पीठा प्रतिभूत हुआ होने के कारण आठन म पड़ गया और वह १४ जून को सिंहास पहुँचा । बस्याबी संघा को सीमा बना सिंहास के भिक्षुओं ने उन्हें उपसम्पदा दी ।

२१ अगस्त १४७६ ई० को एक पीठा ग्यारह भिक्षुओं और उनके गिण्डों के साथ बर्मा लौटे । दूसरे पीठा पर आठन व्यापी और छह भिक्षु और उनुके चार गिण्ड मर गए । बाकी तीन वर्ष बाद १० नवम्बर १४७६ में बर्मा लौटे ।

ये कन्यानी सीमाबान भिक्षु हुए । राजा 'धम्मवेत्थिय' न मारे राज्य में पावना कर दी—जो यज्ञाम् है और सिंहास में उपसम्पदा प्राप्त भिक्षुओं से उपसम्पदा लना चाहते हैं यह बस्याबी सीमा में आवें और उपसम्पदा में । जो नहीं चाहत वे वैसे ही बँसे ही रह । राजा की घोषणा का प्रभाव हुआ और कुछ ही समय में १३,६६६ भिक्षुओं ने नवी उपसम्पदा ली । 'धम्मवेत्थिय' सिंहास में परिणत हो गया । 'धम्मवेत्थिय' न इसी संघ को नाम्यता दी । प्राचीन मोग-उत्तर की परम्परा सर्वथा उच्छिन्न हो गयी ।

४ मासुनिरु काल (१४७३) घेरवार की 'महाविहार-परम्परा' बर्मा में मानी जान लयी। अपट जातिपाल के समय भी कुछ पुस्तक सौग साण उत्तर के अनुयायी रहे थे। उस समय बर्मा कई राज्यों में बँटा हुआ था। १३२७ ई० में 'मोहन्त्या' (धीहन्त्या) जाति के मिहायल पर बैठा। वह बड़ा सामी और क्रूर था तथा विहार की संघति सूदन से बाज नहीं आता था। यही नहीं उमन धर्मिय पुस्तकों में बाज मगवा थी। भिक्षुओं को भोजन के लिए आमन्त्रित कर आज पर उन्हें मग्वा दिया। इस प्रकार से मारे गए भिक्षुओं की संख्या तीन हजार थी। पर बर्मी जनता धर्म के बिना रह नहीं सकती थी। बौद्ध धर्म नहीं उम सम्पत्ता संस्कृति बिधा दी थी।

घोहन्त्या के अन्त पर बर्मी सहायक अधिकारी मिन्विदानाद से यह अत्याचार महा नहीं गया। १३६३ ई० में उमन ही उम भाग आता। इसका कारण बताते हुए उमन कहा—“बहु विरक्त को सम्मान नहीं करता था मानव प्राण का कुछ नहीं समझता था दूसरे पुस्तकों की मित्रिया से अत्याचार करता था।” राजा की हत्या के बाद इमन राज्य मने से इनकार कर दिया और विरक्त हो अल्प में चला गया।

पालि ग्रन्थों का बर्मा में विरतना प्रचार था यह पद्यम के अतिरिक्त से ज्ञात होता है। मुद्राजीन प्रान्त के पामक तथा उमकी पत्नी ने १४४२ ई० में भिक्षुमय की अनन्त उपहार दानम्बर सेट दिये। उनमें और वस्तुओं के साथ पुस्तकें भी थीं। त्रिमकी यह सूची बता पर दी हुई है—

- १ पाठविशेष
- २ पाबितिय
- ३ त्रिकुनीविनय
- ४ विनयमंगल
- ५ विनयवृत्त
- ६ त्रिजपरिषा
- ७ पाठविशेष अठ्ठथा
- ८ पाबितियारि - अठ्ठथा

९. पापजिककण्ड - टीका
१०. तैरसकण्ड - टीका
११. विनयसङ्ग्रह - अट्टकथा (महा)
१२. " " (बुद्ध)
१३. कङ्कामितरणी - अट्टकथा
१४. सुद्धकसिक्खला - टीका (प्राचीन)
१५. " " (मधीन)
१६. कङ्काम-टीका (मधीन)
१७. विनयगच्छियह
१८. विनय-उत्तरसिञ्जय-अट्टकथा
१९. विनयसिञ्जय-टीका (उत्तरकाशीन)
२०. विनयकण्ठविहस
२१. भम्मसङ्गणि
२२. विमङ्ग
२३. धातुकथा
२४. पुण्यमपञ्चसि
२५. कथावत्तु
२६. मूसययत्त
२७. इन्द्रिययमक
२८. तिक्कपट्टान
२९. बुद्धविक्रमपट्टान
३०. बुद्धपट्टान
३१. अट्टसामिनी - अट्टकथा
३२. सम्मोहविनोदनी - अट्टकथा
३३. पञ्चपकरथ - अट्टकथा
३४. अमिधम्म - अनुटीका
३५. अमिधम्मत्थसङ्ग्रह - अट्टकथा
३६. " " - टीका
३७. अमिधम्मत्थविभाषणी - टीका
३८. सीसकण्ठ
३९. महाभाग
४०. पापय्य
४१. सीसकण्ठ - अट्टकथा

- ४२ महाबन्धु - अठ्ठकपा
 ४३ पापबन्धु - अठ्ठकपा
 ४४ मीनकण्ठ - टीका
 ४५ महाबन्धु - टीका
 ४६ पापबन्धु - टीका
 ४७ मूत्रपण्णाम
 ४८ मूत्रपण्णाम - अठ्ठकपा
 ४९. मूत्रपण्णाम - टीका
 ५० मज्झिमपण्णाम
 ५१ मज्झिमपण्णाम - अठ्ठकपा
 ५२ मज्झिमपण्णाम - टीका
 ५३ उपरिपण्णाम
 ५४ उपरिपण्णाम - अठ्ठकपा
 ५५. उपरिपण्णाम-टीका
 ५६ सामापबन्धुसंयुत
 ५७ सागायबन्धुसंयुत - अठ्ठकपा
 ५८ सागायबन्धुसंयुत - टीका
 ५९ निदानबन्धुसंयुत
 ६० निदानबन्धुसंयुत - अठ्ठकपा
 ६१ गण्डवन्धुसंयुत
 ६२ गण्डवन्धुसंयुत - टीका
 ६३ सञ्जायतनबन्धुसंयुत
 ६४ सञ्जायतनबन्धुसंयुत - अठ्ठकपा
 ६५ महाबन्धुसंयुत
 ६६ एतदुत्तर - अठ्ठगुत्तर
 ६७ चतुरनिगण - अठ्ठगुत्तर
 ६८. पञ्चनिगण - अठ्ठगुत्तर
 ६९ दसनिगण - अठ्ठगुत्तर
 ७० अठ्ठनिगण - अठ्ठगुत्तर
 ७१ दसनिगण - अठ्ठगुत्तर
 ७२ एतनिगण - अठ्ठगुत्तर - अठ्ठकपा
 ७३ चतुरनिगण - अठ्ठगुत्तर - अठ्ठकपा
 ७४ पञ्चनिगण - अठ्ठगुत्तर - अठ्ठकपा

- ७५ अङ्गुत्तर - टीका (१)
 ७६ अङ्गुत्तर - टीका (२)
 ७७ अङ्गुत्तर - मूल - अष्टकपा
 ७८ अङ्गुत्तर - मूल - अष्टकपा
 ७९ उदान - मूल - अष्टकपा
 ८० इतिवृत्त - मूल - अष्टकपा
 ८१ मूर्तनिपात - मूल - अष्टकपा
 ८२ विमानवत्पू - मूल - अष्टकपा
 ८३ पेतवत्पू - मूल - अष्टकपा
 ८४ पेरमाषा - मूल - अष्टकपा
 ८५ शरीनाषा - मूल - अष्टकपा
 ८६ पाठवत्पि
 ८७ एकनिपातजातक - अष्टकपा
 ८८ द्वयनिपातजातक - अष्टकपा
 ८९ त्रिकनिपातजातक - अष्टकपा
 ९० चतुर्क - पञ्च - छत्रिपातजातक - अष्टकपा
 ९१ सप्त - अष्ट - नवनिपातजातक - अष्टकपा
 ९२ दस-एकारदसनिपातजातक - अष्टकपा ११४
 ९३ द्वादस - तैरस - पञ्चदशनिपात - जातक - अष्टकपा
 ९४ बीसति जातक - अष्टकपा
 ९५ जातककी - सोत्तकी - निदान - अष्टकपा
 ९६ शूळनिहस
 ९७ शूळनिहस - अष्टकपा
 ९८ महानिहस
 ९९ " "
 १०० जातक - टीका
 १०१ कुमजातक - अष्टकपा
 १०२ मपदान
 १०३ " - अष्टकपा
 १०४ पटिमन्निदामम्य
 १०५ पटिमन्निदामम्य - अष्टकपा
 १०६ पटिमन्निदामम्यपठिगद
 १०७ विमुत्तिमम्य - अष्टकपा

१०८. विमुक्तिममा - टीका
 १०९. ब्रह्मसंघ - महकपा
 ११०. ब्रह्मिपिण्ड - महकपा
 १११. नामरूप - टीका (नवीन)
 ११२. परमरूपविनिश्चय (नवीन)
 ११३. मोहविच्छेदनी
 ११४. मोहपञ्चकति
 ११५. मोहनपत्र
 ११६. साङ्ख्यपति
 ११७. अणुवचति
 ११८. छगनिशीतनी
 ११९. महम्मरमिमामिनी
 १२०. दमबाबु
 १२१. महम्मबाबु
 १२२. मीहळबाबु
 १२३. देवबापण
 १२४. तपायतुप्यति
 १२५. धम्मपत्र (पबलनमुत्त)
 १२६. धम्मपत्र - टीका
 १२७. दागापानुसंम
 १२८. दागापानुसंम - टीका
 १२९. ब्रह्मसंघ
 १३०. टीका
 १३१. पूजकम
 १३२. अशासनसंम
 १३३. बापिकम
 १३४. महासंम
 १३५. महासंम - टीका
 १३६. धम्मपत्र
 १३७. महासंमबापण
 १३८. ध्याम
 १३९. पत्र - ध्याम - टीका
 १४०. महापत्र - टीका

- १४१ रूपसिद्धि - अट्टकथा
 १४२ रूपसिद्धि - टीका
 १४३ भासावतार
 १४४ बुद्धिमोघास्सान
 १४५ पञ्चिका - मोघास्सान
 १४६ पञ्चिका - मोघास्सान - टीका
 १४७ कारिका
 १४८ कारिका - टीका
 १४९ सिद्धत्वविवरण
 १५० सिद्धत्वविवरण - टीका
 १५१ मुक्तमत्तसार
 १५२ मुक्तमत्तसार - टीका
 १५३ महागण
 १५४ शूद्रगण
 १५५ अमिधान
 १५६ अमिधान - टीका
 १५७ सद्दीप्ति
 १५८ शूद्रनिवृत्ति
 १५९ शूद्रसम्पिद्धिसोचन
 १६० सद्दीप्तिमवधिन्ता
 १६१ सद्दीप्तिमवधिन्ता - टीका
 १६२ परसोचन
 १६३ सम्बन्धपिन्ता - टीका
 १६४ रूपावतार
 १६५ सहावतार
 १६६ सद्धम्मणीपक
 १६७ सोपमासिनी
 १६८ सम्बन्धमासिनी
 १६९ पदावहामहावचनः
 १७० ववादि (मोघास्सान)
 १७१ वनका (वृत्तचक्र)ः
 १७२ महाका (महाकृष्णापन)
 १७३ बालतण्डन

- १७४ मुत्ताबनि
 १७५ अक्षरमुम्नोहृष्टनी
 १७६ केनिडीनेनिगिदाया
 १७७ मनासनद्विददीनी
 १७८ बीरकम्पम्
 १७९ कञ्जादनमार
 १८० बायन्बापन
 १८१ अक्षयानिनी
 १८२ अक्षयानिनी - निम्पय
 १८३ कञ्जादन - निम्पय
 १८४ अक्षयिडि - निम्पय
 १८५ जालद - निम्पय
 १८६ जालदमणि
 १८७ अक्षयमणि - निम्पय
 १८८ अक्षयवा
 १८९ अक्षयम
 १९० अक्षयमिषवा
 १९१ अक्षयमिषवा - टीरा
 १९२ अक्षयमिषवा
 १९३ मिषा - टीरा
 १९४ रत्नमाया
 १९५ रत्नमाया - टीरा
 १९६ रागनिशम
 १९७ रत्नपुन
 १९८ रत्नपुन - टीरा
 १९९ अक्षयिषिनि
 २०० अक्षयिषिनि (आक्षयिषिनि)
 २०१ अक्षयिषिषिनि (० अक्षयिषिनि)
 २०२ अक्षयिषिनी
 २०३ अक्षयिषिषिनि
 २०४ अक्षयिषिषिनि
 २०५ अक्षयिषिषिनि
 २०६ अक्षयिषिषिनि - टीरा

- २०७ तमोगव्धि
 २०८ तण्डि (वण्डिण)
 २०९ तण्डि - टीका
 २१० बद्धुवास
 २११ अरियसम्भासण
 २१२ विवित्रपन्थ
 २१३ सखम्मपाय
 २१४ सारमङ्गह
 २१५ सारपिण्ड
 २१६ पटिपतिमङ्गह
 २१७ मूमङ्गारण
 २१८ पालयक (बामतर्क)
 २१९ त्रककभासा (तर्कभाषा)
 २२० सहकारिका
 २२१ काधिकामुत्तिपमिनि (काधिकामुत्ति-मामिनी-पामिनि)
 २२२ सखम्मवीपक
 २२३ सत्यतत्त्वबोध
 २२४ बालपण्णोवनमुत्तिकरण
 २२५ अल्पव्यास्यम्
 २२६ ब्रह्मनिदत्तिमञ्जूषा
 २७ मञ्जूषाटीकाव्यास्यम्
 २४८ मनुटीकाव्यास्यम्
 २२९ पकिम्भकनिकाय
 २३० अल्पपयोप
 २३१ मल्पपयोप
 २३२ रोम्यात्रा
 २३३ रोम्यात्रा - टीका
 २३४ सत्यकविपस्वप्रहास
 २३५ राजमत्तन्त
 २३६ पणमव
 २३७ कौमङ्गज
 २३८ बृहज्जातक
 २३९ बृहज्जातक - टीका

- २४० वाळापातुबंस - मूस - टीका
 २४१ पतिपबिबव - टीका
 २४२ अलकार - टीका
 २४३ पतिन्दपम्बिका
 २४४ वेदविभिनिमित्तनिठतिबण्णमा
 २४५ निवत्तिप्याक्यम
 २४६ बुत्तोदय
 २४७ बुत्तोदय - टीका
 २४८ मित्तिन्दपम्बु
 २४९ साररयसङ्गह
 २५० अमरकोस - निस्सय
 २५१ पिण्ढो - निस्सय
 २५२ कसाप - निस्सय
 २५३ रोयनिणानप्याक्यम्
 २५४ इग्गमण - टीका
 २५५ अमरकोस
 २५६ दण्डी - टीका
 २५७ " "
 २५८ " "
 २५९ कौपय्यज - टीका
 २६० जमंवार
 २६१ अर्णवार - टीका
 २६२ भसग्गमञ्जूसा
 २६३ पुद्धजय्य
 २६४ यत्तमत्रमा - टीका
 २६५ विरण्य
 २६६ विरण्य - टीका
 २६७ वूत्तमणिमार
 २६८ राजमत्तन्ठ - टीका
 २६९ मूयुबच्चन
 २७० महावामचण
 २७१ " " - टीका
 २७२ परीत्रिक

- २७३ कल्याणन - स्थावठार
 २७४ पुम्भरसारी
 २७५ वस्वावठार (तत्त्वावठार)
 २७६ " - टीका
 २७७ म्यायविणु
 २७८ म्यायविणु - टीका
 २७९ हेतुविणु
 २८० हेतुविणु - टीका
 २८१ रिक्कणिययात्रा
 २८२ रिक्कणिययात्रा - टीका
 २८३ वरित्तप्पाकर (वृत्ताष्टाकर)
 २८४ क्यारामित्ठिकम्भ
 २८५ मूत्तिसङ्गह
 २८६ मूत्तिसङ्गह - टीका
 २८७ सारसङ्गह - निस्सय
 २८८ रोगयात्रा - निस्सय
 २८९ रोमविदान - निस्सय
 २९० सद्दत्तभेवविष्ठा - निस्सय
 २९१ पाण - निस्सय
 २९२ क्यारामित्ठिकम्भ - निस्सय
 २९३ बृहज्जातक - निस्सय
 २९४ रत्तमाला
 २९५ मत्तुत्तिसङ्गह

(४) कपिलीह (१५२१-८१)—तुम्भू का राजा 'मिन्किम्यो' (१४८६-१५३१) धामिक राजा था। उसने बनक विहारों का निर्माण किया। उसके पुत्र ने 'पेयू' की नील निया और क्यच 'मत्तवान' और 'मौव' पर भी अधिकार कर लिया। तर्क देय कपी धी भ्रम्म मोर्पो के हान में था और वहाँ के कपी राजा के उत्तराधिकारी ने सम्पूर्ण कपी को एक मूत्र में बाँधने का कार्य सम्पन्न किया। बहु व्यक्ति 'कपिलीह' (१५२१-८१) का और क्यच का समकालिक था। तर्क मोर्पो के विरोह को पालन कर उत्तर पहले 'पेयू' की मिया फिर कपिल और उत्तर

बर्मा ही नहीं पान् राज्यों को भी अपने अधीन किया। वह बौद्ध धर्म का मन्त्र था। उसका रंमून के 'इवेदमोन्' प्रीम के 'इवधन्दा' और पगान के 'वेत्रियोन्' आदि विहारों की अनेक बार यात्रा की तथा और किन्त ही विहार तथा चैत्य आदि बनवाये। पान् लोगों में धर्मप्रचार का विशेष प्रबन्ध करने किया। उसका राज्य बर्मा में बाहर कम्बोज अयोध्या (स्याम) और मुखोरया (ऊपरी स्याम) आदि तक फैला हुआ था वहाँ उसने अनेक श्रेष्ठ पुत्र अनुदक को उत्तराज बनाकर भजा था।

बनिमौत्र के बाद राजाशक्ति लीन हुई। १२६६ १६०० ई० में अराकानियों ने येनू मपर को मूटकर ध्वस्त किया। बर्मी लोग तर्पेड़ों से एका नहीं कर सके।

अपीइया (१७१७ ६०) का नाम हम उस समय में आ जाते हैं जब अरबों ने भारत में अपनी नींव डाली थी। तर्पेड़ों ने आका पर अधिकार कर लिया पर यह नहीं मुरा। इन तर्पेड़ों को उत्तरी बर्मा से निकाल बाहर किया। १७११ २ में इन तर्पेड़ों के गड़ रपून को भी म लिया। अपीइया ने तर्पेड़ों के विरोध में मिथुओं को भी नहीं छोड़ा और उन्हें हाथियों में डूबना कर मरवाया क्योंकि पटपट में वे भी सम्मिलित थे। जो भिक्षु बच गये वे निकल गयी के पार क नगरा में भाग गये। बर्मी सैनिकों ने हाथ लप तर्पेड़ स्त्री-मुहरों को दाम बनाकर बाजार में बेच डाला। न बच्चे अपनी माताओं को छोड़ देने से न माताएँ अपने बच्चों को मारे देण में इच्छा मचा था। इस प्रकार में अपीइया ने बड़ी निर्भयता से तर्पेड़ों को बचाया। यह एतना बड़ी कीमत देकर बायम की गयी। रिछन दो गी बरों में लोनी जानियाँ पीरे-पीरे इनकी पुनर्मिल गयी कि आज तर्पेड़ नगरों में सर्वत्र बर्मी माना ही होती जाती है और पानो में ही तर्पेड़ बौद्धधर्म का घर उद्गरे हैं। प्ला-प्लारी का कारण भी दोनों जानियाँ बहुत पुनर्मिल गयी हैं।

(२) धार्मिक विचार—इसका विचार न करने पर १७०६ ई० का

प्रायःपास बर्मा भिक्षुओं में चीवर कर्मे पर रखन के डंभ को लेकर विवाद खड़ा हो गया। उत्तरराज (ऊपरी चीवर) को बाहिना कन्या खोस कर पहनने को ठीक बतलान बाल एकाधिक कहे जाते और दोनों कर्मों को बाँकनेबाँके पादपत्रबाणी। एकास्तिका पत्र का समर्पन प्रभावशाली स्वर्णिग युगाभिसंस्कार ने किया। पादपत्रबाणी (प्रारोक्षण) राजा होने से पीरे-पीरे सम्पूर्ण बर्मा पादपत्र-बाणी हो गया। राजा कौत्ति श्री राजसिंह के समय स्वाम से भिक्षु बुला कर सिंहस में भिक्षुसंघ स्थापित किया गया। राजा तमिल ब्राह्मणों से प्रभावित था। उसने चर्त रखा कि भिक्षु सिद्ध योवी (उत्त) जाति के ही लोग बनाय जायें। बौद्ध धर्म के लिए यह तीव्र साधन की बात थी पर आज भी बहुसंख्यक स्वामी-निकाय इसका मानना है। इसी जातिबाँके कहे इसको मानते? १८० ई० में 'अम्बगहपति' के नवतुल में कुछ सिंहस तदन उपसम्पदा सेन बर्मा पहुँचे। बर्मा संभराज ज्ञानाभिसंघ ने उनकी प्रार्थना मंजूर की। उन्हें उपसम्पदा मिल गयी। अयोवी भिक्षुओं के लिए अब रास्ता खुल गया। उस समय बर्मा की राजधानी ममरपुर थी और वही इनकी उपसम्पदा हुई। इसीलिये य 'ममरपुरनिकाय' के बहे पये। इसके बाद बर्मा से उपसम्पदा प्राप्त भिक्षुओं का एक और भी सम्प्रदाय लंका में स्थापित हुआ जिसे 'उमम्भानिकाय' कहते हैं।

'बोराक्षपय' के समय (१७८२-१८१६ ई०) ये ही बटलाई बटीं। उसके बाद बौद्धिशा (१८१६-१७ ई०) राजा हुआ। इन राजधानी को ममरपुर से भाबा में परिवर्तित की। उसे सिंहसस से बचित होता पड़ा। दो और राजाओं के बाद 'मिन्-योन् मिन्' (१८२२-७७ ई०) गली पर बैठा। उसके समय में उत्तरी बर्मा में शान्ति रही कुछ प्रगति भी हुई। वह राजधानी को माँहय से गया। इसी के समापतिष्क में लयातार तीन बर्मा लरु त्रिपिटक का संशोधन किया गया। फिर उस ७२६ संवत्सर की पट्टियों पर खारा गया जो आज भी माँहय के पास 'कुपो-बाष्' विहार में मौजूद है।

१ पञ्चम और स्वतंत्र बर्मा—मिन्-बोन्-मिन् के मरने के आठ वर्ष बाद ही १८८५ ई० में माइस पर अंग्रेजों ने अधिकार कर लिया। अन्तिम राजा बीबो (सिब) को कैदी बनाकर भारत भेज दिया गया। अंग्रेजों ने बर्मा और तमिल दोनों के भाग को जारी रखा। बेटनों का ईसाई हो जाना उनके काम में सहायक हुआ। १९४८ में स्वतंत्र होते ही बर्मा ने बौद्ध धर्म को अपना राज-धर्म घोषित किया। इस राजनीतिक इतिहास को उद्यम युग में बर्मा में बौद्धधर्म भी जमता रहा। छापेजानों के गुप्त जान पर त्रिपिटक के नये संस्करण निवस।

१९१४-१५ तक बर्मा में छद्म सत्तापन का आयोजन रहा और साथ में में पाणि त्रिपिटक तथा अष्टनपाएँ आदि मुद्रित हुईं। इसी संस्करण को आधार बना कर सम्पूर्ण त्रिपिटक मिथु आगरीन वास्तव के नेतृत्व में भारत में देवनागरी में प्रथम बार सम्पादित हुआ।

बर्मा तथा पाई मुमि में मिथुओं के लिए कबिता करना अनुचित समझा जाता रहा है इसलिए उन्होंने व्याकरण तथा अभिधर्म को अपना मुख्य विषय बनाया। वहाँ (बर्मा) उत्तरीमरी नदी में 'गन्धर्वम' (ग्रन्थों का इतिहास) तथा 'मामनर्वम' (बौद्धधर्म का इतिहास) नामक दो ग्रन्थ मिले गए। 'गन्धर्वम' में दन्तुप पाणि ग्रन्थों की सूची दी हुई है तथा बर्मा में सिंगर गये ग्रन्थ वहीं पर द्रष्टव्य हैं।

७ पञ्जातसमी—य उत्तरीमरी नदी में हुए और इन्होंने 'मामनर्वम' नामक बौद्ध धर्म का इतिहास विगारकर बर्मा के लिए लिखा। इस 'पाणि टेवन् मोगायनी' (नरन) न १८९७ ई. में प्रकाशित किया। ये मिन् बोन्-मिन् राजा के पिता न।

१ ३०—भारततिह उपोप्याय "पाणि साहित्य का इतिहास"।

इस ग्रन्थ में इस परिच्छेद है—

- (१) बुद्धपरिषदादि तथा मज्झिमा-सुत्तों में शासन-प्रतिष्ठा की कथा
- (२) सिंहल द्वीप में शासन-प्रतिष्ठा की कथा
- (३) सुवर्णभूमि में०
- (४) 'बोजक' राष्ट्र में०
- (५) वनवासी राष्ट्र में०
- (६) अरघ्य राष्ट्र में०
- (७) काम्भीर-गान्धार राष्ट्र में०
- (८) 'महिषक' राष्ट्र में०
- (९) महाराष्ट्र में०
- (१०) चीन राष्ट्र में०

भौगोलिक नामों के सम्बन्ध में 'पञ्चासामी' न जी गमती की है, यह लक्ष्य है। उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में एसा ही भौगोलिक अज्ञान हमारे देशों में था।

दूसरा अध्याय

२ घाई वेदा में घेरवाह तथा पालि

(१) घाई जाति—घाई जाति का सान् जाति से सम्बन्ध है। घाई मूभि में मान से पहल बह 'सुमन्' में छड़ी थी। बंगाल की खाड़ी से प्रचलित महाभाष्यर तक मुत्तयमा चीन-मंगोल मुत्तमुद्रावाणी जातिनी बसती है—(१) निम्बडी-बनी (२) घाई चीनी और (३) मानमेर। इनमें सबसे पुरानी जाति मानमेर है। मात्र इत जाति की छायाएँ कम्पा में लेकर मेरान तक तथा बर्मा होते हुए कम्पोर तक पायी जाती है। यह है—उमम माहुप के माहुनी मतापी क्योरी माना-जीति के मारदा जोहि यापी घर-ब्यापी छत्री मगर, गुरुप छपग नबार, किरापी सपचा मागा केरन मादि। इनको निम्बडी लीप मौनुपा कहत है। उनके छत्र के बाग्न प्रदेय का नाम मौनुपु है। इनमें नबार, बर्मा के मोनु (तर्पद) बेरेन भी है। इसी सन् के मारम्भ या कुछ पहल के सामन्ती सम्पत्ता बायम करन में मरुन हुए से। पीछे से बीर पर्य के सम्पर्क में आय। उनक खाति छत्राबां के पूर्वक प्रायः भारतीय छत्रबन्दी के मामल प। इनलिए शाह-घर्मों के प्रति बापह हाना उनका स्वाभाविक था।

(२) मानुबाह—जब भारत में सब महापात फैल गया और मानुबा विक्रम-गिता के एक म एक पुरंवर बिडान् उमरु अनुपानी हो गये तो बर्मा स्वाम मादि में भी उमी की दुम्बुमी बजन लयी। परबाद की पुन-स्वायता के समय कम्पोर में महाजन था। घाई मूतन उनर के खनवान से बरी अब भी स्वायत्त जातिन त्रिप है और स्वाम की तरह परवार बनता है। घाईनों (गाईनों) की एक जागा 'बादगाई' है। जत्रफन शाही की संख्या ६६ मान है। बहादवी प्रशय में उनका बहु मत है और अब उस प्रदन को बहाद म्बापत मूतन बरने ए त्रिपनी

राजधानी नासङ्ग एक समूह नगर हैं। व्याह भूखण्ड में प्रवेश है जहाँ १२ लाख पुत्री बसते हैं। वीनों के सहोदर दो अलग-अलग स्वायत्त इलाकों में ठाई बसते हैं। ये मुश्किल से दो लाख होगी पर उनके भाई-बन्धु बर्मा (छा) और माव के निवासी हैं।

किसी समय व्याहची नदी के दक्षिण की चीनी भूमि था थी। हानू (चीनी) जाति दक्षिण की ओर बड़ी थी 'व्याह-ठाईयों' को आरमासात् कर लिया। दक्षिणी यु प्राणाय बराबर बना रहा। इन्हीं की भूमि से होकर ई चीन का व्यापार मार्ग था जिससे जानबोसे चीनी माल व घटावनी के चीनी यात्री चन्द्रग्याह न दक्षिण (बर्मा) इस मार्ग के पूर्वी ओरबोसे मार्ग के स्वामी ठाई लोग से। से उनको बहुत क्षाम था। इसलिए द्युका रास्ता किन्तु की भी मान्य नहीं था। इसी मार्ग द्वारा भारतीय समूह किन्तु ही भारतीय बहाँ बस गये। सामन्त राजकुमार के लिए बहाँ पहुँचे जिन्होंने उसे गान्धार नाम दे दिया।

यह भूमि ऐतिहासिक काल में गन्धाउ के नाम से उल्लेख के प्रमाण में धारे ठाई नहीं आय। नियम देखा ही जाता है। बाद काल में गान्धाउ के राजा का यहाँ के राजा ईमोमून न चीन में दूत भजा था। बर्मा की ८३२ ई में सूटकर अन्त करने बाद गन्धाउ क चीनी उन्हें लड़ाई मानते थे। उनको समुद्र रक्षक के ने बँधे ही उनके राजा को बामाद बनाया जैसे व तिम्बल। ये। इसी तरी के आसपास व दक्षिण की ओर व उनकी बीरता को देखकर कम्बुज राजा उन्हें खानी कम्बुज की शक्ति का ह्रास देखकर पारि सन्धार अपन अन्व्य स्थापित काल में सफल हुए। वर्तमान उत्तरी व

का पहल से ही मौनों म स लिसा बा जहाँ मैनाम् नरी की एष घासा के फिमारे उनका समूह नगर 'हरिपुत्रय' बसा था। इस आजकल ब्यदमई कहा जाता है। यही घाईषों का समय पुराना राज्य था। उन्ही क कारण युगन् (बीन) क घाई भाज भी बरबारी है जब कि मारे बीन में बेबस महानाम का नाम मुना जाता है। बर्मा का हरिपुत्रय से सम्बन्ध प्यारहवीं सरी म हुआ। ईषिद और फाशियान की यात्राका के उतरणां में रिमम ही बिहारों का बणन हमें प्राप्त होता है। गान्धी प्रांती मनी के भारत तथा बृहत्तर भारत में सर्वास्तिवा का समाप्ति हा गयी थी। महायान ने समय पहल उस ही उदग्मात् किया। पर यहाँ उसका बिनय बउबर बनता रहा क्योंकि महायान का अरना बिषय बिनय नहीं था। बिनय मगीधिनवार (मूममगीधिनवार) का भाज भी निबन में चलता है। उनी के अनुसार निगुमों क उगमनादी ही पाठी है यद्यपि निम्न का बीड धर्म मगयान में भी बा क काम भाग बढ़ा हुआ ब्ययान है।

(३) हरिपुत्रय—हरिपुत्रय में घाई समय पाम बरबा में भाय। उनके प्रतिहाम 'बिननाममापी' में आया है—हरिपुत्रय राज्य १०२४ ई० में स्थापित हुआ। कम्बाज पहल ही निबन हो चुका था बिनक राज्य में हरिपुत्रय पड़ना था। १२८० ई० म पगान क ब्यस्य होत पर घाई गान्धी को मुना करने का मौता मिया। घाई मरुतार 'बिदम' म 'पोर' राष्ट्र में हरिपुत्रय मे सगा बिदमई नगर १२६०-६२ ई० में बसा कर उस मानी राजधानी बनायी। उस समय गुगोन्दा कन्वोजकी पतिवनी राजधानी थी जिने घाई मरुतारइन्द्रा बिय म १२१० ई० में स गिया था। गुगोन्दा को प्रमुग स्थाप रिपान बाना राम (गन्त) था। राजनीतिक और मारुतिक दोनों दुषिया म उनका सामन बहुत मरुद गता *। हरी म कम्पीर निरि की मगदना म घाई निरि बनायी। द मरबा का भेया ही मका था जेया बर्मा का पम्पबनिय या पगान का जनक। यह प्राग्म में करने मग में निगना है—

*विमुक्ति २१ वा दूकदु दन क बीन भाग की दुषिया मुदरार को समाप्त

राजधानी मानस्य एक समुद्र नगर है। अशोक मूर्च्छा के उत्तर में 'स्वेदपाठ' प्रदेश है जहाँ १२ साल पुनी बसते हैं। बीलों के सहोदर, बलिज मुमन के दो बलम-अलम स्वामय हलाकों में छोई बसते हैं। यद्यपि उनकी संख्या मुश्किल से दो लाख होगी पर उनके छोई-अनु बर्मा (छान्) स्वाम (छाई) और लाल के निवासी हैं।

किसी समय यज्ञवी मरी के दरिभ की चीनी नूनि छोई (छाई) जाति की थी। हान् (चीनी) जाति दक्षिण की ओर बढ़ी और उत्तर कितने ही व्यास-छाईयों की आरम्भ कर लिया। दक्षिणी मुमन् में छोईयों का प्राबल्य बराबर बना रहा। इन्हीं की नूनि से होकर ईना पूर्व के भारत में चीन का व्यापार मार्ग पर जिससे जानेबाने चीनी माल को ईना पूर्व त्रितीय छतायी के चीनी पायी अद्वयपात्र न दक्षिणा (बलर) में देखा जा। इस मार्ग के पूर्वी छोरेजार्न मार्ग के स्वामी छोई लोन ब। इस व्यापार मार्ग से उनको बहुत लाभ था। इसलिए इगुडा एस्ता कितन ही समय तक चीन को भी मानस्य नहीं था। इसी मार्ग द्वारा भारतीय संस्कृति वहाँ पहुँची। कितने ही भारतीय वहाँ बस गये। सामन्त राजकुमार भी भाग्य-परिहा के लिए वहाँ पहुँचे जिन्होंने उन मास्यार नाम दे दिया।

यह भूमि ऐतिहासिक काल में मनुष्य के नाम से चीन में प्रसिद्ध थी। संस्कृति के प्रभाव में सारे छोई नहीं आये। नियम विनाश जातियों में देखा ही जाता है। अशोक काल में मनुष्य के राजा का उल्लेख मिलता है। यहाँ के राजा ईमोमून न चीन में हुए नेता था। बर्मा की कुलीन राजधानी की ८३२ ई० में मूटकर प्यस्त करन वाले मनुष्य के छोई (छाई) ही थे। चीनी उन्हें लड़ाई मानते थे। उनकी संस्कृति एतने के लिए बाद-सम्राज्यों ने बीछे ही उनके राजा की दामाद बनाया जैसे ब तिष्ठन के सम्राट् को बनाते थे। दक्षिणी मरी के आरम्भ के दक्षिण की ओर जाकर बसने लग। उनकी बीरता को देखकर कन्सु राजा उन्हें अपनी सेना में रखते थे। कन्सु की पत्नी का ह्रास देखकर छोई सरदार अपन छोटे-छोटे पहाड़ी राज्य स्थापित करने में लक्ष्य हुए। वर्तमान उत्तरी छोई भूमि (स्वाम)

हुई। श्री सम्बन्ध-सुतोपमा के राजा मित्तक तथा रामस्येक के पीत्र ने सम्बन्ध-सुतोपमा पर कई बप राज्य करने के वाय 'मूमिक' माता को अधिकार पदान के लिए मिला। उसके आचार प्रत्य य—'विनासकार' 'साएय वीपनी' 'बुद्धवध' 'साएयवध' 'मिलित्वपञ्च' 'अनागतवध' 'अरिया-पिटक' 'मोक्षप्रवृत्ति' 'समन्तपासाधिका'। अब प्रत्य ठठ सद्धा है, राज-वध के राजा न कसे एमे विद्वत्ता-पूर्व प्रत्य को मिला। उत्तर है—परमसुट्ट-रक विपिटक पारयठ वे। उम्हने भरत 'अनोभवस्ती' 'उपसेन' वैसे पठितों से सम्पदन किया वा और हरिपुत्रयवासी भरत बुद्धवध से नी पचाचार करके पडा वा। विद्व-मई (हरिपुत्रय-मोनरु) न परवाव को अपमान में पीयता की थी। इसलिए बाइया में सबसे पहल उम्हने पालि के प्रत्य मित्तक। उतप्रत्य के प्रत्य 'विनकासमासी' से बहुरठे उडरण बागे दिये गय है। पम्हरी सरी के आरम्भ में वही के स्वधिर 'बोधिरसि ने सिद्धबुद्धकल्पितान' और 'आमरेवीरस' नामक वा इतिहास प्रत्य मित्ते।

(४) मयोप्या इारकती—१३२० ई० में एक बाई राजकुमार ने सुतोपमा से दक्षिण मयोप्या की स्थापना की और वही रामाधिपति मुबने बोल के नये नाम से अपना अधिपत कयवा। सुतोप्या निर्बल हो चुकी थी। १३७८ ई० में मुत्तारयाधिपति ने मयोप्या का सामन्त होना स्वीकार किया और १४३८ ई० में सम्पूर्ण विलयन नी। हरिपुत्रय (विद्वमई) न अधिक उत्तर तथा बर्मा के समीप होने से कुछ समय उनसे अपने को बचाया पर अरिस १५२६ ई० में समने अपना स्वतन्त्र अस्तित्व को दिया। अब बर्मा की सारी पूर्वी सीमा बाई राज्य से मिसी हुई थी और किसी काल का एक बड़ा साम्राज्य कम्बोज अब स्याम की दमा पर वा।

बर्मा ने स्याम की पराजित कर १५६६-८४ ई० तक अपने अधीन रखा। इच्छे पहले स्याम में भारतीय राजाध्य बसता था। किनी समय सिहम कम्बोज आदि में भी राजाध्य का रिवाज था। नवान में अठारवी सरी के बार तक राजाध्य बसता रखा। बर्मा में किनी बड़ी विजय के उपसहय में १३८ ई० में एक नवत (राक) बसाया गया वा बाहर से लिया गया।

बानी विजय के विद्व स्वकय बर्मा न अपन संबन्ध को स्याम पर माना । इउ प्रकार १९६८ के बाद वहाँ भी वही संबन्ध बयन मया त्रिस भारतीय सरकार ने निरत करन के लिए बूम (घाटा) गक रहन है ।

अयोध्या में मुसौन्दा में राज्य के माय-साय परबाद की भी उत्तरा विहार में पामा । यद्यपि बर्मा और स्याम दाना अबदल्प परबादी रग प, परपुत्र के समय मनु क माय काह दया विजलाल के लिए लैचार नहीं हुआ । अग बर्मा सेनाओं में स्याम के बीउ विहारों और मूर्तिया क माम बैमा ही व्यवहार किया जैसा बकिहार विजयी की मना न मामन्दा और बिष्म जिता की मूर्तियों के साथ किया हुआ । पालु की विगत मूर्तियों पर मोने की परत चढ़ी हुई थी । उले निकालन के लिए मूर्तियों को तोड़कर बाप में दान दिया गया । अयोध्या की तो सबनुष ईद म ईर एनो बकी वि उसका किर से बनाना बर्ननर समना मया और नय गत्रा फावा-भाऊ-मिन् ने वहाँ से हटकर संसार में राजराजी बनाना पम्न किया ।

अयोध्या काय की एक और महत्वपूर्ण बात है स्याम का मिह्व के धर्म रूप से उच्छ्व हो जाना । पार्सुगीकों क धर्मिय दामन (१९२७-१९३८ ई०) ने मिह्व से बीउ धर्म का उगाड़ फॉरम में कीर्द बसर उग नहीं रगी । मिह्व के सैयोनिक उन्ही की रन है । मिह्विया ने अपनी मंगृति और धर्म की रक्षा के लिए बेग के बिचने पहाड़ों को मगाड़ बना रगा पा पर निगु-नय मण हा बुवा पा । मिह्व छ निमन्धन माल पर अयोध्या के राजा ने १७४२ ई० में दहासबंर उगाति के माय दिन ही म्पिरों को मत्रा रिगाले मिह्व में निगु-मय की स्यामना की । मात्र बिष्म के विलुकों की अपिर मंग्या 'म्यावी-निवाय' (उगाति-रंग) की है ।

'शाऊ-मिन्' के बाग मेगाति बकी में मने मत्रबं की स्यामना की जो मात्र तन बना या रग है ।

(३) बकिरमाण तंपरात्र—२ १८ ४-१ ई० मत्र लंबरात्र ग्हे और बाद में १८३७-१८ ई० तत स्याम क राजा । बकिरि बपिबारी राज मही प पर प्रमाणी रवाग्यी न अउरबतिव माना क नैगपुत्र

को यही पर बैठाया। 'ब्रह्मिन्मात्र' में कोई विरोध नहीं किया। उसने अपने व्यवहार से सीनेम भाई राम तृतीय के हृदय को जीत लिया। अग्रे १३२१ ई० में उसके मरने पर २० वर्षोंके बाद उसे ही यही पर बैठाया गया। 'ब्रह्मिन्मात्र' के पत्रों और पद्या से मालूम होता है कि उनका पाणि पर असाधारण अधिकार था। ये अंग्रेजी भी जान सेंते थे। मराठी और फ्रेंच इन दो साम्राज्यों के बीच में रहकर स्वाम की सत्ता का मताने रखने में इनका बड़ा हाथ था। इन्होंने संभराज होने के समय अपने 'रामस्वयं (बर्मा) निवास' में मुधार के 'धम्मयुतिक' नाम से उसे जाव बढ़ाया था पर स्वाम में निम्बुजा की सबसे अधिक संख्या 'महानिकाय' का ही मानती थी। 'महानिकाय' के रहने वाली थी वही से ही पाईयों में जाता आ रहा था। असांति के समय मायों बर्मा पारवादी स्वाम में कम आय जिनके माय उनके बिल (रामस्वयं) भी स्वाम में जा बस जो अंग्रेजी वाली में स्वाम के राजबंदिगो को अपनी और लीजने में सफल हुए, जिसके उपाह्वान स्वयं 'महामुकुट ब्रह्मिन्मात्र' में। शाय-उड़ सो वर्षों तक उन्हीं में से स्वाम के संभराज होने से। अमी हाल में ही 'महानिकाय' का संभराज बना है।

(१) ईसाई बनाने का पड़पात्र—सम्राज्ञी वाली के पूर्वाप में ही जब फ्रेंच और अंग्रेज स्वाम को हड़पने में लगे हुए थे। अयोप्या के राजा 'गण्ड' (नारायण) की अन्न प्रयास में मारने में (पहले अंग्रेजों और पीछे फ्रांसिसियों का समर्थक) एक श्रीक महागय 'करकान' सफल हो गए। वे अपने ही गये कैथोलिक नहीं बल्कि प्रचलित पाईयों को भी कैथोलिक बनाना चाहते थे। बीड बर्म बहुत गहराई तक पहुँच गया था। मरई को जाव बढन की हिम्मत नहीं हुई। जब फ्रेंच लोग के साथ फ्रेंच मना भी बंकाक पहुँच गयी तो म्यामी फ्रांसिसियों के उद्देश्य का समझने लग। उन्होंने 'कलकौत' को फानी पर लटका दिया। मुँ की मेता कटिना में भाग गयी। स्वाम में उठने ही ईसाई में बन गठ जिनके विपत्तनाम में है।

स्वाम में भी काम रचना बीड निम्बुजा के लिए उचित नहीं समझी

जानी इनमिए ध्याकरण बाकि ही उनके सिखने क बिषय होते है । आपुनिक यंत्रों में मुद्रित लिपिकर स्थान में ही पहले पहल छपा ।

(७) छनपञ्चा (१५१७)—अर इनक ग्रन्थ 'जिनकाममासी' का उल्लेख किया जा चुका है । पानि के इस पद्यमय इतिहास में ये लिखते हैं—

त्रिरान-बन्दना

"ज्ञानस्त्री किरण मष्ट बर्म-स्त्री किरण द्वारा माह के अत्यन्त बने मन्थकार को मष्ट कर, जिसत विनय के पात्र तीनों बन्धुस्त्री बर्मों को निसाया उम बुद्धस्त्री सूर्य की म बन्दना करता हूँ ।

मय-सहित बुद्ध और बर्म को नमस्कार कर मैंन जा बहुत पुष्पप्रवाह प्राप्त किया उसमे मष्ट-बाधाबाधा हो मैं 'जिनकाममासी' नामक ग्रन्थ को बहता हूँ ।"

हरिपु जय घणन

"गान्धा के परिनिर्वाण के १२ ४ वर्ष बाद (१११ ई०) इस जूल पलाय के बाईसवें वर्षमें फ्राय्गुन पूजिमा को 'बामुदेव' नामक ऋषि न 'हरि पूजय' नगर को बसाया । उसक दूसरे सात 'बम्मदेवी' में सबपुर (भाय) में जाकर 'हरिपुंजय' में राज्य किया । उसके पात्र जूल-राजाय ४०१ में आरिण्य राजा का हरिपुंजय में अधिपक हुआ । उसके परचात् जूल-राजाय ४२१ में हरिपुंजय नगर में महापालु का प्राप्त होना पुरानी कथा में जाता है जा वही के राजवंश के इतिहास-क्रम में प्राप्त होता है । प्राचीन समय में बानुरेव मुरन्दत बुद्धवदित अत्रग्या में सापू हुए ।"

संभा द्वीप में मिट्टु-मय की स्थापना

"के स्वदिर एक मय हो क्मया मिट्टु द्वीप में 'बजरान' स्वामी के पाम जा अभिचारन कर, मयुर बजन से सत्कार कर वहाँ एत मय । उन स्वदितों और रम्मनिशामी (रामम्मावामी) छः महापदिर-सम्पूर्ण उतनामीम स्वदितों ने मिट्टु द्वीप में प्रचलित बरारपरमय उदनुसार

प्यामादि और उच्चारण-क्रम को मिला उत्तम अर्ध कौ बामना से उपसम्पन्न पाने की प्रार्थना की।

शास्ता के परिनिर्वाण से १६६८ वर्ष बाद (१४२५ ई०) एक संस्कृत ७८६ में महासर्ग वर्ष में द्वितीय आपाङ्ग मुख्य परा दादही शनिवार, ठैरस तिथि प्युष्ठा मत्त के योग में विद्यमान सिंहसराज (पठ पराक्रमबाहु) द्वारा 'बम्मायी' नामक नगर में बने बेड में आरोहण कर 'बम्माबाचार्य' 'बनरत्न महास्वामी' और उपाध्याय 'बम्माचारी' के साथ बीस पणबान संघ द्वारा उपसम्पादित किये गए।

वे स्वधिर उपसम्पन्न हो बन्तपातु, 'समन्तकूट' क परबिहू और सोसह बुभिल के मय से वे सिंहण द्वीप में चार ही मास रहे। लौटते समय उन्होने उपाध्याय के कार्य के लिए महाबिक्रमबाहु और उत्तम प्रज्ञ की स्वधिरों एवं बन्धना के लिए बज्जालु माँगी। उनमें बिक्रमबाहु भिक्षु होण से १२ वर्ष के और महाउत्तमप्रज्ञ १० वर्ष के थे। बहारा म आते समय बहू स्वधिर और सोम स्वधिर से भेंट हो गयी। उन दोनों महास्वधिरा को भी समुद्र में ही उपसम्पन्न कर 'अपोध्यापु' में अपोध्याभिपति 'परमराज' की राती के गुरु श्रीमन्निगुडि महास्वधिर और सर्वमकोविद महास्वधिर को सम्पादित किया उसक बाद 'सुव्रनालय' म पहुँच बहू 'बुद्धमागर' स्वधिर को उपसम्पादित कर पीछ मुत्तोदया में छ वर्ष रहे।

तीसरा अध्याय

३ कम्बोज और साव में घेरवाव तथा पालि

१ साव में घेरवाव

साव के साग भी घाई खाति के ही है। हरिपुंजय के स्वामी लौरो में सब परबाद स्वीकार किया तब सावों का भी परबादी होना स्वामाधिकार। घाईयों का यह प्राचीन धर्म होने से मुझन् ठाई भी घेरवादी हैं यद्यपि उनका पड़ोस का भीन महायानी है। परबाद की सरसवा और मिसुजों की बिनय को पाबन्दी आदि गृह सरस ह। वहाँ पालि पिटक ही पडा जाता है, साव मिसुजों न पालि में सिगा भी होमा पर उनके बारे में मामूम नहीं ही सरा। वही बात मुझन् क ठाई परबादियों के बारे में है।

२ कम्बोज में घेरवाव

(१) बाह्यग बर्षी—इसा की मातर्षी सदी तक कम्बोज में बीजों की नहीं शास्त्रों की प्रबानता थी। अंकोरवात तथा अंकोरपोम की इमारतें भी इमी बात का बनमाती हैं। कम्बोज के हजारों संसृठ गिसामस भी इमी की पुष्पि करते हैं। यजोवर्मा (८५६-९०६ ई.) बाह्यगों का अनुयायी मामूम होता है पर अंकोरपोम प्रासाद के बिसकुम पाम उसने पीछे बिहार की प्रगति नुसपाई।^१

पालि लौक में ही संकर की स्तुति करक वे तीसरे में बरते हैं—

त्रिमने स्वयं अरगत करत इम भव के बरपन से मुक्ति क सावनों की तीनों मोर की मनसाया त्रिमने निर्वागकर को प्रगन बिपा उमी बन्दबरा करगाहृदय बर की मनगार करगा हूँ।”

उमी पग में बाग निगा है—

ध्यानादि और उपचारण क्रम को सीस उतम वर्ष की कामना से उपसम्परा पान की प्रार्थना की ।

सास्ता के परिनिर्वास से १६६८ वर्ष बाद (१४२४ ई०) एक संवत् ७८६ में महाम्बे वर्ष में द्वितीय आवाह युक्त एक द्वादसी शुनिवार, ठेरस तिथि ज्येष्ठा नक्षत्र के योग में विद्यमान सिंहापत्र (पठ पराक्रमबाहु) द्वाय कम्पाणी नामक नगर में बने बेड़े में आरौहण कर 'कम्मवाचाचार्य' 'बनरत्न महास्वामी' और उपाध्याय 'बम्मचारी' के साथ बीस गजवाने संघ द्वारा उपसम्पादित किये गए ।

वे स्वविर उपसम्पन्न हो वस्तुभातु 'समन्तकूट' के परबिह्व और सोलह महास्वामी की बन्धना कर आचार्य-उपाध्याय से अनुज्ञा ले करण सौं आय । कुमिल के घय से वे सिंहा डीप में चार ही मास रह । लीटते समय उन्होंने उपाध्याय के कार्य के लिए महाबिक्रमबाहु और उत्तम प्रभ की स्वविरा एवं बन्धना के लिए बद्धभातु माँपी । उनमें बिक्रमबाहु मिस्र होने से १३ वर्ष के और महाउत्तमप्रभ १० वर्ष के थे । अहाज में आते समय बद्ध स्वविर और सोम स्वविर से मेट हो गयी । उन दोनों महाम्बविरा को भी समुद्र में ही उपसम्पन्न कर अपोम्पापुर में अपोम्पाधिपति 'परमराज' की गली के पुष हीलविन्दुदि महास्वविर और सुदर्पकाविर महास्वविर का सम्पादित किया । उक्त बाद 'मरुजनात्म' में पत्रुष वहाँ 'बुद्धमागर' स्वविर को उपसम्पादित कर पीछे मुनोप्या में छ वर्ष रहे ।"

तीसरा अध्याय

३ कम्बोज और साव में घेरबाव तथा पालि

१ साव में घेरबाव

साव के लोग भी यार्ई जाति के ही हैं। इरिपुञ्जय के स्वामी सौम्यो न सब बगबाद स्वीकार किया, तब जावों का भी घेरबावी होता स्वामाधिक वा। यार्ईवीं का यह जातीय धर्म होने से युमन् तार्ई भी बरबावी है यद्यपि उनके पईस का बीन महापानी है। बगबाद की सरलता और निछुबों की बिनय की पाबन्दी आदि गुण सरल है। वहाँ पालि पिटक ही पढ़ा जाता है, साव निछुबों न पालि में सिगा भी होगा पर उनके बारे में मामूम नहीं हो सदा। वही बात युमन् के तार्ई बरबादियों के बारे में है।

२ कम्बोज में घेरबाव

(१) बाह्यम धर्मो—ईसा की मातकी मरी तब कम्बोज में बीठों की मही बाह्यमों की प्रमानना थी। अंकोरवात तथा अंकोरपोम की इमारतों भी इनी बान का बनमाठी है। कम्बोज के इबारत मसूख विनामप भी इनी की पुष्टि करते हैं। मयाबमों (८२६-६०६ ई०) बाह्यमों का अनुयायी मानूम होता है पर अंकोरपोम प्रासाद के बिलकुल पाम उमने बीठ विहार की प्रगति मुद्बार्ई।^१

पत्त दपोर में ही मंकर की म्नुति बान के बीमरे में बान है—

“बिमने म्बपे अरण बरके इम म्ब के बग्बन म मुक्ति क मापनों को तीवरा मोर की बममाया विगत निर्जानवर को प्रदान किया उनी बन्दबग्ग बरमाहुरय बड को नमगार करता है।”

—नी नग में बाम सिगा है—

“राजापिण्ड कम्बुज भूमिपति राजा यशोधराने न बीडो के हित के लिए इस सौपतापम को बनवाया ।

इससे ज्ञात होता है कि ब्राह्मणों के एकान्त प्रेमी कम्बुज राजवंश ने बीडों के प्रभाव को स्वीकार किया ।

इस अभिलेख में कुशाभ्यस द्वारा सम्मान जाति के नियम बताये गये हैं, जो बहुत कुछ शैवायनों (शैव मठों) की भाँति ही हैं—

विद्या-सम्पन्न प्राचार्य जिसने बीड शास्त्र और व्याकरण पढ़े हैं, उसका सम्मान ब्राह्मण से कुछ कम होना चाहिए ।

इससे ज्ञात होता है कि कम्बोज देश में ब्राह्मणों का सम्मान बीडों से अधिक था ।

(२) बीड प्रसार—महापरक्रमबाहु (११६४ २७ ई०) ने कम्बुज राजा के पास उपाहन के साथ एक राजकन्या भी भेजी थी । बर्मा के राजा ने उसे पकड़ भेजवाया । उसके प्रतिघोष में परक्रम ने नौ धार्मिक अभियान भेजकर बर्मा के कुमुनी बन्धरगाह की तुटवाया । कम्बोजराज जयवर्मा सप्तम (११८२-१२०२) न पैगू पर अपनी विजयपताका चढ़ाकर बहला गया । जयवर्मा सप्तम के राज्य की सीमा चीन से बंगाल की खाड़ी तक थी । जयवर्मा के मरने के बाद परम शासन सिकता गया जिससे ज्ञात होता है कि वह बीड था—कट्टर नहीं क्योंकि ब्राह्मणों का प्रभाव अभी कम नहीं हुआ था । उनके एक शिलालेख में प्राणिमात्र के शरण बुद्ध पूजित है फिर बोधिचार्य पूजित है जिससे संसार का धर्म स्पष्ट हाँठा है, उस संघ का धर्मन है फिर कम्बुज के लक्ष्मी बचतार मोक्षेश्वर की बन्धना है । इससे पता लगता है कि उसका धारण स्वयं पालि बीड धर्म नहीं महायान बीड धर्म था । इसी संघ में भाग रहा गया है—“जसने जग्या जाकर मुजसस में बर्हा क राजा को पकड़ कर फिर ब्यापम उसे राज्य देकर छोड़ दिया । उसके इन गौरवपूर्ण कृत्य की दुररे राजाओं ने मुना. राजा ने अपने गृह के परिवार को राजवंशिक की भाँति मैनापति की उपाधि दी” ।

जयवर्मा सप्तम (११८२-१२०२ ई०) ने 'राजबिहार' नामक नगर बनाकर उसे "मुनीन्द्रमाठा" (प्रजापारमिता) की सेवा के लिए दान में दे दिया। प्रजापारमिता को अपनी माँ की मूर्ति के रूप में उसने बनावाया था। प्रजापारमिता की मूर्ति से प्रकट है, कि वह महापान का मानता था, जो उस समय नामग्या और विक्रममिता में मान्य था। राजा और भूमिपतिओं ने ३१४० पाँच मन्दिर को दिये थे जिनमें सब मिलाकर १२,६६० व्यक्ति एकत्र थे। वहाँ पर ६६ ६२५ स्त्री-मुख्य देवपरिचारक थे। बर्मी और चम्पा (के बर्मी) सब मिलाकर ७६ ३६५ व्यक्ति होते थे। चीनी इतिहास में भी जयवर्मा सप्तम का 'पयान' का बलिभर अपने राज्य में मिमाने का उल्लेख है।

राजा ने भाटी परिमाण में चीनी-मौजा और हीरे बालि इस मन्दिर को भेंट-स्वरूप दिया था। वहाँ पर १७० विद्यार्थी अपने अध्यापकों के साथ रहते थे। भिन्न-भिन्न प्राणों में इनमें ११७ भारतीयशास्त्रार्थ और ६१५ भैरवशास्त्रार्थ स्थापित की थी जिनमें एक में ८३८ गाँव लग थे।

जयवर्मा सप्तम के परधान्दुर्जवर्मा द्वितीय फिर जयवर्मा सप्तम फिर श्रीवर्मा और श्री इन्द्रजयवर्मा यही के अधिकांश हुए। इन शासन-कालों में कम्बोज देश पतनान्मुख हो गया। चीन यात्रीओं के हाथ में था। बुद्धभेदान ने पहल चम्पा लिया फिर वहाँ से हुन बन्धु का कण्ठ बनाने के उद्देश्य से १२६६ ई० में वहाँ गया। इसमें वह मठ न हुआ पर कम्बोज के लोगों के बारे में उस हुन न बहुत-सी आश्चर्य बातें मिली हैं। जियुओं के बारे में वह कहता है—

"वे जाना गिर मूंडान हैं चीन का यह पहल है बाहिरा कया मंगा गये हैं वे नाम-मादनी माने हैं, पर अब नहीं पीते। जिन पुस्तकों का वे पाठ करत हैं उनकी संख्या बहुत है और वे तानत्र पर निर्मा गयी हैं। इन विष्णुओं के कुछ के पास चीन के ब्रह्मानी कालविया और चीन के बुध्दान छाने हुए हैं। यन्वीर जनों पर राजा इनसे सपाठ मता है। वहाँ बौद्ध भिक्षुविया नहीं है।"

इससे यह पता चलता है कि ठेरुषीं सभी में वहाँ पर महायान-बज्रयान का प्रभाव कम होकर पाणि बौद्ध धर्म का प्रभाव बढ़ चुका था। मीठ मझमी का बहान तथा मघ से परहम इसी कारणवश था।

वह फिर लिखता है—

“धैव अपने जुड़ों की साथ या एकदर कपड़ों से बाँधते हैं। उनके मन्दिर बौद्ध मन्दिरों से छोटे होते हैं क्योंकि ठाव् (बाह्य) धर्म उठना समुद्र नहीं है जितना कि बौद्ध धर्म के बुरे के हाथ से भोजन नहीं पहन कपड़े और न खुले आम खाते हैं। गृहस्थों के लड़के पढ़ने के लिए शिक्षुवाँ के पास जाते हैं और बड़े होने पर गृहस्थ बनने के लिए (घर) मीठ जाते हैं। लेश साधारणतया कामे मृगच्छान पर लिखा जाता है।”

कम्बोज के हजारों सिमानेस संस्कृत में मघ-मघ रूप में प्राप्त है।

(१) कम्बुज भाषा और संस्कृत—भाज भी वहाँ बाह्य धर्म कम नहीं है पर धार्मिक लक्ष में पाणि का बाँधपाय है। स्मेर (कम्बोज) लिपि प्राचीन पस्तक तथा बालुचय लिपियों से उद्भूत है जिनसे बृहत्तर माण्ड तथा सिहल की मी लिपियाँ विकसित हुईं। भाज भी कम्बोज भाषा में संस्कृत धर्मों का प्रयोग प्राप्य है जिनका उच्चारण समझान अपने अनुस्य कर लिया है। उदाहरणस्वरूप संस्कृत का ‘दिवता’ मध्य सामान्य स्मेर भाषा में ‘तेवदा’ और साहित्यिक स्मेर भाषा में ‘दिवदा’ हो जाता है। इसी प्रकार से अन्य धर्म भी हैं।

(४) महायान से हीनयान—कम्बुज में बौद्ध धर्म बज्रयान तक नहीं पहुँचा था। वह महायान तक ही जा पाया था। बज्रयान में पहुँचने पर उसे चार्ल जावा मुबर्चडीग (गुमावा) बादि की ही भाँति नष्ट होना पड़ना। लनिन हीनयान (पाणि पिटर) ने जाकर उनकी रक्षा कर सी। स्वाय (बाई) उन परिवर्तन में महायान हुआ वहाँ बरबाद पहुँचे ही पहुँच चुरा था। बाई ‘मुनेदया को कम्बोज में छोड़ चुके थे। गिहल से लाकर पाणि बौद्ध धर्म को पहले स्वामियाँ न रखापित किया।

धीमा अध्याय

५ आधुनिक भारत में पालि

भारत ने तो चौदहवीं सदी के प्रारम्भ में ही बौद्ध धर्म से छुटी या की सी परन्तु उस पर बौद्ध धर्म ने जो अमिट सांस्कृतिक प्रभाव छोड़ा था उसके कारण उसे फिर उस बुझाना पड़ा। इसके निमित्त स्वरूप कितने ही व्यक्ति हैं, जिनमें पहला नाम अन्यायिक धर्मपात का था। जिन्होंने अपनी मातृभूमि तिहुस को छोड़कर अपना शेष सम्पूर्ण जीवन भारत में इन कार्य के लिए बिना और अन्त में वही 'सारनाथ' में इस घण्टी-कमेन्टर को १९३३ ई० में छोड़ा। इसके बाद डाक्टर बम्बेकर ने भातों की संख्या में भारत-भूतों को विराम की धारण में सड़ा कर दिया। आज जो बौद्ध धर्म भारत को अपनी ओर लौंच सका है, वह पालि बौद्ध धर्म ही है।

पालि-पिटक-ग्रन्थों का भारतीय नापाजों में विरोधकर बंधना और हिन्दी में अनुवाद प्रस्तुत किया गया। बंधना में 'कटणीय' नामे पहले से ही बौद्ध धर्म पर बंधना में संख्या में उतने ग्रन्थों का अनुवाद न ही सका जितना हिन्दी में आज तक सम्भव हो पाया है। 'दीर्घनिवाय' (राहुत कारण्य) 'मज्झिमनिकाय' (राहुत) 'अपुत्तनिकाय' (आरण्य धर्मपीठ) 'अङ्गुत्तरनिकाय' (आरम्भ कौसल्यायन) 'विमवपिटक' (राहुत) एवं 'जातक' (आरम्भ कौसल्यायन) आदि के अनुवाद हिन्दी में हो चुके हैं। 'अभिधम्मपिटक' के मूल ग्रन्थों का अनुवाद कारणवासे तथा पढ़नेवालों दोनों ही के लिए क्या-ना है। अतः इस ओर प्रवृत्ति नहीं हो रही है परन्तु 'अभिधम्मपिटक' के सारभूत ग्रन्थ 'अभिधम्मपसङ्गह' (आचार्य अनुसूय हृत) का हिन्दी अनुवाद प्रथम आरम्भ कौसल्यायन ने कर दिया है।

भारत में आज भागी नर-नापी बौद्ध-धर्म में दीर्घत रूप है और हो रहे हैं। इसके तीन-चारों की बाकी पालि में उल्लिखित हीनी है। भारत का

ही मूल पाणि साहित्य सिंहल बर्मो कम्बोज तथा स्याम की लिपियों में बना था । रोमन लिपि में भी यह 'पाणि टेक्स्ट सोसायटी' की रूपा से प्रकाशित हो गया था । परन्तु भारत की किसी भी लिपि में उसका न होना सज्जा की बात थी । इसमें ही मधु नातन्दा ने इस कार्य को प्रारम्भ किया और कुछ ही वर्षों में विद्युत् गति से नागरी में सम्पूर्ण लिपिद्वय-प्रकाशन कार्य को मित्तु जगदीश काश्यप तथा उनकी विद्यमण्डली ने सम्पन्न कर डाला । इस महत्त्वपूर्ण प्रकाशन का श्रेय मित्तु जगदीश काश्यप को है ।

काश्यप जी तथा पं० लक्ष्मणशस्त्रि चट्टोपाध्याय के निर्देशन में बाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय भी अट्टकपात्रों के नागरी संस्करण का प्रकाशन प्रारम्भ करनेवाला है और इस सम्बन्ध में सर्वप्रथम 'आतकट्टकपा' को लिया गया है ।

पाणि साहित्य का बृहद इतिहास हिन्दी में डाक्टर भरतसिंह जगन्नाथ द्वारा प्रस्तुत हो चुका है । वर्तमान ग्रन्थ को ३३० पृष्ठों में लिखना या इसलिये बहुत विस्तार नहीं किया जा सका । पाणि भाषा-शास्त्र के सौन्दर्य को व्यक्त करने के लिए 'पाणि काव्यपाठ' लिख चुका हूँ जो प्रती ही 'साहित्य अकादमी' से प्रकाशित होने जा रही है ।

चौथा अध्याय

४ आधुनिक भारत में पाति

भारत ने तो बीसहवीं सदी के प्रारम्भ में ही बौद्ध धर्म से छुटी या भीषी परन्तु उस पर बौद्ध धर्म ने जो अमिट सांस्कृतिक प्रभाव छोड़ा था उसके कारण उसे फिर उसे बुलाना पड़ा। इसके निमित्त स्वल्प विद्वान् ही व्यक्ति हैं, जिनमें पहला नाम अनकारिक धर्मपास का आता है। जिन्होंने अपनी मातृभूमि सिन्धु की छोड़कर अपना शेष सम्पूर्ण जीवन भारत में इस कार्य के लिए दिया और अन्त में बड़ी 'सारमा' में इस धर्म-कमेन्बर को १९३३ ई० में छोड़ा। इसके बाद डाक्टर अम्बेडकर ने लोगों की संख्या में भारत-भूजों को धर्म की धरम में बढ़ा कर दिया। आज जो बौद्ध धर्म भारत को अपनी ओर खींच सका है, वह पाति बौद्ध धर्म ही है।

पाति-पिटक-ग्रन्थों का भारतीय भाषाओं में विद्येकर बंगला और हिन्दी में अनुवाद प्रस्तुत किया गया। बंगाल में 'बटमा' नामे पहले से ही बौद्ध धर्म पर बंगला में संख्या में उतने ग्रन्थों का अनुवाद न हो सका जितना हिन्दी में आज तक सम्पन्न हो पाया है। 'दीपनिकाय' (राहुत काश्यप), 'मज्झिमनिकाय' (राहुत), 'संयुतनिकाय' (काश्यप धर्मरक्षित), 'अङ्गुलनिकाय' (आनन्द कौत्सस्यामन) 'विनयपिटक' (राहुत) एवं 'जातक' (आनन्द कौत्सस्यामन) आदि के अनुवाद हिन्दी में ही चुके हैं। 'अभिधम्मपिटक' के मूल ग्रन्थों का अनुवाद करनेवाले तथा पढ़नेवालों दोनों ही के लिए कष्ट-दा है। अतः इस ओर प्रवृत्ति नहीं हो रही है परन्तु 'अभिधम्मपिटक' के सारभूत ग्रन्थ 'अभिधम्मत्वग्रह' (आचार्य अनुसूइठ) का हिन्दी अनुवाद अन्त आनन्द कौत्सस्यामन ने कर दिया है।

भारत में आज लोगों में नर-नारी बौद्ध-धर्म में दीक्षित हुए हैं और हो रहे हैं। इनके धीम-धारण की बाधी पाति में उच्चरित होती है। भारत का

ही मुस पाणि साहित्य विद्वत् वर्गों कम्बोज, तथा स्याम की सिपियों में प्रकाशित हो गया था। रोमन सिपि में भी यह 'पाणि टेक्स्ट सोसायटी' की कृपा से प्रकाशित हो गया था। परन्तु भारत की हिन्दी भी सिपि में उसका न होना लज्जा की बात थी। हाल में ही नव नामन्वा ने इस कार्य को प्रारम्भ किया और कुछ ही वर्षों में विद्युत् यन्त्र से नागरी में सम्पूर्ण सिपिट्क-प्रकाशन कार्य को निरुपवर्धीय काव्यय तथा उनकी सिप्यमन्वली ने सम्पन्न कर डाला। इस महत्त्वपूर्ण प्रकाशन का श्रेय निरुपवर्धीय काव्यय को है।

काव्यय की तथा पं० ज्योत्सना चट्टोपाध्याय के निबन्धन में भारतभसेय संसृष्ट विस्वविद्यालय भी ऋद्धकपायों के नागरी संस्करण का प्रकाशन प्रारम्भ करनेवाला है और इस सम्बन्ध में सर्वप्रथम 'जातकट्टकपा' को तिया गया है।

पाणि साहित्य का बृहत् इतिहास हिन्दी में डाक्टर मर्यासिंह उपाध्याय द्वारा प्रस्तुत हो चुका है। वर्तमान ग्रन्थ को २५० पृष्ठों में लिखना या इसलिए बहुत विस्तार नहीं किया जा सका। पाणि-भाषा-काव्य के सौन्दर्य को व्यक्त करने के लिए 'पाणि काव्यपाठ' लिख चुका हूँ, जो अभी ही 'साहित्य अकादमी' से प्रकाशित होने जा रही है।